साहित्य-सुबोध

अर्थात्

अपठित हिन्दी तथा रचना प्रकाश

रचयिता

आदित्य प्रसाद सिंह 'पूषन'

प्रकाशक

नन्दकिशोर ऐण्ड ब्रदर्स

चौक, बनारस ।

१९५१] [मूल्य १।।।)

अर्थात्

अपठित हिन्दी तथा रचना प्रकाश

संशोधित, परिवर्त्तित एवं परिवर्द्धित

[[illegible] हाईस्कूल के छात्रों और छात्राओं के लाभ के लिए]

रचयिता

साहित्यभूषण

आदित्य प्रसाद सिंह 'पूषन' 'विशारद'

प्रधानाध्यापक—जूनियर हाईस्कूल, बनारस ।

प्रकाशक

नन्दकिशोर एण्ड ब्रदर्स

चौक, बनारस ।

तृतीय संस्करण २००० } १९५१ { मूल्य १।।।)

मुद्रक—मेवालाल गुप्त
बम्बई प्रिंटिंग काटेज बाँसफाटक बनारस ।

तृतीय संस्करण की भूमिका

प्रसन्नता की बात है कि आज 'साहित्य-सुबोध' का तृतीय संस्करण परिवर्त्तित एवं परिवर्द्धित रूप में पाठकों की सेवा में प्रस्तुत किया जा रहा है। यद्यपि बहुत पहले इसका तृतीय संस्करण प्रकाशित हो जाना चाहिये था किन्तु कुछ अनिवार्य कारण ऐसे आपड़े कि विलम्ब होगया।

प्रस्तुत संस्करण में मैंने पर्यायवाची शब्दों के प्रयोग, पद्य और गद्य के कुछ अभ्यासों को छोड़ दिया है और निबन्ध विषयक आवश्यक बातों को जोड़ दिया है। पर्यायवाची शब्दों के सूक्ष्म अर्थ-भेद, शब्द के बदले वाक्य, वाक्य-रचना की रीति, विरामादि चिन्हों के प्रयोग की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट किया गया है। निबन्ध के भेद, उनके ढाँचे बना लेना, उनकी पूर्ति करना, अभ्यास के लिये निबन्ध के कुछ विषयों का समावेश किया गया है। निजी, सरकारी, व्यावसायिक पत्रों के लिखने के नमूने दिये गये हैं। सारांश यह कि जूनियर हाईस्कूल के छात्रों एवं छात्राओं के लिये 'अपठित और रचना' में जिन-जिन के जानने की आवश्यकता है, उन सब बातों का समावेश करके पुस्तक को सर्वोपयोगी बनाने का प्रयत्न किया गया है।

पुस्तक की कलेवर वृद्धि के भय से मैं लब्धप्रतिष्ठ एवं प्रसिद्ध लेखकों की रचना उद्धृत न कर सका, इसका मुझे दुःख है। अगले संस्करण में—यदि अवसर मिला तो—इस अभाव की पूर्ति का प्रयत्न किया जायगा।

आशा है यह पुस्तक पाठकों के हित-साधनों में सहायक होगी।

विनीत

कच्चाबाबा का धाम
१८-८-४६

आदित्य प्रसाद सिंह 'पूषन'



वक्तव्य

यह पुस्तक हिंदी तथा अंग्रेजी स्कूलों की उच्च श्रेणी के विद्यार्थियों के लिए लिखी गई है। इसमें साहित्य-विषयक ज्ञान-संपादन करने एवं काव्य का सौंदर्य समझने के लिए जिन जिन बातों की आवश्यकता पड़ती है, लगभग उन सब बातों के समावेश करने का प्रयत्न किया गया है। काव्य और साहित्य का अंतर, गद्य-पद्य में भेद, ध्वनि, रस, अलंकार तथा छंद विषयक आवश्यक तथा उपयोगी बातें उदाहरणों द्वारा समझाई गई हैं। आशय तथा प्रयोग सहित मुहाविरों और लोकोक्तियों के अतिरिक्त अंतर्कथायें तथा पर्यायवाची शब्द इस ढंग से लिखे गये हैं जिन्हें लड़के सरलतापूर्वक स्मरण रख सकते हैं। तुलनात्मक दृष्टि से साहित्याध्ययन करने के लिए 'एक भाव विषयक भिन्न-भिन्न कवियों की उक्तियाँ, भी संकलित की गई हैं। किसी पद्य अथवा गद्य-भाग का अनुवाद, अर्थ, भावार्थ कैसे लिखना चाहिए, उदाहरणों द्वारा बतलाया गया है और अभ्यास के लिए प्रतिष्ठित कवियों की खड़ी बोली तथा व्रज-भाषा की कवितायें एवं प्रसिद्ध लेखकों की रचनाओं से गद्य के मनोहर अंश उद्धृत कर दिये गये हैं। इनमें बहुत से अभ्यास ऐसे भी हैं जो हिन्दुस्तानी मिडिल परीक्षाओं में आ चुके हैं। प्रत्येक अभ्यास के नीचे साहित्यिक तथा व्याकरण संबंधी प्रश्न भी किये गये हैं जिससे बालकों में विषय को ध्यानपूर्वक पढ़ने और स्पष्ट उत्तर देने की योग्यता उत्पन्न हो। कठिन शब्दों तथा शब्द-समूहों के अर्थ लिखने का भी यत्न किया गया है जिससे बालकों को

कवि अथवा लेखक का भाव समझने में बड़ी सहायता मिल सकती है। अन्त में कुछ और उपयोगी बातों की सूची देकर पुस्तक को सर्वांग उपयोगी बनाने का उद्योग किया गया है। इस प्रयत्न में मुझे कहाँ तक सफलता मिली है, इसका निर्णय उदार पाठकगण स्वयं कर सकते हैं।

इस संकलन में जिन-जिन ग्रंथों से सहायता ली गई है उनके रचयिताओं के प्रति मैं हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

श्रीयुत 'साहित्य-रत्न' पंडित विश्वनाथप्रसादजी मिश्र एम० ए० ने इस पुस्तक के पहले और दूसरे अध्याय को देखकर उनमें उचित सुधार करने का कष्ट उठाया है। एतदर्थ मैं कृतज्ञ हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं प्रिय मित्र 'विज्ञान-रत्न' ठा० बदरी नारायण सिंह जी को भी धन्यवाद देना भूल नहीं सकता क्योंकि आपने मुझे पहलेपहल इस प्रकार की पुस्तक प्रस्तुत करने की सुसम्मति दी है।

यदि इस पुस्तक से विद्यार्थियों का थोड़ा भी उपकार हुआ तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूँगा।

काशी
व्यासपूजा, १९९२

विनीत—
आदित्य प्रसाद सिंह 'भूषन'

विषय-सूची

साहित्य-सुबोध

अर्थात्

'अपठित हिंदी तथा रचना प्रकाश'

पहला अध्याय

(१)—काव्य और साहित्य

काव्य और साहित्य में क्या संबंध है, यह निश्चय करने के पूर्व उनके लक्षणों पर विचार करना परमावश्यक है।

हमारे आचार्यों ने 'काव्य' की परिभाषा भिन्न-भिन्न प्रकार की लिखी है। पण्डितराज जगन्नाथ ने लिखा है कि— "रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्" अर्थात् रमणीय अर्थ के प्रतिपादन करनेवाले 'शब्द' को काव्य कहते हैं। साहित्य-दर्पण के रचयिता कविराज विश्वनाथ कहते हैं कि 'रसात्मकं वाक्यं काव्यम्" अर्थात् हृदय में अलौकिक आनंद देनेवाले 'वाक्य' को 'काव्य' कहते हैं। पंडित अंबिकादत्त व्यास शब्द और वाक्य के चमत्कार को काव्य न मानकर यह बतलाते हैं कि "लोकोत्तरानंददाता प्रबंधः काव्यनामभाक्" अर्थात् लोकोत्तर आनंद देनेवाली रचनाही 'काव्य' है। कोई चाहे जिस प्रकार की परिभाषा कहे परंतु तात्पर्य सबका एक है। 'काव्य' उस पांडित्यपूर्ण रचना को कहते हैं जो अंतस्तलको स्पर्श कर चित्त में अलौकिक आनंद का संचार करती है। चित्त को आह्लादित करना 'काव्य' का प्रधान गुण है। जिस रचना को पढ़कर हृदय की कली खिल न जाय, हृत्तंत्री झनक न उठे, हृदय प्रभावान्वित न हो जाय, उसे 'काव्य' नहीं कह सकते।

संसार में मनुष्य जो कुछ देखता-सुनता है, इसके द्वारा जो अनुभव वह प्राप्त करता है अथवा उसके हृदय में जो भाव उठते हैं, वे सब अंत में 'काव्य' के रूप में प्रगट होते हैं। यही कारण है कि मानव-जीवन और प्रकृति से, काव्य का घनिष्ठ संबंध है।

मनुष्य स्वभावतः समाज-प्रिय जीव है। उसे समाज से पृथक् रहना पसंद नहीं। वह अपने समाज के लोगों के कामों, विचारों तथा भावों को जानने और अपने विचार-भावों को औरों पर प्रगट करने में एक प्रकार का आनंदानुभव करता है। उसकी यही प्रवृत्ति काव्य का मूल कारण है। जिस काव्य में मानव-जीवन की सरस एवं हृदयग्राही व्याख्या तथा लोकोत्तर आनंद-दायकता जितनी ही अधिक पाई जाती है वह उतनाही उत्तम समझा जाता है।

गद्य-पद्य-मय ग्रंथ और नाटक उपन्यास आख्यायिकायें आदि सभी पुस्तकें काव्य के अंतर्गत आजाती हैं। जिन पुस्तकों में काव्य के लक्षण, उसके भेद (रस-भाव, अलंकार) गुण-दोष, छंद आदि का विवेचन रहता है वे 'साहित्य' के अन्तर्गत हैं। इसे यों भी कह सकते हैं कि ऐसे ग्रंथ जिनमें लक्षण या रीति पर विचार किया गया है उन्हें 'साहित्य' कहते हैं और लक्षणों को स्पष्ट करने के लिए जिनमें से उदाहरण दिये गये हैं उन्हें 'काव्य'। परन्तु अब 'साहित्य' का अर्थ अधिक व्यापक रूप में किया जाता है। सब विषयों के ग्रंथ-समुदाय को 'साहित्य' कहते हैं। इस अर्थ के अनुसार काव्य, साहित्य का एक अङ्ग है।

भाषा अथवा विषय के अनुसार साहित्य शब्द का व्यवहार सीमित रूप में भी होता है। जब यह कहा जाये

कि "वे हिंदी-साहित्य के पंडित हैं" तब यह अर्थ समझा जाता है कि उन्होंने उदाहरण और रीति ग्रंथों का भली-भाँति अध्ययन किया है। इसी तरह 'तुलसी का साहित्य' कहने से तुलसीकृत सभी ग्रंथों का अर्थ बोध होता है। इस अर्थ के अनुसार 'काव्य' का वही स्थान हो जाता है जो साहित्य का है।

प्रश्न

(१) साहित्य और काव्य के लक्षण उदाहरण सहित लिखो।
(२) 'साहित्य' और 'काव्य' का संबंध दिखलाओ।

---

(२)—काव्य-भेद

रचना के अनुसार काव्य दो श्रेणियों में विभक्त किया गया है—(१) गद्य (२) पद्य।

गद्य-रचना सरल है क्योंकि यह प्रतिदिन की बोलचाल है। गद्य में ही संसार के सारे व्यवहार चलते हैं। हम गद्य द्वारा अपने मनोगत भाव स्पष्टता के साथ प्रकट करते हैं। इसमें वर्णों, मात्राओं एवं पद-विन्यास के नियमों का कोई बंधन नहीं रहता। वार्तालाप, कहानियाँ, वाद-विवाद, जीवनचरित, इतिहास, उपन्यास, यात्राओं के वर्णन, आख्यायिकायें, निबंधादि गद्य में सविस्तर लिखे जाते हैं। इसी से अब दिनों-दिन अधिकतर गद्य का प्रचार होता जा रहा है।

गद्य की अपेक्षा पद्य में प्रभावोत्पादक शक्ति अधिक है। पद्य द्वारा थोड़े समय तथा नपे तुले शब्दों में हृदयग्राही बातें

कही जा सकती हैं। पद्य कंठस्थ रखने में भी सुविधा होती है। पद्य में अक्षरों, मात्राओं एवं पदों का नियमबद्ध संगठन है, इससे पद्य-पठन में एक प्रकार का आनंद भी आता है। पद्य का संगीत से घना संबंध है। गान विद्या मनुष्यमात्र को प्रिय है। इसी से पद्य की ओर लोगों का ध्यान अधिक रहा है। गद्य में ये बातें नहीं हैं।

एक यह बात भी स्मरण रखने योग्य है कि कविता और पद्य समान अर्थ-बोधक शब्द नहीं हैं। सब पद्य, कविता कहलाने के अधिकारी नहीं हैं। जिसमें काव्य के गुण पाये जायँगे वही कविता नाम से शोभित होगा। हमारे आचार्यों ने कंठस्थ रखने की सुविधा के विचार से अलंकारादि के लक्षण पद्यबद्ध लिखे हैं परन्तु उन सब की गणना कविता में नहीं की जाती। वे केवल पद्य हैं।

काव्य चाहे गद्य में हो या पद्य में, उसमें चमत्कार-विशेष का होना परमावश्यक है। यह चमत्कार तीन प्रकार से आता है :—

(१) ध्वनि से, (२) रस से, (३) अलंकार से।

प्रश्न

(१) काव्य कितने प्रकार के होते हैं।

(२) 'गद्य' का प्रचार क्यों अधिक होता जाता है ?

(३) 'पद्य' में क्या विशेषतायें हैं ?

(४) 'कविता' और 'पद्य' का अन्तर समझाओ।

(३)—ध्वनि

मनुष्य अपने हृदय की बातों को जिस साधन द्वारा दूसरों पर बोलकर या लिखकर प्रकट करता है, उसे 'भाषा' कहते हैं। भाषा शब्दों से बनती हैं। जो कान से सुनाई दे, उसे 'शब्द' कहते हैं और शब्द सुनकर जो कुछ समझ में आये, उसे 'अर्थ' कहते हैं।

'शब्द' तीन प्रकार के होते हैं—(१) वाचक (२) लक्षक, (३) व्यंजक, इनसे तीन प्रकार के अर्थ निकलते हैं जिसे क्रमशः (१) वाच्यार्थ, (२) लक्ष्यार्थ, (३) व्यंग्यार्थ कहते हैं। इनका स्पष्टीकरण नीचे किया जाता है:—

(१) बैल एक पशु है। (२) उसके कान में फोड़ा हो गया। इन उदाहरणों में 'बैल' और 'कान' शब्दों के अर्थों पर विचार करो। 'बैल' से अर्थ सींग, पूँछ, खुर वाला 'पशु' ही लिया जायगा। 'कान' शरीर की एक इंद्रिय का नाम है, यही अर्थ समझा जायगा। अर्थात् 'बैल' और 'कान' शब्दों के जो अर्थ नियत हैं, उन्हीं का बोध होता है। ऐसे अर्थ को 'वाच्यार्थ' कहते हैं, नियत अर्थ को बतलाने वाला शब्द 'वाचक' कहलाता है। जिस शक्ति से वाच्यार्थ का ज्ञान होता है, उसे 'अभिधा शक्ति' कहते हैं। पदार्थों के परिचय के लिए जो शब्द प्रचलित हैं उन शब्दों से उन्हीं वस्तुओं का ज्ञान 'अभिधा शक्ति' से होता है।

(१) वह मनुष्य बैल है। (२) तुमने मेरे कहने पर कान न किया। (३) पुत्र बुढ़ापे की लकड़ी है।

इन वाक्यों में 'बैल', 'कान', 'लकड़ी' शब्द 'वाचक' नहीं हैं और न इनसे वाच्यार्थ ही लिया जायगा। मनुष्य कभी

चार पैर वाला पशु 'बैल' नहीं हो सकता। यहाँ 'बैल' शब्द से 'बैल के समान' अर्थ का बोध होता है। जैसे 'बैल' 'बे समझ' होता है और काम करना ही जानता है वैसे ही वह मनुष्य है। अतः यहाँ 'बैल' का अर्थ 'मूर्ख' हुआ। इसी प्रकार 'कान न किया' का अर्थ 'न सुना', 'लकड़ी' का अर्थ 'सहायक' बोध होता है ऐसे ही अर्थ को 'लक्ष्यार्थ' कहते हैं। जब शब्द के वाच्यार्थ को न लेकर तत्संबंधी अर्थ लिया जाता है तब उस अर्थ को 'लक्ष्यार्थ' कहते हैं। शब्द को 'लक्षक' और जिस शक्ति से 'लक्ष्यार्थ' जाना जाता है, उसे लक्षणा शक्ति कहते हैं।

(१) मैदान में खेलते हुए लड़के ने कहा कि "मास्टर साहब, अब सूर्यास्त हो गया"।

इस वाक्य में "अब सूर्यास्त हो गया" का भाव यह है कि 'खेल बंद करना चाहिए,' यहाँ न तो वाच्यार्थ लिया गया न लक्ष्यार्थ ही, अर्थ लिया गया।

(२) लक्ष्मण जी परशुराम जी से कहते हैं—

"कहेउ लखन मुनि शील तुम्हारा।
को नहिं जान विदित संसारा"॥

इसका वाच्यार्थ तो यह हुआ कि हे मुनि जी, आपके शील-स्वभाव को सारा संसार जानता है। परंतु लक्ष्मण के कहने का यथार्थ भाव यह है कि 'आप बड़े चिड़चिढ़े और क्रोधी हैं'। यहाँ भी वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थ को छोड़कर एक तीसरा ही अर्थ लिया गया है। ऐसे अर्थ को 'व्यंग्यार्थ' कहते हैं।

यदि शब्दों के वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थ दोनों में से कोई भी अर्थ न लेकर और ही कोई अर्थ लिया जाय तो वह 'व्यंग्यार्थ' कहलाता है। इस अर्थ के द्योतक शब्द को 'व्यंजक' और जिस शक्ति से व्यंग्यार्थ बोधित होता है उसे 'व्यंजनाशक्ति' कहते हैं।

(३) कह कपि धर्म-सीलता तोरी।
हमहुँ सुनी कृत-परतिय चोरी॥
धर्म-सीलता तव जग जागी।
पावा दरस हमहुँ बड़ भागी॥

अङ्गद, रावण से कह रहा है कि मैंने भी आपकी धर्म-शीलता सुनी है। आपने दूसरे की स्त्री को चुरा लिया है। आप ऐसे धर्मशील का दर्शन मुझे बड़े भाग्य से मिला। यहाँ शब्दों का वाच्यार्थ तो यही है, पर व्यंग्यार्थ यह है कि तुम धर्म को कुछ नहीं जानते, दूसरे की स्त्री चुराने के कारण तुम पापी हो गये। मेरा दुर्भाग्य था कि मैंने तुम्हें देखा। यह व्यंग्यार्थ, वाच्यार्थ से बढ़कर है। जब मुख्यार्थ से भिन्न जो एक विलक्षण अर्थ निकलता है और वह वाच्यार्थ से बढ़कर होता है तब उसे 'ध्वनि' कहते हैं। अच्छे-अच्छे कवियों और लेखकों की रचनाओं में विशेष आनन्द आने का कारण 'ध्वनि' ही है। जिस काव्य में वाच्यार्थ से व्यंग्यार्थ में अत्यधिक चमत्कार होता है वह काव्य उत्तम कहा जाता है।

प्रश्न

(१) 'शब्द' कितने प्रकार के होते हैं? (२) शब्द-शक्तियाँ कितनी हैं?

(३) नीचे लिखे हुए वाक्यों का लक्ष्यार्थ समझाओ।

(अ) मोतीलाल स्कूल की नाक है। (आ) गोपीलाल घर का चिराग है। (इ) पुत्र ही उसकी संपत्ति है।

(४) निम्नलिखित संदर्भों का व्यंग्यार्थ बताओ:—

(क) लड़ते-झगड़ते देखकर मानीटर ने कहा कि पंडित जी आ गये।

(ख) परशुराम जी लक्ष्मण से कहते हैं :—

मातु-पितहिं जनि सोच बस, करसि महीप-किशोर।
गर्भन के अर्भक-दलन, परशु मोर अति घोर॥

(ग) अंगद रावण से कहते हैं :—

सत्य कहसि दसकंठ सब, मोहिं न सुनि कछु कोह।
कोउ न हमरे कटक महँ, तुम सन लरत जो सोह॥

---

(४)—रस

'रस' क्या है ? व्यवहार में तो 'रस' कई अर्थों में प्रयुक्त होता है। जब हम कहते हैं—"एक गिलास रस बना लाओ" तब यहाँ 'रस' का अर्थ है 'मीठा जल'। जब कभी भोजन अरुचिकर प्रतीत होता है तब कहा जाता है—"आज भोजन का रस नहीं मिला"। यहाँ 'रस' से तात्पर्य है 'स्वाद' से। इसी तरह जब नारंगी खाने वाला कहता है—"आज ऐसी नारंगी मिली कि इसमें तनिक भी 'रस' नहीं है" तब यहाँ 'रस' का अर्थ उस द्रव वस्तु से लिया जाता है जो नारंगी में रहती है। परंतु जब कोई किसी गद्य या पद्य काव्य को पढ़कर या सुनकर कह देता

—"इस कवित्त से मानों 'रस' टपका पड़ता है", 'अमुक पद्य बहुत ही सरस है' तब यहाँ 'रस' से तात्पर्य 'अलौकिक आनंद' समझा जाता है।

इसलिए तुम कह सकते हो कि—

काव्य के पढ़ने या सुनने से जो अलौकिक आनंद हृदय में उत्पन्न होता है उसे साहित्य शास्त्र में 'रस' कहते हैं।

'रस' काव्य की आत्मा है और 'भाषा' उसका शरीर है। जैसे शरीर आत्म-रहित होने पर निर्जीव होता है, वैसे ही बिना रस का काव्य नीरस प्रतीत होता है। ऐसा काव्य, 'काव्य' कहलाने योग्य नहीं होता।

'रस' पैदा होने का कारण क्या है ? बात यह है कि जैसे राख के नीचे आग दबी रहती है और राख हटा देने पर वह धधक उठतीहै, वैसेही प्रत्येक मनुष्य के भीतर हर्ष, शोक आदि भाव गुप्त रूप से वर्त्तमान रहते हैं। जब कोई कारण विशेष उपस्थित होता है तब वे भाव जाग्रत हो जाते हैं, यही 'स्थायी भाव' कहलाते हैं। ये 'स्थायी भाव' नव हैं—(१) रति (प्रेम), (२) हास, (३) शोक, (४) क्रोध, (५) उत्साह, (६) भय, (७) घृणा, (८) आश्चर्य और (९) निर्वेद अर्थात् शान्ति।

इन्हीं स्थायी भावों से (१) शृंगार, (२) हास्य, (३) करुण, (४) रौद्र, (५) वीर, (६) भयानक, (७) बीभत्स, (८) अद्भुत और (९)शांत, ये नव रस उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक का वर्णन संक्षेप में उदाहरण सहित दिया जाता है।

(१) शृंगार-रस—जिस वर्णन से पुरुष-स्त्री का प्रेम प्रदर्शित हो, उसमें शृंगार रस माना गया है।

जैसे :—

दूलह श्रीरघुनाथ बने दुलही सिय सुन्दर मंदिर माहीं।
गावति गीत सबै मिलि सुन्दरि वेद जुवा जुरि विप्र पढ़ावहीं॥
राम को रूप निहारति जानकी कंकन के नग की परिछाहीं।
मानों सबै सुधि भूलि गई, कर टेकि रही पल टारति नाहीं॥

(२) हास्यरस—जिस वर्णन से ओठों पर मुस्कुराहट आ जाये अर्थात् हँसी का भाव जाग्रत हो।

जैसे :—

हँसि-हँसि भजैं देखि दूलह-दिगंबर* को,
पाहुनी जे आवैं हिमाचल के उछाह मैं।
कहै 'पद्माकर' सुकाहू सों कहै को कहा,
जोई जहाँ देखै, सो हँसोई वहाँ राह मैं॥
मगन भये ही हँसैं नगन महेस ठाढ़े,
और हँसैं वेऊ हँसि-हँसि के उमाह† मैं।
सीस पर गंगा हँसैं, भुजनि भुजंगा हँसैं,
हास ही को दंगा भयो नंगा के विवाह मैं॥

(३) करुणरस—जिस वर्णन से चित्त में शोक का भाव उदय हो, आँखों से आँसू टपक पड़े, वहाँ करुण रस होता है।

जैसे :—

राम चले बन प्रान न जाहीं। केहि सुख लागि रहत तन माहीं
यहि ते कवन व्यथा बलवाना। जो दुख पाइ तजहिं तन प्राना

---

* नंगा। † उत्साह, चाव।

(४) रौद्ररस—जिस वर्णन के पढ़ने या सुनने से क्रोध का भाव उत्पन्न हो, उसे रौद्र रस कहते हैं।

जैसे :—

(१) गर्भ के अर्भक* काटन को,
पटु-धार कुठार कराल है जाको।
सोई हौं बूझत राजसभा,
धनु कै दल्यौं, हौं दलि सौं वल ताको॥
लघु आनन उत्तर देत बड़ो,
लरि है मरि है करि है कछु साको†।
गोरो गरूर गुमान भरो,
कहु कौशिक, छोटो सो ढोटो‡ है काको॥

(२) अति रिस बोले वचन कठोरा।
कहु जड़ जनक धनुष केहि तोरा॥
सो बिलगाय विहाय समाजा।
न तु मारे जैहैं सब राजा॥

(५) वीररस—जिस वर्णन से मन में उत्साह-भाव उदय होता है वहाँ वीररस होता है।

उत्साह वह भाव है जो किसी महत्कार्य के संपन्न कराने में प्रवृत्त कराता है। दानवीर, धर्मवीर, दयावीर, शूरवीर ये ४ प्रकार के प्रधान वीर होते हैं। इन चारों का वर्णन 'भूषण' ने एकही कवित्त में किया है।

---

* बच्चा। † अपयश। ‡ लड़का।

(१) "दान समै द्विज देखि मेरुहू कुबेरहू की,
संपति लुटाइबे को हियो ललकत है। (दानवीरता)
साहि के सपूत सिव साहि के बदन पर,
सिव की कथान में सनेह झलकत है। (धर्मवीरता)
'भूषन' जहान हिंदुवान के उबारिबे को,
तुरकान मारिबे को वीर बलकत है।
(दया वीरता)
साहिन सों लरिबे की चरचा चलति आनि,
सरजा के दगन उछाह छलकत है॥"
(युद्धवीरता)

(२) दान और शूर वीरता—
मौजन सों 'मतिराम' कहै
कवि लोगन कों जिमि भोज बढ़ावै।
रोस किए रनमंडल में
खल-देह की खालनि भूमि मढ़ावै॥
रीझहु खीझ में राव सत्तासुत*
कीरति में अति जोति चढ़ावै॥
भाऊ दिवान गुरू सब भू पर
भूपन दान कृपान पढ़ावै॥

(६) भयानक रस—भय का भाव उत्पन्न करने वाला वर्णन।
जैसे :—
भरि भुवन घोर कठोर रव† रवि-वाजि तजि मारग चले।
चिक्करहिं दिग्गज, डोल महि अहि कोल कूरम कलमले॥

---

* महाराज शत्रुशाल के पुत्र भाऊसिंह बूँदी नरेश। † शब्द।

(७) बीभत्सरस—घृणा का भाव उत्पन्न करने वाला वर्णन।
जैसे :—

सिर पर बैठो काग आँख दोउ खात निकारत।
खींचत जीभहिं स्यार अतिहि आनंद उर धारत॥
गिद्ध जांघ कहँ खोदि-खोदि कै मांस उचारत।
स्वान आंगुरिन काटि-काटि कै खान विचारत॥
बहु चील नोचि लै जात तुच*, मोद मढ्यौ सबको हियो।
जनु ब्रह्म भोज जिजमान कोउ, आजु भिखारिन कहँ दियो॥

(८) अद्भुत रस—आश्चर्य जनक, कौतुहल वर्द्धक विषय के पढ़ने या सुनने से जो आश्चर्य का भाव उत्पन्न होता है उसमें 'अद्भुत रस' माना जाता है। जैसे :—

लीन्हों उखारि पहार विसाल
चल्यो तेहि काल विलंब न लायो।
मारुतनंदन मारुत को,
मनको, खगराज को वेग लजायो॥
तीखी तुरा† 'तुलसी' कहतो
पै हिए उपमा को समाउ न आयो।
मानों प्रतच्छ परब्बत की
नभ-लोक लसी कपि यों धुकि धायो॥

(९) शांतरस—जिस वर्णन से मन में शांति भाव का प्रादुर्भाव हो वहाँ शांतरस होता है। जैसे :—

बन-वितान, रवि-ससि-दिया, फल भो सलिल प्रवाह।
अवनि-सेज, पंखा-पवन, अब न कछू परवाह॥

---

* चमड़ा। † तेजचाल।

इन नव रसों के अतिरिक्त कुछ विद्वानों ने एक रस और माना है। उसे वात्सल्य रस कहते हैं। अपने पुत्र-कन्या, आदि छोटों पर जो स्नेह होता है उसे 'वात्सल्य' कहते हैं। महात्मा तुलसीदास तथा सूरदास ने इस रस का बड़ा हृदयग्राही वर्णन किया है। एक एक उदाहरण नीचे दिया जाता है :—

(१) कबहूँ ससि माँगत आरि* करैं,
कबहूँ प्रतिबिम्ब निहारि डरैं।
कबहूँ करताल बजाइकै नाचत,
मातु सबै मनमोद भरैं।
कबहूँ रिसिआइ कहैं हठिकै,
पुनि लेत सोई जेहि लागि अरैं।
अवधेस के बालक चारि सदा,
'तुलसी' मन-मंदिर में बिहरैं।

(२) हरि अपने आगे कछु गावत।
तनक तनक चरननसों नाचत मनहीं मनहि रिझावत॥
बाँह उँचाइ काजरी धौरी गैयन टेरि बुलावत।
कबहुँक राजा नंद बुलावत कबहुँक घर में आवत॥
माखन तनक आपने करलै तनक बदन में नावत।
कबहुँ चितै प्रतिबिम्ब खंब में लवनी† लिये खवावत॥
दुरि देखत जसुमति यन लीला हरष अनंद बढ़ावत।
'सूर' श्याम के बाल चरित ये नित देखत मन भावत॥

* हठ। † मक्खन।

प्रश्न

(१) 'रस' के व्यवहारिक और साहित्यिक अर्थ बताओ।
(२) साहित्य में रस तथा भाव कितने माने गये हैं।
(३) शृंगार, वीर और हास्य रस के लक्षण बताओ।
(४) निम्नलिखित में 'रस' पहचानो :—

(क) अनियारे* दीरघ नयन, किती न तरुनि समान।
वह चितवनि औरे कछु जेहि बस होत सुजान॥

(ख) राम से रूप, प्रताप दिनेस से, सोम से सील गनेस से माने।
हरिचंद से सांचे, बड़े विधि से, मघवा से महीप विषै सुख साने।
सुक से मुनि, सारद से बकता, चिर जीवन लोमस से अधिकाने।
ऐसे भये तौ कहा 'तुलसी' जुपै राजिवलोचन राम न जाने॥

(ग) मज्जहिं भूत पिसाच बैताला। केलि करिहिं जोगिनी कराला॥
काक कंक† धरि भुजा उड़ाही। एकते एक छीन धरि खाही॥

(घ) होहु सजग सब रोकहु घाटा। ठाटहु सबै मरन कर ठाटा॥
संमुख लोह भरत सन लेहूँ। जियत न सुरसरि उतरन देहूँ॥

---

(५)—अलंकार

अपनी वस्तुओं को सजाकर रखने की परिपाटी देखने में आती है। दूकानदार अपने सामानों को सजाकर रखते हैं, अध्यापक अपने कमरों की दीवारों को अनेक प्रकार के नक्शों, चित्रों और सिद्धांत-वाक्यों से सजाते हैं। सभाओं में रंग-

* नोकीले बड़े नेत्र। † कौवा, गिद्ध।

विरंगी झंडियों तथा फूल-पत्तियों से सभा-मंडप को सुसज्जित किया जाता है। यह क्यों ? इसीलिए न, कि इसमें सौंदर्य या चमत्कार आ जाये, लोगों को यह आकर्षित कर सके। बोल-चाल में भी मनुष्य अपनी बात को इस प्रकार बनाकर कहता है कि सुनने वाला मेरी ओर आकृष्ट हो जाये और जो कुछ मैं कह रहा हूँ वह उसके हृदयंगम हो जाये। जब मनुष्य बात-बात में नवीनता या चमत्कार लाने का प्रयत्न करता है तब सृष्टि के रत्न कवि या लेखक अपने वर्णन को चमत्कृत करने से कैसे वंचित रह सकते हैं ? इसीलिए कवि या लेखक ऐसी शैली काम में लाते हैं जिससे वर्णन में चमत्कार आ जाता है, इसी को रीति ग्रन्थों में 'अलंकार' कहा जाता है।

'अलंकार' का अर्थ 'भूषण' है। जिस प्रकार कंकण, हार, कंठादि भूषणों से किसी व्यक्ति की स्वाभाविक सुंदरता कई गुना बढ़ जाती है, वैसे ही अलंकारों के कारण काव्य की शोभा बढ़ जाती है।

'अलंकार' दो प्रकार के होते हैं—(१) शब्दालंकार, (२) अर्थालंकार। शब्दालंकार वे हैं जो शब्दों के आश्रित हैं अर्थात् जिन शब्दों के कारण उनमें चमत्कार आया है, उनको बदल कर दूसरे शब्द रख दें तो वह सौंदर्य जाता रहता है। जैसे—'बबुआ के विवाह में बहुत बड़ी बारात गई थी' इसमें बकार कई बार आकर एक प्रकार का चमत्कार पैदा करता है परंतु यदि शब्दों को बदल कर कहें—बाबू साहब के लड़के की शादी में बहुत भारी बारात गई थी। तो वह सौंदर्य नहीं रह जाता। इसी लिए 'शब्दालंकार' हुआ।

'अर्थालंकार' में अर्थ के कारण चमत्कार आता है। जिन शब्दों के कारण कोई रोचकता उत्पन्न होती है उन्हीं शब्दों को

परिवर्तित करके कोई दूसरा शब्द रख दें तो भी उसका चमत्कार बना रहता है। जैसे—'वह धनी है' साधारण वाक्य है, इसे यों कहें—'वह कुबेर सा धनी है', 'उसके पास इतना धन है कि उसकी समता कुबेर भी नहीं कर सकता', 'वह धन में कुबेर को भी लज्जित करता है' आदि। तो इन वाक्यों में पहले वाक्य की अपेक्षा विशेष चमत्कार आ जाता है, यही 'अर्थालङ्कार' है।

हर प्रकार के अलङ्कार कई प्रकार के होते हैं। उनमें मुख्य-मुख्य का वर्णन किया जायेगा।

(अ) शब्दालङ्कार

'शब्दालङ्कार' कई प्रकार के होते हैं, उनमें से (१) अनु-प्रास, (२) यमक, (३) श्लेष का वर्णन यहाँ दिया जाता है।

(१) अनुप्रास—(अनु = बार-बार + प्रास = रखना) जहाँ कोई अक्षर या कई अक्षर बार-बार आकर रोचकता उत्पन्न करे। ये अक्षर चाहे व्यञ्जन हों या स्वर, आदि में हों या अन्त में, वहाँ 'अनुप्रासालङ्कार' होता है। जैसे—

कानन कठिन भयङ्कर भारी।
घोर, घाम, हिम, वारि बयारी'

में 'कानन-कठिन' में 'क' 'भयङ्कर-भारी' में 'भ' 'घोर-घाम' में 'घ' 'बारि-बयारी' में 'ब' के आने से चमत्कार आ गया है। यह बात याद रहे कि अनुप्रास में जो स्वरों की समता कही गई है, उससे तात्पर्य व्यञ्जनों में लगने वाली मात्राओं से है। इसी प्रकार कर-कमल, कर-कञ्ज, पद-पङ्कज, कल-बल, कविता-कामिनी, कविता-कलाप, आमोद-प्रमोद, आगम-निगम

आनन्द-कन्द, ईश-अनीश, वृन्दावन-विहारी, जन-मन-रञ्जन, खल-दल-गञ्जन, बदरी-विनोद, पर्व-प्रकाश, आदि में अनुप्रास है।

(२) यमक— का अर्थ है 'दो'। जहाँ स्वरों या व्यञ्जनों का समूह क्रम से कई बार आये परन्तु अर्थ भिन्न-भिन्न हों वहाँ 'यमकालङ्कार' होता है।

जैसे -(१) भजन❀ कह्यौ ताते भज्यौ †,
भज्यौ न एको बार।
दूर भजन‡ जाते कह्यौ,
सो तैं भज्यौ$ गँवार ॥

(२) मूरति मधुर मनोहर देखी।
भयउ बिदेह¶ बिदेह|| बिसेखी ॥

(३) हरि×बोला हरि§ ने सुना.
हरि गये हरि के पास।
वह हरि तो हरि:: में गये,
वह हरि भये उदास॥

(३) श्लेष—जहाँ ऐसे शब्दों का प्रयोग हो जिनसे दो, तीन या अधिक अर्थ निकलते हों, वहाँ 'श्लेषालङ्कार' होता है। जैसेः—

१—पानी गए न ऊबरै, मोती, मानुस, चून।

यहाँ 'पानी' के तीन अर्थ हैं—(१) आब (चमक), (२) प्रतिष्ठा, (३) जल। अर्थात् चमक

❀ भजन करने को। † उससे दूर भागा। ‡ दूर भागने के लिए। $ भजन किया। ¶ राजा जनक। || शरीर रहित, ज्ञान शून्य। × मेढ़क। § साँप। :: पानी।

बिना मोती, प्रतिष्ठा (इज्जत) बिना मनुष्य और जल बिना 'चूना' व्यर्थ हो जाता है।

२—भले वंश को पुरुष सो निहुरै बहु धन पाय।
नवै धनुष सद्वंश को जेहि द्वै कोटि दिखाय॥

यहाँ 'सद्वंश' और 'द्वै कोटि' के दो-दो अर्थ हैं। सद्वंश के अर्थ हैं—'अच्छे बाँस और भले वंश के पुरुष' तथा 'द्वै कोटि' के अर्थ हैं—दोनों किनारे और दो करोड़ रुपये।

३—अङ्गद तुही बालिकर बालक।
उपजे 'बंस' अनल कुल घातक

यहाँ 'बंस' में श्लेष है— बाँस और कुल। इसी प्रकार और भी समझ लो।

(आ) अर्थालङ्कार

पहले बतलाया जा चुका है कि अर्थालङ्कार में अर्थ सम्बन्धी चमत्कार होता है। अब यहाँ पर उनके मुख्य-मुख्य भेदों का वर्णन संक्षेप में किया जाता है।

(१) उपमा

(१) उसका मुख सुन्दर है।
(२) उसका मुख चन्द्रमा सा सुन्दर है।

इन दोनों वाक्यों पर विचार करोगे तो तुम्हें मालूम होगा कि उसके मुख की तुलना चन्द्रमा से की गई है। 'चन्द्रमा' सुन्दर है अतः उसका मुख चन्द्रमा सा सुन्दर है, कहने

से उसमें पहले वाक्य की अपेक्षा अधिक चमत्कार आ जाता है। दो वस्तुओं में पृथकता रहते हुए भी जब किसी प्रकार की समता की जाती है तब उसे 'उपमालङ्कार' कहते हैं। अर्थालङ्कारों में 'उपमा' प्रधान अलङ्कार है। इस अलङ्कार के प्रयोग से एक तो अभीष्ट वस्तु का पूरा ज्ञान होता है दूसरे भाषा में चमत्कार तथा सौन्दर्य आ जाता है। इसी प्रकार 'कर कमल सा कोमल है', 'घोड़ा बिजली के समान तेज चलता है' 'हरिहर हरिश्चन्द्र जैसा सत्यवादी है' आदि वाक्यों में 'उपमालङ्कार है'।

ऊपर के वाक्यों पर विचार करने से तुम्हें मालूम होगा कि 'उपमालङ्कार' में ४ बातें होती हैं। (१) जिसका वर्णन होता है, उसे 'उपमेय' कहते हैं। (२) जिस वस्तु से उसकी समता की जाती है उसे 'उपमान' कहते हैं। (३) जिस बात की समानता होती है, उसे 'साधारण धर्म' और (४) जो शब्द समता प्रकट करते हैं, उन्हें 'वाचक' कहते हैं। सा, से सो, सम, समान, सरिस, सदृश, ज्यों, जैसे, जिमि इत्यादि शब्द 'वाचक' हैं। नीचे के उदाहरणों में इन चारों अङ्गों को चक्र में दिखलाया जाता है:—

(१) उसका मुख चन्द्र सा सुन्दर है।
(२) कर कमल समान कोमल है।
(३) पीपर पात सरिस मन डोला।
(४) राम-लखन-सीता सहित, सोहत परन निकेत।
जिमि वासव* बस अमरपुर, शची† जयन्त समेत॥

---

* इन्द्र। † इन्द्राणी।

नं०	उपमेय	उपमान	धर्म	वाचक
१.	मुख	चंद्र	सुंदर	सा
२.	कर	कमल	कोमल	समान
३.	मन	पीपर-पात	डोला	सरिस
४.	राम-लखन-सीता	इंद्र-जयंत-शची	सोहत	जिमि

ऊपर के वाक्यों में 'उपमा' के चारों अंग प्रकट हैं, ऐसी उपमा को 'पूर्णोपमा' कहते हैं। यदि इन अंगों में एक, दो, या तीन अंग लुप्त हो तो उसे 'लुप्तोपमा' कहेंगे और जो अंग लुप्त होगा उसके आगे, 'लुप्तोपमा' जोड़ देंगे। जैसे 'तरुन अरुन बारिज नयन' में 'वाचक' लुप्त है और 'कुंद इंद सम देह' में 'धर्म' लुप्त है। अतः इन्हें क्रमशः 'वाचकलुप्ता' और 'धर्म-लुप्ता' कहेंगे। इसी प्रकार और भी जानो।

(२) रूपक

जिस रचना में उपमेय और उपमान एक ही माने जाते हैं उसमें 'रूपकालंकार' होता है। 'रूपक' का अर्थ है 'रूप धारण करना'। इस अलंकार में उपमेय उपमान का रूप धारण करता है जैसे—(१) "भरत हंस, रवि वंश तड़ागा। जनमि कीन्ह गुन-दोष विभागा" में भरत, रवि (सूर्य) वंश, उपमेय और हंस, 'तड़ागा' उपमान दोनों एक माने गये हैं। अर्थात् भरत रूपी हंस ने सूर्य वंश रूपी तालाब में जन्म लेकर गुण-दोष अलग अलग कर दिया।

(२) प्रेम-अमिय, मंदर-बिरह, भरत-पयोधि गंभीर।
मथि प्रगटे सुर साधुहित, कृपा-सिंधु रघुबीर॥

'प्रेम' ही अमृत है, विरह—मंदराचल है, भरत ही गंभीर समुद्र हैं, जिसे दयालु राम ने देवताओं और साधुओं के लिए मथकर प्रकट किया।

रूपक—तीन प्रकार के होते हैं—

(१) सांग रूपक—जहाँ उपमेय में अंगों सहित उपमान का आरोप किया जाये। जैसे :—

विपति-बीज, वर्षाऋतु चेरी। भुइँ भई कुमति कैकई केरी॥
पाय कपट-जल अंकुर जामा। वर—दोउ दल, फल दुख परिनामा॥

इसमें उपमेय चेरी, कैकई की कुमति, विपत्ति, कपट, वर और दुःख पर उपमान के अङ्गों वर्षाऋतु, भूमि, बीज, जल, दल और फल का यथावत् कथन किया गया है। अतः सांग रूपक है।

(२) निरङ्ग—जहाँ उपमेय पर अङ्गों के बिना उपमान का आरोप किया जाय। जैसे:—

अवसि चलिय बन राम पहँ, भरत मन्त्र भल कीन्ह।
सोक-सिन्धु बूड़त सबहि, तुम अवलम्बन दीन्ह॥

यहाँ 'सोक' को 'समुद्र' का रूप मान लिया गया है। उपमान के सब अङ्ग नहीं कहे गये हैं।

(३) परंपरित—जहाँ पहले एक रूपक बाँधा जाता है और उस रूपक के आधार पर एक दूसरे रूपक का वर्णन होता है, वहाँ परंपरित रूपक होता है। जैसे:—

काम-क्रोध-मद-गज पञ्चानन।
बसहु निरंतर जन-मन-कानन॥

यहाँ भगवान राम को 'पंचानन' (सिंह) बनाया गया है। इसलिए कि पहले काम-क्रोध-मद को 'गज' (हाथी) का रूप दिया गया है। इसी प्रकार निम्नांकित उदाहरणों में भी जानोः—

(१) तुम बिनु रघुकुल-कुमुद विधु, सुरपुर नरक समान।

(२) जय महेस मन-मानस-हंसा।

(३) जय रघुवंश-बनज बनभानू।
गहन दनुज कुल-दहन कृसानू॥

रेखांकित पद-समूहों में 'परंपरित रूपक' है।

(३) संदेह

जहाँ किसी वस्तु को देखकर निश्चय न हो, संशय बना रहे, वहाँ 'संदेहालंकार' होता है। की, कि, या, अथवा, किधौं इत्यादि संदेह सूचक शब्द इस अलंकार के वाचक हैं। जैसे :—

(१) की मैनाक कि खगपति होई।
मम बल जान सहित पति सोई॥

(२) जान्यो न परत ऐसो काम न करत कोउ,
गंधरब, देवा है कि सिद्ध है कि सेवा है।

(४) उत्प्रेक्षा

इस अलंकार में कल्पना द्वारा उपमेय का कोई उपमान कल्पित कर लिया जाता है। मानों, मनु, मनहु, जनु इत्यादि इसके वाचक हैं। जैसेः—

कहुँ सुन्दरी नहात नीर कर जुगल उछारत।
जुग अंबुज मिलि मुक्त गुच्छ जनु सुच्छ निकारत॥

(यहाँ जुगल कर (दोनों हाथ) कल्पना करके जुग अंबुज (दो कमल) मान लिये गये हैं ।)

(५) अतिशयोक्ति

जहाँ पर किसी की अत्यधिक सराहना की जाये वहाँ अतिशयोक्ति अलङ्कार होता है । जैसे:—

(१) शेष शारदा व्यास मुनि, कहत न पावें पार ।
सो महिमा सतसंग को, कैसे कहै गँवार ॥

(२) जब शिव तीसर नैन उघारा ।
चितवत काम भयो जरि छारा ॥

(३) हनूमान की पोंछ में, लगन न पाई आग ।
लंका सिगरी जर गई, गये निशाचर भाग ॥

(६) अत्युक्ति

जहाँ योग्य व्यक्ति की योग्यता अत्यन्त बढ़ाकर कही जाये, वहाँ अत्युक्ति अलंकार होता है । जैसे:—

(१) जासु त्रास डर कहँ डर होई । (शूरता का वर्णन)

(२) जाचक तेरे दान ते, भये कल्पतरु भूप । (उदारता)

(३) भूषन भार सँभारि हैं, क्यों यह तन सुकुमार ।
सूध पाँय न धर परत, सोभा ही के भार ॥

(शोभा के भार से पृथ्वी पर सीधे पाँव नहीं पड़ते हैं । सुन्दरता को अत्यन्त बढ़ाकर वर्णन किया है ।)

(७) अन्योक्ति

जब किसी वस्तु का वर्णन दूसरी समान वस्तु पर ढाल कर किया जाय, तब उसे अन्योक्ति कहते हैं । जैसे:—

(१) मानस-सलिल-सुधा-प्रतिपाली ।
जियइ कि लवन-पयोधि मराली ॥

(यहाँ हंसिनी पर ढाल कर यह बात कही गई है कि सुकुमार स्त्रियाँ वन में सुखी नहीं रह सकतीं ।)

(२) दिन दस आदर पाइके, करिले आपु बखान ।
जब लगि काग सराध पख, तब लगि तौ सनमान ॥

(८) दृष्टांत

इसमें उपमेय और उपमान दो वाक्य होते हैं और दोनों के धर्म पृथक्-पृथक् होते हैं और दोनों में एक प्रकार की समता सी जान पड़ती है । इसमें 'वाचक' नहीं होते ।

भरतहिं होइ न राजमद, विधि, हरि हर पद पाय ।
कबहुँ कि कांजी-सीकरनि, छीर-सिंधु विनसाय ॥

दोनों में समता का भाव झलकता है । 'विधि-हरि-हर पद पाकर भी राजमद न होना' और कांजी की बूँदों से छीर-सिंधु का न बिगड़ना' धर्म है । जो बिना वाचक के कहे गये हैं ।

(९) उदाहरण

जहाँ कोई साधारण बात कह कर 'ज्यों, जैसे' इत्यादि वाचक शब्दों द्वारा किसी विशेष बात से समता दिखलाई जाती है वहाँ 'उदाहरण' अलंकार होता है । जैसे :—

(१) जगत जनायो जेहि सकल, सो हरि जान्यो नाहिं ।
ज्यों आंखिन सब देखिये, आँख न देखी जाहि ॥

(२) गये असज्जन की सभा, बुध महिमा नहिं होय ।
जिमि कागन की मंडली, हंस न सोहत कोय ॥

विस्तार भय से अधिक अलंकारों का वर्णन नहीं किया गया है। अधिक ज्ञान के लिए 'अलंकार-मंजूषा' या इसी कोटि के किसी दूसरे अलंकार ग्रंथ का अध्ययन करना चाहिए।

प्रश्न

(१) 'अलंकार' किसे कहते हैं ?

(२) शब्दालंकार और अर्थालंकार में क्या भेद है ?

(३) निम्नांकित रचना में अलंकार निर्णय करो :—

(क) परसत पद-पावन सोक-नसावन प्रगट भई तप पुञ्ज सही।

(ख) छरे छबीले छैल सब, सूर-सुजान नवीन।

(ग) उसका मुख चंद्र सा है। (घ) उसका मुख ही चंद्र है।

(ङ) उसका मुख है या चंद्र है। (च) उसका मुख ऐसा है जैसा चंद्र है। (छ) उसका मुख मानों चंद्र है।

(ज) राम-नाम नर केहरी, कनक कसिपु कलिकाल।
जपाक जन प्रहलाद जिमि, पालहि दलि सुर साल।

(झ) लखन सकोप वचन जब बोले।
डगमगानि महि दिग्गज डोले॥

---

(६) गुण

पहले बतलाया जा चुका है कि काव्य में प्रधान वस्तु है 'रस'। अतः रसों की पुष्टि के लिए तदनुकूल रचना की आवश्यकता है। मधुर, उग्र अथवा कोमल जिस भाव वाले रस हैं, उसी प्रकार के शब्दों का उपयोग करने से रचना में आकर्षण आता है। यदि काव्य में ऐसे शब्दों का प्रयो

किया गया है कि जो अव्यवहृत एवं जटिल हैं और जिसके भाव को समझने के लिए कोश के पन्ने उलटने-पलटने पड़ते हैं तो ऐसे काव्य से कोई लाभ नहीं। इन्हीं बातों का विचार करके आचार्यों ने काव्य में तीन गुण माने हैं।

(१) माधुर्य, (२) ओज, (३) प्रसाद।

(१) जिस काव्य में ऐसी पद-योजना की गई है जिसकी मधुरता से मन प्रफुल्लित हो जाता है उसमें माधुर्य गुण माना जाता है। इस गुण का प्रयोग प्रायः शृंगार, करुणा और शांत रसों में पाया जाता है। इसमें कर्णकटु अक्षरों (ट वर्ग और ष) छोड़कर अनुस्वार र, स आदि अक्षर और छोटे-छोटे समासों का प्रयोग किया जाता है। जैसे—

कंकन किंकन नूपुर* धुनि सुनि।
कहत लखन सन राम हृदय गुनि॥
मानहुँ मदन† दुंदुभी दीन्हीं।
मनसा‡ विश्व-विजय कहँ कीन्हीं॥
अस कहि फिर चितये तेहि ओरा।
सिय मुख ससि भये नयन चकोरा॥
भये विलोचन चारु अचंचल§।
मनहुँ सकुचि निमि तजेहु दृगंचल¶॥

इन चौपाइयों में सब माधुर्य गुण-सूचक वर्ण आये हैं। शब्दों से मधुरता टपक रही है।

(२) जिस रचना में द्वित्व वर्ण, लंबे लंबे समास, ट, ठ, ड, ढ, श, ष आदि वर्ण तथा संयुक्त वर्ण आते हैं, उसमें ओज

---

* पायजेब। † कामदेव। ‡ इच्छा। § स्थिर। ¶ पलकों का मारना।

गुण होता है। ओज के प्रभाव से पाठकों का चित्त फड़क उठता है। यह गुण वीर रस, रौद्र रस और भयानक रस में अच्छा होता है।

मत्तभट-मुकुट-दसकंध-साहस-सइल-
सृंग-बिदरनि जनु बज्र टांकी*।
दसनि धरि-धरनि चिक्करत दिग्गज, कमठ,
सेष, संकुचित, संकित पिनाकी।
चलित महि, मेरु, उच्छलित सायर, सकल,
विकल बिधि बधिर, दिसि-विदिस झांकी॥
रजनिचर-घरनि-घर गर्भ-अर्भक स्रवत,
सुनत हनुमान की हांक बांकी॥

इस छंद में ओज गुण उत्पन्न करने वाले वर्णों द्वारा रचना की गई है।

(३) जिस काव्य के पढ़ते ही उसका भाव पाठकों की समझ में आ जाता है, उसमें 'प्रसाद' गुण माना जाता है। इस गुण को लाने के लिए सरल, सीधे-सादे और सुबोध शब्दों के द्वारा रचना की जाती है। इसका उपयोग प्रायः सभी रसों में किया जाता है। माधुर्य और ओज का संबंध शब्दों की बाहरी बनावट से होता है और प्रसाद गुण का संबंध अर्थ से रहता है। इसी से इस गुण का प्रयोग सभी रसों के लिए आवश्यक है। जैसे—

(१) देखन बाग कुँवर दोउ आए।
वय किशोर सब भांति सोहाए॥

---

* मत्त योद्धाओं में श्रेष्ठ रावण के साहस रूपी पर्वत की चोटी तोड़ने में मानो वज्र की टांकी (बिजली की चोट) है।

श्याम, गौर किमि कहौं बखानी।
गिरा अनैन, नैन बिनु बानी॥

(२) दुनिया में अगर कोई उपकार करैया।
तन-मन से वचन-धन से कठिन कष्ट हरैया॥
निज प्रेम के पन से न कदम एक टरैया।
हो दोष हजारों तो न चित एक धरैया॥
अनुमान से, अनुभव से, है दिल मेरा बताता।
है व्यक्ति वही एक, जिसे कहते हैं 'माता'॥

———

दूसरा अध्याय

पद्य-रचना

१—'पद्य' किसी न किसी 'छंद' में होता है। छंद द
प्रकार के होते हैं :—

(१) मात्रिक, (२) वृत्त।

२—जिस छंद में मात्राओं की संख्या का नियम होता है
उसे 'मात्रिक छंद' कहते हैं। जिस छंद में वर्णों की संख्
तथा लघु-गुरु के क्रम का नियम हो, उसे 'वृत्त' कहते हैं।

३—इसके अलावा बहुत से छंदों में विराम का निय
होता है। इसी विराम को 'यति' कहते हैं।

४—प्रत्येक छंद में एक प्रकार की 'गति' अर्थात् पाठ-प्रवा
का ढंग होता है उसे 'लय' कहते हैं।

५—वर्णों के उच्चारण में जितना समय लगता है, उ
'मात्रा' कहते हैं।

६—वर्ण दो प्रकार के होते हैं (१) ह्रस्व, (२) दीर्घ
ह्रस्व वर्ण में एक मात्रा मानी जाती है और दीर्घ वर्ण में
मात्रायें। छंदः शास्त्र में ह्रस्व वर्ण को 'लघु' और दीर्घ व
को 'गुरु' कहते हैं। 'लघु' का चिह्न (।) और 'गुरु' का चि
(S) है।

७—अनुस्वार, विसर्गयुक्त तथा संयुक्ताक्षर के प्रथम व

S I I   S I

में दो मात्रायें मानी जाती हैं। 'पंकज' में ४, 'दुःख' में

ऽ । ।

और 'पत्थर' में ४ मात्रायें हैं। कहीं-कहीं किसी वर्ण का रूप दीर्घ होता है परंतु 'गति' के कारण वह ह्रस्व ही पढ़ा जाता है। ऐसी दशा में उसमें एक ही मात्रा मानी जाती है।

(१) परखेहु मोंहि एक पखवारा।
(२) मोंहि मग चलत न होइहि हारी।
(३) जामवंत के बचन सोहाये।

ऊपर के रेखांकित शब्दों में 'लय' के कारण दीर्घ वर्ण को ह्रस्व पढ़ा जायगा और उसमें एक मात्रा होगी।

८—तीन-तीन अक्षरों के समूह को 'गण' कहते हैं। गण आठ हैं। जिनके नाम, रूप, उदाहरण निम्नांकित हैं।

नाम	रूप	उदाहरण	संकेतनाम
(१) मगण	ऽ ऽ ऽ	बंगाली	म
(२) नगण	। । ।	कमल	न
(३) भगण	ऽ । ।	पावक	भ
(४) यगण	। ऽ ऽ	वियोगी	य
(५) जगण	। ऽ ।	वियोग	ज
(६) रगण	ऽ । ऽ	पातकी	र
(७) सगण	। । ऽ	सरजू	स
(८) तगण	ऽ ऽ ।	कंगाल	त

इन्हें स्मरण रखने के लिए निम्नलिखित पद्य कंठस्थ करलो :—

"आदि, मध्य, अवसान में, भ, ज, स, होय गुरु जान।
य, र, त, होय लघु क्रमहीं ते, म, न, गुरु, लघु सब मान॥

९. हिंदी के पद्यों में 'तुक' रखने का नियम सा हो गया है। पद्य के अंत के एक से स्वर वाले एक या अनेक अक्षर आ जाते हैं, उन्हीं को 'तुक' कहते हैं। यद्यपि आज कल अतुकांत कवितायें भी होती हैं तथापि तुकों का न मिलना कुछ खटक सा जाता है। तुकों से पद्य श्रुति-प्रिय और रोचक हो जाता है, और इससे कविता में लयगत सौंदर्य भी आ जाता है।

१०. प्रत्येक छंद में ४ चरण होते हैं। यदि छंद के चारों चरण समान हों उसे 'सम' कहते हैं। जिस छंद का पहला और तीसरा तथा दूसरा और चौथा चरण समान होता है, वह अर्द्ध सम कहा जाता है। जिस में चार से अधिक चरण होते हैं उसे 'विषम' कहते हैं। इसीलिए मात्रिक और वर्ण वृत छंदों के तीन-तीन प्रकार होते हैं, सम, अर्द्धसम और विषम।

मात्रिक सम छंद

११. चौपाई—जिस मात्रिक सम छंद के प्रत्येक चरण में १६ मात्रायें हों, उसे 'चौपाई' कहते हैं। जैसे :—

S I I I I I I S I I S S
देखत भृगुपति वेष कराला। (१६ मात्रायें)
I S I I I I I I I I I S S
उठे सकल भय विकल भुआला। (१६ मात्रायें)
I I I S I I I I I I I S S
पितु समेत कहि कहि निज नामा। (१६ मात्रायें)
I S I I I I I S I I S S
लगे करन सब दंड प्रनामा॥ (१६ मात्रायें)

१२. रोलाछंद—इस छंद में ११ और १३ मात्राओं के विराम से प्रत्येक चरण में २४ मात्रायें होती हैं। जैसे :—

"संचित संपति सदा सदन में उसके रहती।
उसकी प्रिय संतान नहीं हैं संकट सहती॥
समझदार है वही 'चाल सादी' है जिसकी।
बनी बनाई बात सदा रहती है उसकी॥"

१३. गीतिका—इस छंद के प्रत्येक चरण में १४ और १२ मात्राओं के विराम से २६ मात्रायें होती हैं। अंत में लघु गुरु रहते हैं। जैसे :—

जन्म-भू सी जन्म-भू है और है उपमा नहीं।
खोजते रहिए कभी भी पा नहीं सकते कहीं॥
जन्मदा माँ है हमारी जो नहीं निःस्वार्थ है।
जन्म-भू सी फिर उसे कहना हमारा व्यर्थ॥

१४. सरसी छंद—इसके प्रत्येक चरण में १६ और ११ के विराम से २७ मात्रायें होती हैं। अंत में गुरु-लघु होता है, इसे 'कबीर' भी कहते हैं। जैसे :—

एक मूर्ख निज वृद्ध पिता को, मार रहा था खूब।
मानो यही अनीति देखकर सूर्य रहा था डूब॥
इसी समय संध्या-समीर* के सेवन को स्वच्छंद।
निज शिष्यों के साथ ग्राम्य गुरु जाते थे सानंद॥

१५. हरिगीतिका—इस छंद के प्रत्येक चरण में १६, १२ के विराम से २८ मात्रायें होती हैं। अंत में लघु-गुरु होते हैं। इसकी गति ठीक रहने के लिए ५ वीं, १२ वीं, १९ वीं और २६ वीं मात्रा लघु रखनी चाहिए। जैसे :—

---

* संध्या की हवा।

हम कौन थे, क्या हो गये हैं, जान लो इसका पता,
जो थे कभी गुरु है न उनमें, शिष्य की भी योग्यता।
जो थे सभी के अग्रगामी* आज पीछे भी नहीं,
है दीखती संसार में विपरीतता ऐसी कहीं ?

सूचना—इस छंद के चौथे चरण में 'विप' तक १६ मात्रायें पूरी हो जाती हैं और 'रीतता' शब्द कटकर उसकी मात्राओं की गिनती अंतवाली १२ मात्राओं में होती है अर्थात् 'विप' और 'रीतता' के बीच में 'विश्राम' पड़ता है। ऐसा न होना चाहिए था। ऐसे ही दोष को 'यति-भंग दोष' कहते हैं।

१६. वीर या आल्हा छंद—इसमें १६ और १५ के विराम से प्रत्येक पद में ३१ मात्रायें होती हैं। अंत में गुरु-लघु होते हैं। जैसे :—

सुमिरि भवानी जगदंबा का श्री शारद के चरन मनाय।
आदि सरस्वति तुमका ध्यावों, माता कंठ विराजो आय॥
जोति बखानों जगदंबा कै, जिनकी कला बरनि नहिं जाय।
शरद चंद्र सम आनन राजै†, अति छवि अंग अंग रहि छाय॥

सूचना—बहुत से कवि ३० और २७ मात्रा वाले छंदों के चरणों को मिलाकर भी छंद रचना करते हैं। जैसे :—

सुनिये झारखंड बनवासी, दयाशील हे वैरागी। (३० मात्रायें)
करके कृपा बता दो मुझको, कहाँ जले है वह आगी॥
मैं भटका फिरता हूँ बन में भूल गया हूँ राह। (२७ मात्रायें)
जो तू मुझे वहाँ पहुँचा दे, यह गुण होय अथाह॥

---

* अगुआ, नेता। † शरद के चन्द्रमा के समान मुख शोभित है।

अर्द्धसममात्रिक छंद

अर्द्धसममात्रिक छंदों में बरवै, दोहा, सोरठा और उल्लाला ये ४ छंद बहुत प्रचलित हैं। ये प्रायः दो ही पंक्तियों में लिखे जाते हैं।

१७. बरवै—इस छंद के पहले और तीसरे चरणों में १२, १२ तथा दूसरे और चौथे चरणों में ७, ७ मात्रायें होती हैं। इन चरणों के अन्त में जगण का होना आवश्यक है। जैसे :—

कमठ-पीठ* धनु सजनी, कठिन अँदेस। (१२, ७ मात्रायें)
तमकि ताकि ये तुरिहैं, कह्यौ महेस॥ (१२, ७ मात्रायें)

१८. दोहा—इस छंद के विषम चरणों में १३, १३ और सम चरणों में ११, ११ मात्रायें होती हैं। अन्त में लघु रहता है। जैसे :—

मेरी भव-बाधा† हरौ, राधा नागरि सोय। (१३, ११)
जा तन की झाईं परे, स्याम हरित दुति‡ होय॥

१९. सोरठा—यह दोहे का उलटा होता है। अर्थात् विषम चरणों में ११, ११ और सम चरणों में १३, १३ मात्रायें होती हैं।

बंदों पवनकुमार, खल बन पावक§ ज्ञान धन। (११, १३)
जासु हृदय आगार॥, बसहिं राम सर चाप वर॥

---

* बहुत कठोर। †सांसारिक आपत्तियाँ ‡हरि कांति (हरे, प्रसन्न) §दुष्टों के नाशक। ॥घर।

२०. उल्लास—विषम चरणों में १५, १५ या १३, १३ मात्रायें और समचरणों में १३, १३ मात्रायें होती हैं। जैसे :—

(१) है शेखी दौलत की कहीं, बल का कहीं गुमान है।
है खानदान का मद कहीं, कहीं नाम का ध्यान है॥
(२) सहनशीलता के सरिस, कोई बल न जहान है।
जिसके उर-क्षमता बसी, सचमुच वही महान है।

विषम-मात्रिक छंद

इस प्रकार के दो छंद बहुत प्रचलित हैं (१) छप्पय (२) कुंडलियाँ।

२१ छप्पय—इस छंद में छः पद होते हैं। पहले के चार चरण रोला के होते हैं, अन्तिम दो चरणों में उल्लाला के दो दल होते हैं। जैसे :—

तेरी उन्नति मेघ! देखकर हम सुख पाते।
चातक, मोर, कुरंग आदि फूले न समाते॥
सर, ऊसर, नद, नदी और गिरि, गह्वर कानन ※।
सन्मुख हो सोत्कंठ देखते तेरा आनन॥
धन्य! धन्य!! हे मेघ! तू शत्रु मित्र जिसके नहीं।
तेरे कर से विश्व में लाभ हुए किसके नहीं ?

२२. कुंडलियाँ—इसमें २४-२४ मात्राओं के छः चरण होते हैं। आदि में एक दोहा होता है जो दो दलों में लिखा जाता है। आगे रोलाछंद जोड़ दिया जाता है। दोहे का अन्तिम चरण रोला का प्रथम चरणार्द्ध होता है और रोला के अन्तिम

※ सवन वन :

चरण के कुछ अंतिम अक्षर या शब्द वही होते हैं जो दोहे के आदि में रहते हैं। इस प्रकार आदि और अंत के अक्षरों से एक कुंडली सा बनता है। इसी से इसे 'कुंडलियाँ' कहते हैं। जैसे :—

बीती ताहि बिसारि दे, आगे की सुधि लेइ।
जो बनि आवै सहज में, ताही में चित देइ॥
ताही में चित देइ बात जामें बनि आवै।
दुर्जन हँसै न कोइ चित्त में खता* न पावै॥
कह गिरिधर कविराय यहै करु मन परतीती।
आगे को सुख समुझि होइ बीती सो बीती॥

वर्णवृत्त

२३. इंद्रवज्रा—यह वर्णवृत्त छंद है। इसके प्रत्येक चरण में दो तगण एक जगण और दो गुरु ११ वर्ण होते हैं। (स्मरण रखने के लिए इस प्रकार कहते हैं—"ताता ज गा गा यह इंद्रवज्रा")।

मैं राज्य की चाह नहीं करूँगा।
है जो तुम्हैं इष्ट वही करूँगा।
संतान जो सत्यवती जनैगी॥
राज्याधिकारी वह ही बनैगी॥

२४. उपेंद्रवज्रा—इस छंद में भी ११ वर्ण होते हैं। इसके प्रत्येक चरण में जगण, तगण जगण और दो गुरु होते हैं। (ज ती जा गे गा उपेंद्रवज्रा)

---

* ग़लती।

बलाभिमानी धरणी-धरेश
कहो, कहाँ हैं अब वे जनेश * ?
चले गये हैं सब आप-आप।
हुआ न दो ही दिन का प्रताप ?

इस पद के अंत के वर्ण दीर्घ माने जायँगे।

२५. उपजाति—इंद्रवज्रा और उपेंद्रवज्रा के चरणों के मिलने से कई प्रकार के छंद बनते हैं। एक उदाहरण नीचे दिया जाता है :—

होता न जो जन्म कहीं तुम्हारा।
अकार्य्य होता अति ही हमारा॥
संताप, हे ग्रंथ, बिना तुम्हारे।
पाते अनेकों हम लोग सारे॥

२६. तोटक—चार सगण का तोटक छंद होता है। प्रत्येक चरण में १२ वर्ण होते हैं। जैसे :—

बहु धाम सँवारहिं जोगि जती।
विषया हर लीन्ह गई विरती† ॥
तपसी धनवंत दरिद्र गृही‡।
कलि कौतुक तात न जात कही॥

२७. भुजंगप्रयात—इसके प्रत्येक चरण में ४ यगण होते हैं। जैसे :—

जहाँ जन्म देता हमें है विधाता।
उसी ठौर में चित्त है मोद पाता॥
जहाँ हैं हमारे पिता बंधु माता।
उसी भूमि से है हमें सत्य नाता॥

---

*राजा। †वैराग्य। ‡गृहस्थ।

२८. द्रुतविलंबित—इसमें १२ वर्ण होते हैं। प्रत्येक चरण में न, भ, भ, र १२ वर्ण होते हैं। इसे 'सुंदरी' भी कहते हैं। जैसे :—

सुन कपे*! यम, इंद्र, कुवेर की,
न हिलती रसना मम सामने।
तदपि आज मुझे करना पड़ा,
मनुज-सेवक से वकवाद भी॥

२९. वंशस्थविलम्—इसके प्रत्येक चरण में 'ज त ज र' अर्थात् १२ वर्ण होते हैं। जैसे :—

न कालिमा है मिटती कपाल की,
न बाप को है पड़ती कुमारिका।
प्रतीति होती यह थी विलोक के,
तमोमयी† सी तनया-तमारि‡ को॥

३०. वसंततिलका—यह १४ वर्णों का वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में त, भ, ज, ज, ग, ग रहते हैं। (सूत्र—जानहु वसंततिलका तु भ जौ ज गौ गा)। जैसे :—

जो राज-पंथ वन-मेदिनि§ में बना था।
धीरे उसी पर सधा रथ जा रहा था॥
हो-हो विमुग्ध लखते सह-सारथी थे।
ऊधो छटा विपिन की अतिही अनूठी॥

३१. मालिनी—यह १५ वर्णों का वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में न, न, म, य, य होते हैं। इसमें ८, ७ वर्णों पर विराम

---

*हे बंदर (अंगद से रावण कहता है)। †काली। ‡यमुना। §वन-भूमि।

होता है। (सूत्र—न न मि य य काहे मालिनी मूर्ति धन्या) जैसे :—

प्रिय-पति वह मेरा प्राण प्यारा कहाँ है।
दुख-जलनिधि डूबी का सहारा कहाँ है॥
लख मुख जिसका मैं आज लौं जी सकी हूँ।
वह हृदय हमारा नेत्र-तारा कहाँ है॥

३२—शिखरिणी—इसमें ६, ११ के विराम से प्रत्येक चरण में १७ वर्ण होते हैं, य, म, न, स, भ, ल और ग होता है। (सूत्र—यमीनासो भूला गुण गागा शिखरिणी) जैसे :—

छिपाते हो कोई तुम न हमसे बात अपनी;
सुशिक्षा देते हो स्मरण तुमको ग्रंथ जितनी॥
तुम्हारा तो भी जो सतत न करें आदर हम।
हमारा सा होगा अहह! फिर तो कौन अधम॥

३३—मंदाक्रांता—इसमें ४, ६, ७ के विराम से प्रत्येक चरण में म, भ, न, त, त, ग, ग, गण रूप १७ वर्ण होते हैं। (सूत्र—मंदाक्रांता कर सुमति कै मा भ नो ता त गा गा)। जैसे :—

तारे डूबे, तम, टल गया, छा गई व्योम लाली।
पंछी बोले, तमचुर* जगे, ज्योति फैली दिशा में॥
शाखा डोलीं, सफल तरु की, कंज फूले सरों में।
धीरे-धीरे, दिन कर† कढ़े, तामसी‡ रात बीती॥

३४—शार्दूलविक्रीड़ित—इसके प्रत्येक चरण में १२, ७ के विराम से म, स, ज, स, त, त, ग १९ वर्ण होते हैं। जैसे :—

*मुर्गा। †सूर्य। ‡अंधेरी।

ज्यौं-ज्यौं थी रजनी व्यतीत करती औ देखती व्योम को।
त्यों ही त्यों उनका प्रगाढ़ दुख भी दुर्दांत* था हो रहा॥
आँखों से अविराम अश्रु बह के था शांति देता नहीं।
बारंबार असक्त कृष्ण जननी† थी मूर्छिता हो रहीं॥

सवैया—२२ वर्ण से लेकर २६ वर्ण तक के वृत्त सवैया कहलाते हैं। इनमें मदिरा, मत्तगयंद, दुर्मिल और किरीट नामक सवैया हिंदी साहित्य में बहुत प्रख्यात हैं।

३५—मदिरा—प्रत्येक चरण में ७ भगण और एक गुरु अर्थात् २२ वर्ण होते हैं। जैसे :—

दान करो गुण गान गिरा पर-निंदक निष्फल काम रहैं।
दक्षिण देव गणेश रहैं, बहु विघ्न न क्यों फिर बाम रहैं॥
मा कमला‡ अनुकूल रहे धन-धान्य भरे सब धाम रहैं।
भक्षक का भय है न हमें बस रक्षक राघव राम रहैं॥

३६—मत्तगयंद—(मालती)—इसके प्रत्येक चरण में ७ भगण और दो गुरु होते हैं। जैसे :—

शोभित मंचन की अवली गजदंत मई छबि उज्ज्वल छाई।
ईश मनो बसुधा में सुधारि सुधाधर-मंडल§ मंडि जोन्हाई॥
ता महँ केशवदास विराजत राज कुमार सबै सुखदाई।
देवन स्यों¶ जनु देव सभा शुभ सीय-स्वयंबर देखन आई॥

३७—दुर्मिल—इस छंद के प्रत्येक चरण में ८ सगण होते हैं। जैसे :—

सुनिकै धुनि चातक मोरनि की चहुँओरन कोकिल कूकनि सों।
अनुराग भरे हरि बागनि में सखि रागत‖ राग अचूकनि सों॥

---

* कठिन। †यशोदा। ‡लक्ष्मी। §चंद्रमंडल। ¶सहित। ‖गाते हैं।

'कवि देव' घटा उनई जो नई बन भूमि भई दल दूकनि* सों।
रंगराती हरी हहराती लता झुकि जाती समीर† के झूंकनि सों॥

३८. किरीट—इसके प्रत्येक चरण में ८ भगण होते हैं। जैसे :—

मानुस हों तो वही 'रसखानि' बसौं ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पशु हों तो कहा बसु मेरो चरौं निज नंद की धेनु मझारन।
पाहन हों तो वही गिरि को जो भयो ब्रज छत्रपुरंदर‡ कारन।
जो खग हों तो बसेरो करौं उन कालिंदी§ कूल कदंब के डारन।

३९. २६ वर्णों से अधिक वाले वृत्त दंडक कहलाते हैं। दंडक में 'मुक्तक' छंद प्रसिद्ध है। उसमें वर्णों की संख्या नियत होती है पर गणों का बंधन नहीं होता। ऐसे मुक्तकों में 'मनहरण' बहुत प्रचलित है इसे 'घनाक्षरी' या 'कवित्त' भी कहते हैं।

मनहरण—इस मुक्तक छंद के प्रत्येक चरण में १६, १५ के विराम से ३१ वर्ण होते हैं। अन्त में कम से कम एक गुरु अवश्य रहना चाहिए। जैसे :—

आते जो यहाँ हैं ब्रज भूमि की छटा को देख,
नेक न अघाते होते मोद-मद माते|| हैं।
जिस ओर जाते उस ओर मन भाते दृश्य,
लोचन लुभाते और चित्त को चुराते हैं॥

* दो पत्तों। †हवा। ‡इंद्र। §जमुना। ||प्रसन्नता और गर्व में लीन।

पल भर अपने को वे भूल जाते सदा,
सुखद अतीत-सुध सिंधु* में समाते हैं।
जान पड़ता है उन्हें आज भी कन्हैया यहाँ,
मैया-मैया टेरते हैं गैया को चराते हैं।

प्रश्न

(१) वर्ण कितने प्रकार के होते हैं ?
(२) लघु-गुरु का लक्षण बताओ।
(३) छंद के भेद उदाहरण सहित लिखो।
(४) नीचे लिखे छंदों को पहचानो :—

(१) राम-वाम दिसि जानकी, लखन दाहिनी ओर।
ध्यान सकल कल्यान मय, 'तुलसी' सुर तरु तोर॥

(२) बन्दों गुरु पद-कंज, कृपासिंधु नर रूप हरि।
महा मोह तम पुञ्ज, जासु वचन रविकर† निकर॥

(३) हे मित्र मादक-द्रव्य का सेवन कभी मत कीजिए।
अहिफेन,‡ मद्य-तमालपत्र§ न भांग गांजा पीजिए॥
जग में नशे ने दुर्दशा किसकी कहो, कब की नहीं।
उन्मत्त¶ बनने के लिए यह बुद्धि प्रभु ने दी नहीं॥

(४) पदकंजनि मंजु बनी पनही, धनुही सर पंकज पाणि लिए।
लरिका सँग खेलत डोलत हैं सरजू तट चौहट हाट हिए॥
'तुलसी' अस बालक सों नहिं नेह कहा जप जोग समाधि किए।
नर ते खर सूकर स्वान समान, कहौ जग में फल कौन जिए॥

---

* प्राचीन काल की याद रूपी समुद्र। † सूर्य की किरणें। ‡ अफीम
§ तंबाकू। ¶ पागल।

(५) पाकर तुझसे सभी सुखों को हमने भोगा ;
तेरा प्रत्युपकार कभी क्या हमसे होगा ?
तेरी ही यह देह तुझी से बनी हुई है;
बस तेरे ही सुरस सार से सनी हुई है ॥
हा ! अंत समय तूही इसे, अचल देख अपनायगी ।
हे मातृभूमि यह अंत में, तुझ में ही मिल जायगी ॥

तीसरा अध्याय

१—वाग्धारा—(मुहाविरे)

ऐसे वाक्य या वाक्यांश जो प्रयोग में अपने सामान्य अर्थ को न बता कर कुछ और ही विलक्षण अर्थ प्रकट करते हैं, वाग्धारा या मुहाविरे कहलाते हैं। मुहाविरों के प्रयोग से भाषा में चमत्कार आ जाता है। नीचे कुछ मुहाविरे भावार्थ तथा प्रयोग सहित लिखे जाते हैं :—

मुहाविरे	भावार्थ	प्रयोग
(१) हाथ आना—	अधिकार में होना—	अब तो मामिला मेरे हाथ आया है विचार किया जायगा।
(२) हाथ उठाना—	मारना—	ख़बरदार! समझकर हाथ उठाना नहीं तो अनर्थ हो जायगा।
(३) हाथ कटाना—	अधिकार दे देना—	उसने स्वयं हाथ कटा दिया अब कोई क्या करेगा?
(४) हाथ खींचना—	संबंध तोड़ना—	बाबू साहब ने अब सभा से हाथ खींच लिया है।

(५) हाथ खाली होना—पास पैसे का न होना—भाई साहब ! जब हाथ खाली रहता है तब किसी की नहीं चलती ।

(६) हाथ चलाना—मारपीट करना— स्त्रियों पर हाथ चलाना ठीक नहीं ।

(७) हाथ डालना—कार्यारंभ करना— बे समझे काम में हाथ डालने से पछताना पड़ता है ।

(८) हाथ देना— मारना— यदि अधिक बोले तो ऐसा हाथ दूँगा कि मुँह टेढ़ा हो जायगा ।

(९) हाथ धोना— खो देना— यदि आप ध्यान न देंगे तो लड़के से हाथ धोना पड़ेगा ।

(१०) हाथ पकड़ना—सहारा लेना— जब ईश्वर ने हाथ पकड़ा है तब दूसरे क्या कर सकते हैं ।

(११) हाथ पटकना—क्रुद्ध होना— वह मेरी बात सुनते ही हाथ पटकने लगा ।

(१२) हाथ पसारना—माँगना— किसी के आगे हाथ पसारना अच्छा नहीं ।

(१३) हाथ बटोरना—	अधिक खर्च न करना	अब हमने हरएक काम से हाथ बटोर लिया है।
(१४) हाथ धोकर—पीछे पड़ना	पीछा न छोड़ना—	आज कल कवि लोग हाथ धोकर भारत के पीछे पड़े हैं।
(१५) हाथ मलना—	पछताना—	परिश्रम न करोगे तो पास न होने पर हाथ मलोगे।
(१६) हाथ मारना—	(१) शर्त्त करना—	आओ हाथ मारो, कल जरूर शहर चला जायगा।
	(२) अपने अधिकार में कर लेना।	उस चोर ने बाबू साहब की जेब पर हाथ मारा।
(१७) हथियाना—	लेना।	उसने सारे धन को हथिया लिया।
(१८) हाथ लगना	मिल जाना।	मोहन को बड़ा धन हाथ लग गया है।
(१९) हाथ साफ़ करना—	मार डालना—	चूहे ने कहा—संभव है बिल्ली जाल से छूट कर मुझ पर ही हाथ साफ करे।

(२०) हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना—	कुछ काम न करना—	यदि तुम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहोगे तो कैसे काम चलेगा। कुछ काम करो।
(२१) गला काटना—	बहुत दुःख देना—	उसने लोगों का गला काट कर रुपया इकट्ठा किया है।
(२२) गला घुँटना—	दम रुकना—	इस घर की हवा ऐसी खराब हो गई है कि थोड़ी देर में गला घुँटने लगा।
(२३) गला घोंटना—	जब्र करना—	गला घोंट कर कोई कब तक काम ले सकता है।
(२४) गला छूटना—	छुटकारा मिलना—	सौ रुपया देने पर महाजन से गला छूटा।
(२५) गला फसाना—	संकट में डालना—	आपने मेरा गला फँसा दिया फिर उलट कर देखा तक नहीं।
(२६) गला रेतना—	अत्यंत कष्ट पहुँचाना—	भला गरीबों का गला रेत कर क्या पावोगे।
(२७) गले का हार होना—	अत्यंत प्यार—	इस समय वह राजा साहब के गले का हार हो रहा है।

(२८) गले के नीचे उतरना-मन में बैठना–आप इतना समझाते हैं पर उसके गले के नीचे उतरता ही नहीं।

(२६) गले मँढ़ना—जबरदस्ती देना—जब मोतीलाल उसे नहीं चाहता तब क्यों उसके गले मँढ़ता है।

(३०) कान उठाना—सुनने को तैयार रहना। गोपी लोगों की बात सुनने के लिए हर पल कान उठाये रहता है।

(३१) कान करना—सुनना, ध्यान देना। बच्चे की बात पर कान न करना चाहिए

(३२) कान काटना—हरा देना— शिवप्रसाद है तो बच्चा पर बोलने में बड़े बड़ों के कान काटता है।

(३३) कान का कच्चा—शीघ्र विश्वास—होना करना बाबू साहब कान के कच्चे हैं।

(३४) कान खड़े करना—सचेत होना— कई बार धोखा खाने पर अब उसने कान खड़ा किया।

(३५) कान खा जाना—बहुत बातें करना। कान तो खा गये, अब तो चुप रहो।

(३६) कान भरना—किसी के विरुद्ध किसी का ख़याल खराब करना। दरबारियों ने राजा साहब का. कान भर दिया अब तुम्हारी न लगेगी।

(३७) कान में तेल डालना।	बेखबर रहना—	सब लोग बढ़ने के लिए उद्योग कर रहे हैं वह कान में तेल डाले बैठा है।
(३८) काना फूसी करना।	चुपके चुपके कान में बातें कहना।	काना फूसी से काम न चलेगा, प्रगट बातें करो।
(३९) कानों पर हाथ रखना।	साफ़ इन्कार करना।	मैंने जगरूप से कईबार कहा पर रुपये का नाम सुनकर वह कानों पर हाथ रखता है।
(४०) मुँह पर आना—	सामने आना—	वह मेरे मुँह पर आकर कहे तब मैं जानूँ कि वह मर्द है।
(४१) मुँह उठाना—	विरुद्ध चलना—	प्रजा के कुछ लोगों ने राजा के विरुद्ध मुँह उठाया।
(४२) मुँह की खाना-	कड़ा जवाब पाना-	जिन लोगों ने महाजन की बुराइयाँ चाहीं उन्हें उलटे मुँहकी खानी पड़ी।
(४३) मुँह मारना—	आरंभ करना—	साँड ने ज्योंही घास पर मुँह मारा त्यों उसपर किसान के डंडे बरसने लगे।
(४४) अपने मुँह मियाँ मिटठू बनना	अपनी आप बड़ाई करना—	अपने मुँह मियाँ मिटठू बनना ऐब है।

(४५) मुँह में पानी भरना।	लालच समाना—	मिठाइयाँ देखकर उसके मुँह में पानी भर आया।
(४६) दाँत खट्टे करना—	हरा देना—	महाराणा रणजीतसिंह ने शत्रुओं के दाँत खट्टे कर दिये।
(४७) दाँत निकालना—	असमर्थता प्रकट करना।	उस नौकर से जब काम के लिए कहो, चट दाँत निकाल देता है।
(४८) दाँत पीसना—	अति क्रोध करना—	पंडित जी ने दाँत पीस कर कहा कि यह कल का लड़का मुझसे शान दिखाता है।
(४९) दाँत लगाना—	लेने की ताक में रहना।	उस भूमि पर कई महाजनों ने दाँत लगाया है देखो किसे मिलती है।
(५०) दाँत काटी रोटी—	अत्यंत घनिष्ट होना	मोती और सोती दोनों में दाँत काटी रोटी है।
(५१) दाँतों तले अङ्गुली दबाना	आश्चर्य में होना—	ताज महल देख कर सभी दाँतों तले अङ्गुली दबाते हैं।
(५२) नाक रखना—	इज्जत रखना—	बेटा! आज तुमने स्कूल की नाक रख ली।

(५३) नाक रगड़ना—बहुत मिन्नत करना—कई दिन नाक रगड़ने पर तब आज सोंधू साहु ने १०) दिये हैं।

(५४) नाक कटाना—प्रतिष्ठा गँवाना—तुमने थोड़ी बात के लिए गाँव की नाक कटा दी।

(५५) नाक में दम करना—हैरान करना—उस लड़के ने मेरी नाक में दम कर दिया।

(५६) नाकों चना चबाना—बहुत तंग करना। मोहन ने सोहन को नाकों चना चबाया पर वह उसके वश में न आया।

(५७) आँखें चुराना—छिपते फिरना— शिकारी को देख कर हरिण आँखें चुराते हैं।

(५८) आँख छिपाना—नजर बचाना—कल्लू जब से रुपया ले गया है तब से आँखें छिपाता फिरता है।

(५९) आँख डालना— देखना— भले लोग पराई वस्तु पर आँख नहीं डालते।

(६०) आँखों पर पट्टी बाँधना—ध्यान न देना। तुमने आँखों पर पट्टी बाँध ली है कि अपना भला-बुरा नहीं सूझता है।

(६१) आँखों पर बिठाना—बहुत आदर सत्कार करना— पंडितजी मेरे घर आवें तो मैं अपनी आँखों पर बिठाऊँ।

(६२) आँखें भर आना—आँखों में आँसू आना— मेरी बात सुनतेही उसकी आँखें भर आई।

(६३) आँखों से ओझल होना। ग़ायब होना— देखतेही देखते चोर आँखों से ओझल हो गये।

(६४) आँखों से गिरना—तुच्छ ठहरना—वह अपनी चाल से लोगों की आँखों से गिर गया।

(६५) आँखों में चरबी छाना—अभिमान से न सूझना—क्या तुम्हारी आँखों में चरबी छाई है कि घी का घड़ा न देखा, सब घी चौपट हो गया।

(६६) आँखों की पुतली होना। अत्यंत प्यारा होना—कुपूत भी माता की आँखों की पुतली होते हैं।

(६७) सिर कटाना—मारा जाना—लड़ाई में कौन जाकर सिर कटावे।

(६८) सिर पर चढ़ाना—शोख़ करना—लड़कों को सिर पर चढ़ाना अच्छा नहीं।

(६९) सिर पटकना—दूसरे पर डालना—उसने मेरे सिर पटक दिया।

(७०) सिर खुजलाना—लज्जित होना—प्रश्न का उत्तर न आने पर लड़के सिर खुजलाने लगते हैं।

(७१) सिर नीचा करना—लज्जित होना—वह सामने आते ही सिर नीचा कर लेता है।

(७२) माथे पड़ना—ज़िम्मेदारी लेना—उसका पालन पोषण मेरे माथे पड़ा।

(७३) माथा मारना—परेशान होना—गणेशदत्तने लाख माथा मारा पर वह अपने काम में सफल न हुआ।

(७४) पलक मारना—बहुत जल्द—पलक मारते दौड़कर आ गया।

(७५) पलकें बिछाना—प्रेम से स्वागत करना—आइए, आपके लिए पलकें बिछी हैं।

(७६) पलक पांवड़े पड़ना। प्रेम से स्वागत करना—आपके लिए पलक पाँवड़े पड़े हुए हैं।

(७७) देह जलना—क्रोधित होना—तुम्हारी चाल देखकर देह जल जाती है।

(७८) देह दिखाना—दिखलाई देना—भगेलू आया तो था पर देह दिखाकर न जाने कहाँ चला गया।

(७९) खून बहाना—मारकाट करना—उस लड़ाई में सिपाहियों ने खून बहा दिया।

(८०) खून उबलना—क्रोधित होना—शत्रु को देखते ही उसका खून उबल गया।

(८१) जी उचटना—चित्त न लगना—अब पढ़ने से जी उचट गया।

(८२) जी का बुखार निकालना। बकझक करके जी को शांत करना—बक-बक करके उसने जी का बुखार निकाल दिया।

(८३) जी छोड़कर भागना। एकदम भागना—मैदान से सिपाही जी छोड़कर भागे।

(८४) जी में बैठना—सत्य प्रतीत होना—आपकी कही हुई बातें मेरे जी में बैठती हैं।

(८५) पैर पकड़ना—खुशामद करना—गुरु जी का पैर पकड़ कर मोहन ने कहा कि मुझे पास कर दीजिए।

(८६) पैर पड़ना—दीनता दिखाना—किसान जमींदार के पैरों पड़ा पर उसने एक पैसा न छोड़ा।

(८७) बात बनाना—झूठ कहना— कालीप्रसाद, बातें बनाना छोड़ दो।

(८८) बात बनाना—धाक बैठना— उसकी बात बनी है जहाँ जायगा वहीं से सौ-पचास ले लेगा।

(८९) बारह बाट होना—तितर-बितर करना— मँथरा ने सब कुछ बारह बाट कर दिया।

(९०) बाल की खाल निकालना। बहुत खोद-विनोद करना— तुम व्यर्थ बाल की खाल निकाला करते हो।

(९१) बावन तोला पाव रत्ती। बिलकुल ठीक—उसकी बात बावन तोला पाव रत्ती सच है।

(९२) पौ बारह होना—खूब लाभ होना—आजकल तो आपके पौ बारह हैं।

(९३) पानी-पानी होना	—बहुत लज्जित होना—	मेरे सामने आते ही वह पानी-पानी हो गया।
(९४) पानी के मोल	—बहुत सस्ता—	मुद्रण यंत्र के प्रताप से आजकल पुस्तकें पानी के मोल हो गई हैं।
(९५) राह लेना	—चल देना—	तुम अपनी राह लो- बातें न करो।
(९६) रफूचक्कर होना	—चल देना—	मोहन खाकर रफूचक्कर हो गया।
(९७) सावन की हरियाली सूझना।	सदा एक सा दिखाई देना।	आपको सावन की हरियाली ही सूझती है।
(९८) दिन फिरना	—भाग्योदय होना—	अच्छा, वेचारे का दिन तो फिरा।
(९९) दिल दुखाना	—कष्ट पहुँचाना—	क्यों ऐसी बात कहकर उसका दिल दुखाते हो।

प्रश्न

(१) निम्नलिखित शब्दों में दी हुई क्रियाओं के अर्थों का भेद अपने बनाये वाक्यों में प्रयोग करके स्पष्ट करो :—

(क) हाथ—मारना, देना, पकड़ना।

(ख) माल—उड़ाना, उड़ा ले जाना, उड़ा लेना।

(ग) मार—खाना, खा जाना, खिला देना।

(घ) कपड़ा—धोना धुलाना, धुला देना।

(ङ) बात—चलाना, बनना, बिगाड़ना, देना, रखना।

(च) दिन—काटना, फिरना, बिताना, दहाड़े लूट पड़ना।

(२) निम्नलिखित वाक्यों में जो मुहाविरें प्रयुक्त हुए हैं उनका अर्थ समझाओ :—

(i) लिखते-लिखते सिर चकराने लगा। (ii) वह बैठा दिन काट रहा है। (iii) चोर सब कपड़ा-लत्ता लेकर नौ दो ग्यारह हो गया। (iv) शिकारी को देखते ही लोमड़ी चंपत हो गई। (v) बिल्ली को देखते ही चूहे की आँखों तले अँधेरा छा गया, पाँव तले की जमीन निकल गई, होश हवास उड़ गये।

२—लोकोक्तियाँ

'लोकोक्ति' का अर्थ है 'जनता में कही जाने वाली उक्ति' ऐसा बँधा हुआ वाक्य, जो बोलचाल में अधिक आता है और जिसमें अनुभव की बातें प्रायः अलंकृत भाषा में कही गई हों, उसे 'लोकोक्ति' या 'कहावत' कहते हैं। मुहाविरे वाक्य के अंग होते हैं परन्तु 'लोकोक्तियाँ' एक स्वतंत्र वाक्य होती हैं जो अवसर पर कही जाती हैं। अपनी बात को ज़ोरदार बनाने, अपनी सचाई सिद्ध करने, किसी बहाने से किसी अन्य व्यक्ति को शिक्षा या उपालंभ देने तथा किसी को सावधान करने के अभिप्राय से लोकोक्तियों का प्रयोग किया जाता है। इसके प्रयोग से वाक्य रोचक हो जाता है और कथन में नवीनता आ जाती है। नीचे कुछ लोकोक्तियाँ आशय और प्रयोग सहित लिखी जाती हैं :—

(१) नौ नगद न तेरह उधार	नक़द का थोड़ा, उधार के अधिक मिलने से अच्छा होता है।

प्रयोग—किसी दूकानदार ने अपने ग्राहक से कहा कि भाई, मैं उधार माल नहीं बेचता। इस वस्तु का दाम मुझे आज ही दे दो, चाहे दो पैसे कम ही मिले। क्योंकि कहावत है "नौ नगद न तेरह उधार"।

(२) साँच को आँच नहीं — सच बोलने वाला निर्भय रहता है।

प्रयोग—रामदास नाम का लड़का एक दिन किसी कारणवश स्कूल से ग़ैर हाज़िर रहा। दूसरे दिन जब और लड़कों ने पूछा कि तुम अपने ग़ैर हाज़िरी का कारण क्या बताओगे तब उसने उत्तर दिया कि जो बात सच होगी वही कहूँगा क्योंकि 'साँच को आँच नहीं'।

(३) होनहार बिरवान के, होत चीकने पात — होनहार के लक्षण प्रारंभ ही से अच्छे प्रतीत होते हैं।

प्रयोग—ईश्वरचंद विद्यासागर की बुद्धि, कार्यपटुता और आचार-व्यवहार देखकर अध्यापकगण प्रसन्न होते थे तथा कहा करते थे कि यह लड़का किसी दिन देश में ख्याति पैदा करेगा क्योंकि "होनहार बिरवान के, होत चीकने पात"।

(४) पर निंदा सम अघ न गरिंसा — दूसरों की निंदा महान पाप है।

प्रयोग—कल्लू को दूसरों की निंदा करते हुए देखकर लल्लू ने कहा 'तुम्हारी यह आदत खराब है' क्योंकि कहा गया है कि "पर निंदा सम अघ न गरिंसा"

(५) दाल-भात में मूसर चंद — दो में तीसरे का अढंगा डालना।

प्रयोग—दो संबंधी परस्पर परामर्श कर रहे थे कि एक तीसरा व्यक्ति आकर छेड़-छाड़ करने लगा। इतने में एक व्यक्ति ने कहा कि भाई, तुम 'दाल-भात में मूसर-चंद क्यों बन बैठे'।

(६) कंगाली में आटा गीला — आपत्ति पर आपत्ति का आना

प्रयोग—एक दीन विद्यार्थी ने कहीं से माँग-जाँच कर कुछ पुस्तकें एकत्र कीं किंतु दशहरे की छुट्टी में जब वह घर चला गया था, सारी पुस्तकें दीमकों की आरामगाह बन गईं। लौटने पर वह पछताने लगा कि हाय! 'कंगाली में आटा गीला' हो गया।

(७) एक पंथ दो काज — किसी एक कार्य के साथ दूसरा काम होना।

प्रयोग—राम बालक ने शिव बालक से कहा कि मित्र, आओ चलें इस बार काशी में ग्रहण स्नान कर आवें। इससे 'एक पंथ दो काज' की कहावत चरितार्थ होगी। स्नान के साथ काशी की सैर भी हो जायगी।

(८) नाचै न आव आँगन टेढ़ — काम करने की विधि न आवे उलटा काम ही में दोष लगाना।

प्रयोग—एक लड़के से भद्दा और खराब लिखने का कारण 'कलम की खराबी' सुन कर गुरु जी ने कहा, ठीक है 'नाचै न आवे आँगन टेढ़'।

(६) चादर देख कर पाँव फैलाना। — सामर्थ्य के अनुसार व्यय करना।

प्रयोग—एक आदमी की आय बहुत थोड़ी थी पर उसका खर्च अधिक था। यह देखकर उसके जमींदार ने कहा 'चादर देखकर पाँव फैलाना' ठीक होता है।

(१०) का वर्षा जब कृषी सुखाने — अवसर का काम अच्छा होता है।

प्रयोग—एक किसान का खेत बेदखल हो रहा था, वह दौड़ा-दौड़ा महाजन के पास गया। आप मुझे ५०) रुपये दे दीजिए, नहीं तो, मेरा खेत बकाया लगान में बेदखल हो जाना चाहता है। महाजन ने कहा कि आज तो मंगल का दिन है, रुपये नहीं दे सकता, कल बुधवार को आ जाओ, मैं ५०) नहीं १००) दे दूँगा। किसान ने कहा—

"का वर्षा जब कृषी सुखाने"।

अब कुछ लोकोक्तियाँ भावार्थ सहित नीचे लिखी जाती हैं तुम उनका प्रयोग बतलाये हुए ढंग से वाक्यों में करो :—

(११) अटका बनिया दे उधार — दबे आदमी को सब कुछ सहना पड़ता है।

(१२) अपना सो अपना, बाकी थाली का ढकना। — दूसरों की अपेक्षा अपने की अधिक चाह होती है।

(१३) अपनी ढेढ़र न निहारे, आन की फूली। — अपने बड़े ऐब को न देखकर दूसरों के छोटे ऐब पर हँसना।

(१४)	आँख का अंधा गाँठ का पूरा।	मूर्ख और धनी होना।
(१५)	आगे नाथ न पीछे पगहा	निरंकुश और स्वतंत्र होना।
(१६)	आम के आम गुठली के दाम।	दोहरा लाभ।
(१७)	आधा तीतर आधा बटेर	गड़बड़ हो जाना।
(१८)	उलटा चोर कोतवाल डाँटै।	अपराध करके निरपराध को डाँटना।
(१९)	उंगली पकड़कर अंगूठा पकड़ना।	थोड़ा सा सहारा मिलने पर सिर पड़ना।
(२०)	ऊधो का लेना न माधो का देना।	कोई बखेड़ा नहीं।
(२१)	ओखली में सिर दिया तो मूसरों का क्या डर।	कार्य करने पर तैयार हो गया तो विघ्नों का क्या भय।
(२२)	कर्त्ता उस्ताद न कर्त्ता शार्गिद।	प्रत्येक कार्य अभ्यास से अच्छा होता है।
(२३)	कागज के घोड़े दौड़ते हैं	लिखित कार्यवाही होती है।
(२४)	काल के हाथ कमान, बूढ़ा बचे न ज्वान।	मौत सबको मारती है।
(२५)	काया बड़ी की माया।	धन से शरीर की रक्षा करनी चाहिए।
(२६)	काम जो आव कामरी का ले करै कमाँच।	मामूली चीज से काम चले तो कीमती चीज की जरूरत नहीं।

(२७) कै हंसा मोती चुगै कै भूखों मरि जाय।	प्रतिष्ठित पुरुष प्रतिष्ठा के साथ अपना जीवन व्यतीत करते हैं।
(२८) खाँड खनै जो और को ताको कूप तयार।	जो दूसरों की थोड़ी हानि चाहता है उसकी बड़ी हानि हो जाती है।
(२९) घर न बार मियाँ मुहल्ले-दार।	दरिद्र का शेखी करना।
(३०) चिराग तले अँघेरा	अपना ऐब नहीं दीखता।
(३१) जिसकी लाठी उसकी भैंस।	जबरदस्त का सब कुछ।
(३२) धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का।	किसी अर्थ का नहीं।
(३३) नौ की लकड़ी नब्बे खर्च	जरा सी बात के लिए अधिक बनावट करना।
(३४) पंच कहैं बिल्ली सो बिल्ली	पंचों का असत्य भी सत्य होता है।
(३५) फिर पछिताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत।	अवसर चूकने पर पछताना व्यर्थ है।
(३६) बड़े मियाँ तो बड़े मियाँ छोटे मियाँ सुभानअल्ला	छोटे बड़े सब बराबर हैं।
(३७) भूखा बंगाली भात-भात	स्वार्थी अपनी धुन में मस्त।
(३८) मान न मान मैं तेरा मेहमान	बिन पूछे-ताछे मालिक बनना।

(३९) मन चंगा-कठौती गंगा	श्रद्धा से सब कुछ होता है।
(४०) खूँटा क बल बछवा नाचै	भय से कार्य होता है।
(४१) शौकीन बुढ़िया चटाई का लहँगा	अयोग्य सजावट।
(४२) साँची बात सदुल्ला कहैं सब के चित्त से उतरा रहैं।	सच कहने वाले से सब अप्रसन्न रहते हैं।
(४३) सिर मुड़ाते ही ओले पड़े	कार्यारंभ करते ही विघ्न पड़ा।
(४४) सींग कटाकर बछड़ों में मिलना	बुड्ढा होने पर भी युवक बनना।
(४५) हाथ कंगन को आरसी क्या	प्रत्यक्ष के लिए प्रमाण की आवश्यकता नहीं।
(४६) हाड़ रहेंगे तो मांस हो रहेंगे	बचा रहेगा तो मोटा हो जायगा।
(४७) हिम्मते मरदां मद्दे खुदा	साहसी की खुदा मदद करता है।
(४८) हाड़ो थके व्यवहारो थके	शारीरिक और बुद्धिबल जाता रहा।
(४९) हींग न हरदा जेवैं बरदा	अच्छा खाना खाना चाहिए।
(५०) हाथी के पैर में सब का पैर	बड़ों के साथ में सब की गुजर है।

प्रश्न

(१) मुहाविरे और लोकोक्तियों में क्या भेद है ?

(२) लोकोक्तियों का प्रयोग कैसे अवसर पर किया जाता है ?

(३) निम्नांकित लोकोक्तियों का आशय बताओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो:—

(क) चार दिना की चाँदनी फिर अँधियारा पाख।
(ख) छछूंदर के शिर पर चमेली का तेल।
(ग) जाके पाँव न फटी बेवाई। सो क्या जाने पीर पराई।
(घ) नादान है जो दोस्त वह दुस्मन है जान की।
(ङ) नंगा खुदा से बंगा।
(च) बैल न कूदा कूदी गोन।
(छ) भैंस के आगे बीना बाजै, भैंस बैठि पगुराय।
(ज) सीधी अंगुरिन घी जम्यौ, क्यों हू निकसत हानि।
(झ) मन मोदक नहिं भूख बुताई।
(ञ) हँसब ठठाइ फुलाउब गालू।
(ट) देत हिमायत की गयी, ऐराकी पर लात।
(ठ) कीन्हेसि सब जग बारह-बाटा।
(ड) मुए करै क्या सुधा-तड़ागा।
(ढ) कौन किसी के आवै जावै दाना-पानी लावै।
(ण) अपने गाँव का जोगड़ा आन गाँव का सिद्ध।
(त) बारह बरस दिल्ली रहे पर भाड़ ही झोंका किये।

(क) थोड़े ही दिन का सुख है। (ख) अयोग्य के हाथ अच्छी वस्तु लगना। (ग) जिस पर पड़ती है वही जानता है। (घ) मूर्ख मित्र अच्छा नहीं विद्वान शत्रु अच्छा है। (ङ) नंगा निर्भय रहता है। (च) दायित्व वाले को नहीं उसके संबंध ही को बुरा लगा। (छ) जो जिसके गुण को नहीं जानता वह उसका आदर नहीं करता। (ज) बिल्कुल सिधाई से काम नहीं चलता। (झ) कार्य करने से फल प्राप्त होता है। (ञ) एक साथ दो विरुद्ध काम नहीं हो सकते। (ट) किसी बड़े के सहारे पर अपने से बड़ों से लड़ बैठना। (ठ) सब बिगाड़ दिया। (ड) अवसर का काम ठीक होता है। (ढ) अन्न जल प्रबल

है। (ख) थोड़ी विद्या जानने वाला दूसरे गाँव में अधिक मान पाता है। (त) अच्छे स्थान पर रह कर कुछ न सीखना।

४. निम्नलिखित आशय प्रकट करने वाली कहावतें उद्धृत करो :—

(क) देश के अनुसार भेष रखना चाहिए।
(ख) हरि नाम लेने आये थे परन्तु माया के पचड़े में फँस गये।
(ग) मन की मिठाई खाने से भूख नहीं जाती।
(घ) स्वास्थ्य ठीक रखने से सब प्रकार का सुख भोग सकते हैं।
(ङ) यह तड़क-भड़क स्थायी नहीं।
(च) छोटे बड़े सब एक से हैं। (छ) दो के झगड़े में तीसरे का कूद पड़ना। (ज) दूसरे की निन्दा करना महान पाप है। (झ) प्रधान लोग तो बुरे हैं ही, छोटे लोग उनसे भी बुरे हैं।
(ञ) निर्गुण को चाहे जितना समझाओ वह गुण का मूल्य नहीं समझता।
(ट) अवसर चूकने पर पछताना व्यर्थ है।
(ठ) बुरा होना अच्छा, पर बदनाम होना बुरा है।
(ड) कीमती चीजों की तो परवाह नहीं, छोटी वस्तु की गहरी हिफाजत रखना।
(ढ) पंचों का असत्य भी सत्य माना जाता है।
(ण) जबरदस्ती मिहमान बनना।

चौथा अध्याय

अंतर्कथायें

बहुत से पद्य ऐसे होते हैं जिनमें किसी कथा को ओर संकेत रहता है, उन्हें अन्तर्कथायें कहते हैं। अन्तर्कथा जान लेने से पद्य का भाव स्पष्ट हो जाता है। इसलिए यहाँ पर कतिपय अन्तर्कथायें लिखी जाती हैं।

(क) वाल्मीकि नारद, घटयोनी।
निज-निज मुखन कही निज होनी॥

१. वाल्मीकि—ये भारत के आदि कवि कहलाते हैं। इन्होंने रामायण की रचना की है जो कि 'वाल्मीकि रामायण' के नाम से प्रसिद्ध है। इनका आश्रम अयोध्या और मथुरा के बीच में था। यद्यपि ये ब्राह्मण-कुल में उत्पन्न हुए थे तथापि वे किरातों के साथ रहते थे और लूट-मार करके अपने परिवार का पालन पोषण करते थे। ये जिस वन में रहते थे उसी में एक दिन सप्तर्षियों का आगमन हुआ। ये उन पर लूटने के लिए टूट पड़े। तब सप्तर्षियों ने कहा-"तू जिन लोगों के लिए यह पाप-कर्म कर रहा है, उनसे जाकर पूछ आ कि वे भी तुम्हारे दुष्कर्म के फल भोगने में हाथ बटायेंगे या नहीं।"

घर जाकर उन्होंने हरएक से प्रश्न किया परन्तु सबने कहा—"हम खाने के साथी हैं न कि पाप के।" तब उन्हें ज्ञान हुआ। वे ऋषियों के पास गये। ऋषियों ने उन्हें 'राम' 'राम' जपने का उपदेश किया। पहले ये 'राम' का

उच्चारण नहीं कर सके तब ऋषियों ने 'राम' का उलटा 'मरा' 'मरा' जपने का उपदेश किया। हजारों वर्ष 'मरा' 'मरा' जपते इनके ऊपर बालू जम गया था। जब सप्तर्षि फिर लौटे तब उन्हें 'वल्मीक' से निकलने को कहा। 'वल्मीक' से निकलने के कारण इनका नाम 'वाल्मीकि' प्रसिद्ध हुआ। सत्संग का ऐसा ही प्रभाव है।

२. नारद—एक दासी के पुत्र थे। बचपन में ये उन ब्राह्मणों की सेवा करते थे जिनके यहाँ इनकी माता सेवा-कर्म करती थी। एक दिन उन्होंने उन ब्राह्मणों का उच्छिष्टान्न खा लिया जिससे इनका चित्त शुद्ध हो गया और ये हरिगुण-गान करने लगे। ५ वर्ष की अवस्था में इन्हें मातृवियोग का कष्ट भोगना पड़ा तब ये स्वाधीन होकर उत्तर दिशा में चले गये। घूमते-घामते एक जंगल में पहुँचे। उस जंगल में एक सरोवर था, उसमें स्नान किया और वट के वृक्ष की छाया में बैठकर ये हरिगुण गाने लगे। भगवान ने हृदय में उनको दर्शन दिया परन्तु ये बहुत देर तक भगवान का दर्शन न कर सके। भगवान ने आकाशवाणी द्वारा समझाया कि तुम साधु-सेवा करो, उसीसे तुम हमारे पास आ सकते हो। इसके बाद इन्होंने शरीर छोड़ दिया।

कहते हैं कि सृष्टि-रचना के आरंभ में मरीचि आदि ऋषियों के साथ ये भी प्रकट हुए। हरिकीर्त्तन के कारण ये भगवान के पार्षद और इच्छाचारी हुए। ब्रह्मा ने अपने पुत्रों को प्रजासृष्टि करने में लगाया पर नारद ने कुछ बाधा की। जिसपर उन्होंने शाप दे दिया कि सदा तुम सब लोकों में घूमते फिरोगे। इनका स्वभाव कलहप्रिय कहा गया है।

३. घटयोनि—अगस्त मुनि का नाम है। यह मित्रावरुण के पुत्र थे। इनकी उत्पत्ति घड़े से बतलाई जाती है। इसी से इन्हें घटज, कुंभज कहते हैं।

एक बार विंध्य पर्वत ने बढ़कर सूर्य का मार्ग रोक लिया तब देवताओं की प्रार्थना पर वे उसके पास गये। उसने गुरु को आते देख प्रणाम किया। तब उन्होंने कहा कि 'जब तक मैं न लौटूँ तुम इसी प्रकार पड़े रहो'। इस कारण इनका नाम अगस्त पड़ा।

वृत्रासुर वध के अनंतर असुरगण देवताओं के भय से समुद्र में छिप गये और रात्रि में निकल कर वे ऋषियों को कष्ट देने लगे। इससे यज्ञकर्म रुक गया। तब देवताओं ने अगस्त जी से समुद्र पान करने के लिए प्रार्थना की। इनके समुद्र पान करने पर देवताओं ने असुरों को मार डाला।

(ख) गनिका अजामिल व्याध गीध गजादि खल तारे घना।

४. गनिका (गणिका)—एक वेश्या थी। उसका नाम पिंगला था। एक दिन वह सज-धज कर बैठी कि कोई 'आँख का अंधा गाँठ का पूरा' पुरुष आजाये तो उसका धन-हरण करूँ। बहुत प्रतीक्षा करने के बाद जब कोई पुरुष न आया तब वह खाट पर लेटकर विचार करने लगी कि जितनी देर तक पुरुष की प्रतीक्षा करती रही, उतनी देर तक यदि भगवान का नाम लेती तो संसार बंधन से मुक्त हो जाती। यह पवित्र विचार उसके मन में प्रबल हो गया। वह भगवान का नाम जपने लगी, अंत में मोक्ष पा गई।

५. अजामिल—एक पापी ब्राह्मण था। एक दिन जब वह कहीं बाहर गया था तब उसके घर कई अतिथि आये।

उसकी गर्भवती स्त्री ने बड़ी श्रद्धा के साथ साधुओं का सत्कार किया। साधु महात्माओं ने प्रसन्न होकर यह आशीर्वाद दिया कि तुम्हारे पुत्र उत्पन्न हो। साथ ही यह आदेश दिया कि तुम अपने पुत्र का नाम 'नारायण' रखना। अजामिल की स्त्री ने साधुओं के आदेशानुसार अपने पुत्र का नाम 'नारायण' रक्खा। अजामिल अपने पुत्र पर अधिक स्नेह रखता था। अंत समय जब यमदूत अजामिल को कष्ट देने लगे तब अजामिल ने 'नारायण', 'नारायण' पुकारा। नारायण नाम सुनकर भगवान के दूत आये और उसे उन्होंने सद्गति दी।

६. गज—क्षीरसागर के बीच त्रिकूट पर्वत पर एक सरोवर है। उसी सरोवर पर एक मत्त गज हथिनियों के साथ आकर जलक्रीड़ा करने लगा। इसी समय एक ग्राह ने आकर गज का पैर पकड़ा। गज और ग्राह में घोर युद्ध हुआ। अंत में जब गजेंद्र विवश होकर ईश्वर की स्तुति करने लगा तब गज की टेर सुनतेही विष्णु भगवान ने पहुँच कर गजेंद्र की रक्षा की और ग्राह को मारा।

७. गीध—गीध से तात्पर्य यहाँ गृद्धराज जटायु से है। यह भगवान का बड़ा भक्त था। इसने रावण के साथ घोर-युद्ध करके सीता को छुड़ा लिया था। परंतु रावण के पंख काटने पर यह भूमि पर गिर पड़ा। जब सीता को ढूंढ़ते हुए रामजी इनके स्थान पर पहुँचे और इनकी दुर्दशा देखी तब उन्होंने इनके मस्तक पर हाथ फेरा। गीध ने भगवान राम से कहा कि रावण ने सीता को हर लिया है। राम ने गृद्धराज से शरीर रखने के लिए कहा परंतु उन्होंने

इसे स्वीकार न किया। भगवान राम ने स्वयं अपने हाथ से गृद्ध की अंत्येष्टि क्रिया की और उसे निजधाम भेजा।

(ग) बलि मख जांचतही भयो, वावन तन करतार।

८. बलि—यह दैत्यराज विरोचन के पुत्र और बड़े धर्मात्मा थे। इन्होंने देवताओं को परास्त कर स्वर्ग पर अधिकार कर लिया। तब देवताओं की माता अदिति ने व्रत कर भगवान को प्रसन्न किया। विष्णु भगवान ने उन्हीं के गर्भ से वामन अवतार लिया। जिस समय वामन का यज्ञोपवीत संस्कार हुआ उस समय बलि ने यज्ञ करना आरंभ किया। इस कारण ये यज्ञशाला में पहुँचे। बलि ने इनका स्वागत किया और पूजन-पश्चात् इच्छानुसार वर माँगने को कहा। वामन जी ने अपनी कुटी के लिये तीन पग भूमि माँगी। बलि ने उसे स्वीकार कर लिया। नापते समय भगवान ने विराट रूप धारण करके दो पग में संसार नाप लिया। एक पग के बदले बलि ने अपना शरीर नपा दिया। वामन जी ने बलि को पाताल का राज दिया और स्वर्ग देवताओं को दिला दिया।

(घ) "हठ वश सब संकट सहे, गालव-नहुष नरेस"।

९. गालव मुनि—विश्वामित्र के शिष्य थे। विद्या पढ़ चुकने पर इन्होंने गुरु-दक्षिणा माँगने का हठ किया। गुरु ने आठ सौ श्यामकर्ण घोड़े माँगे। यह राजा ययाति के पास गये। राजा ने उन्हें एक कन्या दी और कहा "जो इससे एक पुत्र उत्पन्न करे उससे दो सौ श्यामकर्ण घोड़े लीजिए।" गालव मुनि क्रम से तीन राजाओं के पास जाकर ६०० घोड़े ला सके। अंत में जब कोई राजा न मिला तब छः सौ घोड़े

और उस कन्या को ले जाकर गुरु को दिया। विश्वामित्र ने उन छः सौ घोड़ों को ले लिया और उस कन्या से एक पुत्र उत्पन्न कर गालव को गुरु-दक्षिणा से मुक्त कर दिया।

१०. नहुष—वृत्रासुर को मारने से ब्रह्महत्या लगने के के कारण जब इंद्र मानसरोवर में जा छिपे तब इन्द्रासन को खाली देखकर सुरगुरु वृहस्पति ने राजा नहुष को इंद्र पद दिया। यह अयोध्या के राजा अंबरीष के पुत्र और ययाति के पिता थे। इंद्र होने पर ये इन्द्राणी पर मोहित हुए। वृहस्पति की सम्मति से इन्द्राणी ने कहला भेजा कि यदि राजा सप्तर्षियों को पालकी में जोतकर आवे तो मैं उनके पास चल सकती हूँ। नहुष ने वैसा ही किया और जल्दी के कारण वे ऋषियों से कहने लगे "सर्प, सर्प" (जल्दी चलो)। इसपर अगस्त ऋषि ने शाप दे दिया—'सर्प हो जाओ। यह स्वर्ग-भ्रष्ट हुए। राजा युधिष्ठिर द्वारा मुक्त हुए।

(ङ) परसुराम पितु आज्ञा राखी। मारी मातु लोक सब साखी॥
तनय ययातिहिं जौवन दयेऊ। पितु आज्ञा अघ, अजस न भयेऊ॥

११. परशुराम—इनके पिता का नाम जमदग्नि और माता का नाम रेणुका था। एक दिन रेणुका गंगातट पर जल लेने गई थी। बहुत देर करके लौटी। इसपर ऋषि परम कुपित हुए और अपने लड़कों से बारी बारी से माता को मारने का आदेश किया। जब सब भाइयों ने अस्वीकार कर दिया तब उन्होंने परशुराम से कहा—परशुराम ने पिता की आज्ञा का पालन किया। इस पर पिता जमदग्नि बहुत प्रसन्न हुए और उनसे वर माँगने को कहा। परशुराम ने कहा मेरी माता जीवित हो जाय। अंत में ऐसा ही हुआ।

१२. ययाति—चंद्रवंशी राजा नहुष के पुत्र थे। इनके दो स्त्रियाँ थीं। एक का नाम देवयानी, जो शुक्राचार्य की पुत्री थी और दूसरी वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा थी। देवयानी से यदु और सुवसु और शर्मिष्ठा से दुह्यु, अनु और पुरुनामक पुत्र हुए। जब शुक्राचार्य के शाप से राजा ययाति जराग्रस्त हो गये तब उन्होंने अपने पुत्र से यौवन माँगा। पर किसी ने अपनी जवानी न दी। सब से छोटे पुत्र 'पुरु' ने पिता की आज्ञा का पालन किया। इस पर प्रसन्न होकर राजा ने पुरु को राज्याधिकारी बनाया।

(च) "प्रभु सत्यकरी प्रहलाद गिरा प्रगटे नर-केहरि खंभ महा"।

१३. प्रहलाद—भगवान के परम भक्त थे। इनके पिता का नाम हिरण्यकश्यप था। हिरण्यकश्यप प्रहलाद की भक्ति और भगवान के नाम से जलता था। स्वयं 'जगदीश्वर' होने का दावा करता था। इसने प्रहलाद को बहुत समझाया कि शत्रु का नाम न लेना चाहिए। परंतु हरिभक्त प्रहलाद ने न माना। इस पर हिरण्यकश्यप ने प्रहलाद को अनेक कष्ट दिये। हाथी के नीचे दबाया, पहाड़ से गिराया, आग में जलाया, परंतु भक्त प्रहलाद अपनी टेक से तनिक न डिगे। अंत में उसने एक खंभे में बाँध, हाथ में नंगी तलवार लेकर कहा कि बता, तेरा भगवान कहाँ है। उसी समय भक्त हितकारी भगवान नरसिंह रूप धारण कर खंभे से प्रगट हुए और उन्होंने हिरण्यकश्यप को मारकर भक्त प्रहलाद की रक्षा की।

(छ) ध्रुव सगलानि जपे हरि नासू। पावा अचल अनूपम ठासू॥

१४. ध्रुव—राजा उत्तानपाद के दो स्त्रियाँ थीं। एक का नाम 'सुनीति' दूसरी का नाम 'सुरुचि' था। सुनीति से

ध्रुव और सुरुचि से उत्तम उत्पन्न हुए। राजा का छोटी रानी सुरुचि पर अधिक प्रेम था। एक दिन राजा उत्तम को गोद में लिए हुए बैठे थे कि ध्रुव भी पहुँच गये और राजा की गोद में बैठ गये। इसपर उनकी विमाता सुरुचि ने अपमान के साथ ध्रुव को वहाँ से उठा दिया। ध्रुव इस अपमान को सहन न कर सके और वन में तप करने चले गये। इनके घोर तप से विष्णु भगवान बहुत प्रसन्न हुए और उन्हें वर दिया कि—

"तुम सब लोकों और ग्रहों-नक्षत्रों के ऊपर अचल भाव से स्थित रहोगे और जिस स्थान पर तुम रहोगे वह ध्रुव लोक कहलायेगा। इसके पश्चात् ध्रुव ने घर आकर पिता से राज्य प्राप्त किया और छत्तीस हजार वर्ष राज्य करके ये ध्रुवलोक को चले गये।

(ज) "सुजन आपदन में करैं औरन के दुख दूर।
महि गो कनक दिवावहीं ग्रसे राहु ससि सूर" ॥

१५. राहु—जब देवताओं और दैत्यों ने समुद्र-मंथन किया तब समुद्र में से एक रत्न अमृत भी निकला। जब सब देवता मिलकर अमृत बाँटने लगे तब राहु भी वेष बदल कर उसमें जा मिला। चन्द्रमा और सूर्य ने इस भेद को जाकर भगवान से बतला दिया, भगवान ने चक्र से उसका सिर काट लिया। परन्तु अमृत पान करने के कारण वह मर न सका। अपना बदला चुकाने के लिए राहु कभी-कभी चन्द्रमा और सूर्य को ग्रस लिया करता है। उसी को लोग चन्द्र ग्रहण और सूर्य ग्रहण कहते हैं। ग्रहण के समय भक्तजन स्नान करते हैं। लोग सोना, गाय, भूमि आदि दान देते हैं।

६

(झ) त्रिपुरारि, त्रिलोचन, दिगवसन, विष भोजन भव-भय-हरन।

१६. त्रिपुरारि—महादेव का नाम है, पुरत्रय के नाश करने के कारण महादेव ने यह नाम पाया है।

तारक नाम का एक राक्षस था, उसके तीन पुत्र थे जिनका नाम तारकाक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्माली था। इन तीनों ने तप करके ब्रह्मा से वर पाया था कि तुम लोग तीन नगरों में रहोगे और सहस्र वर्ष के पश्चात् वे नगर आपस में मिलेंगे, उस समय बाण से जो तीनों नगरों का नाश कर सकेगा उसी के द्वारा तुम लोगों का वध होगा। मय दानव के द्वारा तीनों ने तीन नगर बनवाये। एक स्वर्ग में जहाँ कमलाक्ष वास करता था, दूसरा अन्तरिक्ष में जहाँ तारकाक्ष रहता था, तीसरा मर्त्यलोक में जहाँ विद्युन्माली रहता था। तीनों बड़े अत्याचारी थे। इनके अत्याचार से देवता घबराये। ब्रह्मा देवताओं के साथ महादेव के पास गये। ब्रह्मा के मुख से असुरों का अत्याचार सुनकर महादेव जी कुपित हो गये और उन्होंने उनके नाश का संकल्प किया।

शिव जी दिव्य रथ पर चढ़े। ब्रह्मा सारथी बने। थोड़ी दूर घोड़े पर पुनः बैल पर चढ़ कर उन्होंने असुरों के नगर देखे। महादेव जी पाशुपत अस्त्र चढ़ा कर तीनों नगरों के मिलने की प्रतीक्षा करने लगे। जब वे पुर मिलने लगे उसी समय महादेव ने बाण छोड़ कर उन तीनों नगरों को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। पुरवासी चिल्लाने लगे। महादेव ने इन सभी को जलाकर पश्चिम समुद्र में फेंक दिया। देवता निष्कण्टक हो गये।

(ञ) "नीलकण्ठ भे खाय विष, शिव छवि कहत अनन्त।"

१७. नीलकण्ठ—महादेव का नाम है। कहते हैं कि जब देवता और दैत्यों ने समुद्र मन्थन किया तब उसमें से पहले

विष निकला। उसे दोनों—सुरासुरों—में से कोई भी पीने के लिए तैयार न हुआ। उस समय शिवजी ने विष पान किया और उसे कण्ठ ही में रख लिया। इसी कारण उनका कंठ नीला पड़ गया। तब से शिवजी को नीलकंठ कहते हैं।

(ट) हरिश्चन्द्र से दानी राजा नीच को पानी भरै।

१८. हरिश्चन्द्र—अयोध्यानरेश हरिश्चन्द्र प्रख्यात दानी और धर्मात्मा हो गये हैं। इंद्र ने द्वेष से विश्वामित्र को परीक्षा के लिए उभाड़ा। वे स्वप्न में इनसे सारी पृथ्वी दान लेकर प्रातःकाल दक्षिणा लेने पहुँचे। दक्षिणा चुकाने के लिए तीन लोक से न्यारी काशी में राजा हरिश्चन्द्र, अपनी स्त्री और पुत्र के सहित आये। अपनी स्त्री शैव्या को बेंचकर आधी दक्षिणा चुकाई। राजा ने अपने को डोम के हाथ बेचकर सारी दक्षिणा दे दी। पुत्र रोहिताश्व के मरने पर उनकी स्त्री शव को ले, श्मशान पर आई। अपने स्त्री पुत्र को पहचान कर भी राजा हरिश्चन्द्र ने बिना कर लिए जलाने देना जब स्वीकार नहीं किया तब रानी ने अपनी साड़ी फाड़ कर, कर देना चाहा। इस पर भगवान प्रगट हो गये और उन लोगों को अपने धाम ले गये।

(ठ) मित्र परोच्छहु में किये, सरनागत प्रतिपाल।
निरमल जस सिवि सों लियो, तुम या काल कराल॥

१९. शिवि—एक बड़े दानी राजा हो गये हैं। एक बार जब यह यज्ञ कर रहे थे तब परीक्षा लेने के लिए इंद्र 'बाज' बने और अग्नि को 'कपोत' बनाया। कपोत भागते हुए राजा की गोद में आ बैठा। बाज ने कहा कि महाराज

(क) त्रिपुरारि, त्रिलोचन, दिगवसन, विष भोजन भव-भय-हरन।

१६. त्रिपुरारि—महादेव का नाम है, पुरत्रय के नाश करने के कारण महादेव ने यह नाम पाया है।

तारक नाम का एक राक्षस था, उसके तीन पुत्र थे जिनका नाम तारकाक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्माली था। इन तीनों ने तप करके ब्रह्मा से वर पाया था कि तुम लोग तीन नगरों में रहोगे और सहस्र वर्ष के पश्चात् वे नगर आपस में मिलेंगे, उस समय बाण से जो तीनों नगरों का नाश कर सकेगा उसी के द्वारा तुम लोगों का वध होगा। मय दानव के द्वारा तीनों ने तीन नगर बनवाये। एक स्वर्ग में जहाँ कमलाक्ष वास करता था, दूसरा अन्तरिक्ष में जहाँ तारकाक्ष रहता था, तीसरा मर्त्यलोक में जहाँ विद्युन्माली रहता था। तीनों बड़े अत्याचारी थे। इनके अत्याचार से देवता घबराये। ब्रह्मा देवताओं के साथ महादेव के पास गये। ब्रह्मा के मुख से असुरों का अत्याचार सुनकर महादेव जी कुपित हो गये और उन्होंने उनके नाश का संकल्प किया।

शिव जी दिव्य रथ पर चढ़े। ब्रह्मा सारथी बने। थोड़ी दूर घोड़े पर पुनः बैल पर चढ़ कर उन्होंने असुरों के नगर देखे। महादेव जी पाशुपत अस्त्र चढ़ा कर तीनों नगरों के मिलने की प्रतीक्षा करने लगे। जब वे पुर मिलने लगे उसी समय महादेव ने बाण छोड़ कर उन तीनों नगरों को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। पुरवासी चिल्लाने लगे। महादेव ने इन सभी को जलाकर पश्चिम समुद्र में फेंक दिया। देवता निष्कण्टक हो गये।

(ञ) "नीलकण्ठ भे खाय विष, शिव छवि कहत अनन्त।"

१७. नीलकण्ठ—महादेव का नाम है। कहते हैं कि जब देवता और दैत्यों ने समुद्र मन्थन किया तब उसमें से पहले

विष निकला। उसे दोनों—सुरासुरों—में से कोई भी पीने के लिए तैयार न हुआ। उस समय शिवजी ने विष पान किया और उसे कण्ठ ही में रख लिया। इसी कारण उनका कंठ नीला पड़ गया। तब से शिवजी को नीलकंठ कहते हैं।

(ट) हरिश्चन्द्र से दानी राजा नीच को पानी भरै।

१८. हरिश्चन्द्र—अयोध्यानरेश हरिश्चन्द्र प्रख्यात दानी और धर्मात्मा हो गये हैं। इंद्र ने द्वेष से विश्वामित्र को परीक्षा के लिए उभाड़ा। वे स्वप्न में इनसे सारी पृथ्वी दान लेकर प्रातःकाल दक्षिणा लेने पहुँचे। दक्षिणा चुकाने के लिए तीन लोक से न्यारी काशी में राजा हरिश्चन्द्र, अपनी स्त्री और पुत्र के सहित आये। अपनी स्त्री शैव्या को बेंचकर आधी दक्षिणा चुकाई। राजा ने अपने को डोम के हाथ बेचकर सारी दक्षिणा दे दी। पुत्र रोहिताश्व के मरने पर उनकी स्त्री शव को ले, श्मशान पर आई। अपने स्त्री पुत्र को पहचान कर भी राजा हरिश्चन्द्र ने बिना कर लिए जलाने देना जब स्वीकार नहीं किया तब रानी ने अपनी साड़ी फाड़ कर, कर देना चाहा। इस पर भगवान प्रगट हो गये और उन लोगों को अपने धाम ले गये।

(ठ) मित्र परोच्छहु में किये, सरनागत प्रतिपाल।
निरमल जस सिवि सों लियो, तुम या काल कराल॥

१९. शिवि—एक बड़े दानी राजा हो गये हैं। एक बार जब यह यज्ञ कर रहे थे तब परीक्षा लेने के लिए इंद्र 'बाज' बने और अग्नि को 'कपोत' बनाया। कपोत भागते हुए राजा की गोद में आ बैठा। बाज ने कहा कि महाराज

कपोत मेरा आहार है और मैं भूखा हूँ। इसलिए इसे छोड़ दीजिए। राजा ने कहा—"शरणागत की रक्षा करना मेरा परम धर्म है"। अतः मैं कपोत को नहीं दे सकता। इसके तौल के बराबर तुम मेरे शरीर से मांस ले सकते हो। बाज ने इसे स्वीकार किया। तुला के एक पलरे पर कपोत बिठाया गया और दूसरे पलरे पर राजा अपने शरीर का मांस काटकर चढ़ाने लगे। जब उन्होंने सब शरीर का मांस काट-काट कर चढ़ा दिया फिर भी कपोत के बराबर न हुआ। तब राजा ने ज्योंहीं गला काटने के लिए खड्ग उठाया त्योंही विष्णु भगवान ने राजा का हाथ पकड़ कर अपने लोक को भेज दिया।

(उ) क्षुधार्त्त रन्तिदेव ने दिया करस्थ थाल भी।
तथा दधीचि ने दिया परार्थ अस्थि जाल भी॥
उशीनर क्षितीश ने स्व मांस दान भी किया।
सहर्ष वीर कर्ण ने शरीर-चर्म भी दिया॥

२०. रन्तिदेव—यह राजा बड़ा दानी था। सब कुछ दान में दे डालने के पश्चात् एक समय उसे ४८ दिन तक जल पीने को भी न मिला। ४९ वें दिन कुछ प्रबन्ध हो जाने पर वे भोजन करने की तयारी कर रहे थे उस समय क्रम से एक ब्राह्मण, शूद्र तथा एक अतिथि एक कुत्ता लिए आ पहुँचे। भोजन का कुल सामान इन्हीं लोगों के आतिथ्य में समाप्त हो गया, केवल जल बचा हुआ था, जिसे पीने के लिए उन्होंने हाथ उठाया ही था कि एक चाण्डाल आगया और पीने के लिए जल माँगने लगा। राजा ने वह जल भी उसे दे दिया। अन्त में भगवान ने प्रसन्न होकर उन्हें मोक्ष दिया।

२१. दधीचि—अयोध्या के राजा थे। बड़े दानी थे। एक समय इंद्र और वृत्रासुर में लड़ाई छिड़ गई। जब इंद्र उसे न हरा सके तब वे ब्रह्मा के पास गये। ब्रह्मा ने कहा कि यदि राजा दधीचि की हड्डी से धनुष बनाया जावे तो वह राक्षस मारा जा सकता है। यह सुनकर इंद्र ब्राह्मण रूप में राजा के यहाँ गया और उन्हें वचन-बद्ध करा लिया। राजा ने प्रसन्नतापूर्वक अपनी हड्डी देकर शरीर त्याग दिया। तब इंद्र ने उनकी हड्डी से वज्र बनाया और युद्ध में वृत्रासुर को मारा।

२२. उशीनर—यह चंद्रवंशी राजा और शिवि के पिता थे। यह भी बड़े परोपकारी और दानी हो चुके हैं।

२३. कर्ण—यह कुंती के बड़े पुत्र थे। यह कुंती के कन्याकाल में सूर्य से उत्पन्न हुए थे। लोक-लज्जा वश कुंती ने इन्हें एक मंजूषा (संदूक) में रखकर गंगा में बहा दिया। दुर्योधन के सारथी अधिरथ ने इनका पालन-पोषण किया था इसीसे ये 'सारथी-सुत' भी कहलाते हैं। बड़ा होने पर दुर्योधन का मित्र हुआ। यह अर्जुन से भी वीर था। कर्ण बड़ा दानी था। कहा जाता है कि यह ब्राह्मणों को नित्य उनकी इच्छा के अनुसार दान देता था। महाभारत में यह अर्जुन के हाथ से मारा गया था।

(ढ़) "ताड़का मारि, सुबाहुसंहारि के गौतम नारि कै पातक टरे।"

२४. ताड़का—सुंदनाम राक्षस की स्त्री थी। जब महामुनि विश्वामित्र जी यज्ञ करना आरंभ करते थे तब यह पहुँच कर उसे विध्वंस कर दिया करती थी। तब मुनि जी बहुत हैरान हो गये तब अयोध्या के राजा

दशरथ के पास गये और राम-लखन को लाये और उन्हें सारी विद्या सिखा दी। एक दिन राम ने कहा कि मुनि जी! आप निर्भय यज्ञ करिए। जब विश्वामित्र ने यज्ञ आरंभ किया तब ताड़का आई और यज्ञ विध्वंस करने लगी। रामचन्द्र ने ताड़का को मार कर मुनि के यज्ञ की रक्षा की।

२५. सुबाहु—यह भी राक्षस था। यह भी विश्वामित्र के यज्ञ में विघ्न डालता था। भगवान राम ने इसे भी मारा।

२६. गौतमनारि—अहिल्या थी। एक समय ब्रह्मा ने अपनी इच्छा से एक कन्या उत्पन्न की। वह परम सुंदरी थी। ब्रह्मा ने उसे गौतम को सौंप दिया। कुछ दिनों के पश्चात् जब ब्रह्मा ने कन्या मांगी तब मुनि ने उसे ज्यों का त्यों सौंप दिया। इस पर ब्रह्मा ने प्रसन्न हो कर उस कन्या का विवाह उन्हीं से कर दिया। एक दिन इंद्र छल करके गौतम का भेष बनाकर अहिल्या के पास गये। जब गौतम गंगा स्नान कर के लौटे और देर से द्वार खुला तब उन्होंने अपने तपोबल से इन्द्र का छल समझ कर शाप दे दिया कि हे इंद्र, तुम्हारे शरीर में सहस्र भग हों और अहिल्या को शाप दिया कि तुम शिला हो जा। जब ये दोनों बहुत घबराये तब ऋषि ने कहा कि हे इंद्र! जिस समय तुम शिव धनुष के टूटने का शब्द सुनोगे उस समय तुम्हारे सहस्र आँखें हो जायँगी और अहिल्या से कहा कि भगवान राम के चरणरज के स्पर्श से तुम्हारा उद्धार होगा।

जब विश्वामित्र के साथ भगवान राम जनकपुर में धनुषयज्ञ में सम्मिलित होने के लिए जा रहे थे तब मार्ग में 'शिला' को देख कर राम ने उसका सब समाचार ज्ञात किया

और अपने चरण-रज के स्पर्श से उसका उद्धार किया। वह बहुत स्तुति करके अपने पति लोक को गई।

(ख) "पय प्यावत पूतना हनी, छपि बालि हन्यो बल दानि।
सूपनखा, ताड़का निपाती, 'सूर' श्याम यह बानि॥"

२७. पूतना—एक राक्षसी थी। इसी को कंस ने कृष्ण को मारने के लिए गोकुल भेजा था। यह माया से सुंदर मूर्ति बनाकर नंद के घर गई और कृष्ण को गोदी में लेकर विषलिप्त स्तन उनको पिलाने लगी। श्रीकृष्ण स्तनपान करने लगे। परंतु स्तनपान करने से राक्षसी के स्तनों में भयंकर पीड़ा होने लगी। उसने अपना भयंकर रूप प्रकट किया। स्तन छुड़ाने का उसने बहुत उद्योग किया परंतु वह छूटा नहीं, वेदना बढ़ती ही गई। अंत में पूतना घोर गर्जना करती हुई सदा के लिये सो गई। श्रीकृष्ण जी उसकी देह पर चढ़कर खेलने लगे।

२८. बालि—किष्किंधापुरी का वानरों का राजा था। इसके भाई का नाम सुग्रीव था। दोनों भाई बड़े वीर थे। एक दिन एक मायावी दानव आकर ललकारने लगा। बालि ने उसका पीछा किया। सुग्रीव भी साथ साथ गया। दानव एक मार्ग से पाताल चला गया। बालि ने सुग्रीव से कहा कि तुम यहाँ १५ दिन तक मेरी प्रतीक्षा करना, मैं पाताल जा रहा हूँ। बालि के आने में देर हुई तब नगर के लोगों ने सुग्रीव को राजा बनाया।

कुछ दिनों के बाद जब बालि दानव को मारकर स्वदेश लौटा तब राज्यासन पर सुग्रीव को बैठा देख बहुत कुपित हुआ और वह उसे मारने की चेष्टा करने लगा। सुग्रीव प्राण बचाने

के लिए भागा। देश-देशांतर घूमा पर कहीं शरण न मिली। अंत में किष्किंधा के समीप ही वह एक पहाड़ी पर रहने लगा क्योंकि वहाँ शाप के भय से बालि नहीं जा सकता था।

जब भगवान राम से हनुमान द्वारा सुग्रीव से मित्रता हो गई तब राम ने एक वृक्ष की ओट से इसे मार दिया। सुग्रीव को राजा बनाया और उसके पुत्र अंगद को युवराज।

२९. सूपनखा—यह रावण की बहिन थी। बहुत सुंदर रूप बनाकर यह राम के पास गई और इसने कहा—'तो सम पुरुष न मो सम नारी। यह सँजोग विधि रचेउ बिचारी।' भगवान राम ने उसे बहुत समझाया-बुझाया परंतु उसने एक न माना। अंत में महा कुपित होकर उसने भयंकर रूप दिखाकर भय देना चाहा तब राम के संकेत पर लक्ष्मणजी ने उसके नाक-कान काट लिये। वह विरूप हो रोती-चिल्लाती भाग गई।

(त) "वकासुर की चोंच फारी, सबै दृश्य देखाइ।"

३०. बकासुर—एक असुर था। श्रीकृष्ण के हाथ से मारा गया। श्रीकृष्ण गोप बालकों के साथ गौ चराने के लिए बन गये थे वहाँ प्यासी गायों को जल पिलाने के लिए एक सरोवर पर गए। उसी समय बकरूपधारी असुर श्रीकृष्ण को निगल गया। अनंतर श्रीकृष्ण के तेज से व्यथित होकर उसने श्रीकृष्ण को उगल दिया। तदुपरांत श्रीकृष्ण जी ने उसकी चोंच पकड़ कर उसे मार डाला।

(थ) "अघासुर मुख पैठि निकसे, बाल-बच्छ छुड़ाइ।"

३१. अघासुर—यह एक राक्षस था। कंस ने इसे श्रीकृष्ण को मारने के लिए भेजा था। यह बहुत बड़ा अजगर

का रूप धर कर उस मार्ग पर आ पड़ा जिस रास्ते से श्रीकृष्ण ग्वाल बालकों के साथ गाय चराने जाया करते थे। इस राक्षस ने एक होंठ आकाश में, दूसरा भूमि पर बढ़ा रक्खा था। खेलते-खेलते ग्वाल-बाल उधर ही आ निकले और उसके मुँहमें घुस गये। जब श्रीकृष्ण को यह ज्ञात हुआ तब वह भी उसके मुँह में घुस गये और भीतर जाकर अपना शरीर इतना बढ़ाया कि अघासुर मर गया। सब ग्वाल-बाल छूट गये।

(द) "यमल अर्जुन तोरि तारे, हृदय प्रेम बढ़ाई।"

३२. यमलार्जुन—यक्षराज कुबेर के दो पुत्र थे। एक का नाम नलकुबेर दूसरे का मणिग्रीव था। एक समय दोनों भाई मदोन्मत्त होकर कैलास के पास गंगातीर के तपोवन में स्त्रियों के साथ क्रीड़ा करते थे। यह देखकर नारद ने कुपित होकर उन्हें शाप दे दिया। नारद के शाप से दोनों भाई गोकुल में उत्पन्न हुए और यमलार्जुन वृक्ष हुए।

एक बार यशोदा रानी ने श्रीकृष्णजी को ऊखल में बाँध दिया। श्रीकृष्ण ने उसे घसीट और दोनों वृक्षों के मध्य अड़ाकर ऐसा झटका दिया कि वृक्ष टूट पड़े और उनमें से दो सुन्दर पुरुष निकले। श्रीकृष्णजी की स्तुति करके वे स्वर्ग को चले गये। इस प्रकार श्रीकृष्णजी ने यमलार्जुन का उद्धार किया।

(ध) "करत विवस्त्र द्रुपद—तनय को 'सरन' सब्द कहि आयो।"

३३. द्रुपदसुता—यह पांचालराज द्रुपद की बेटी थी। यह काले वर्ण की थी इसीसे इसे 'कृष्णा' भी कहते हैं। स्वयंवर में लक्ष्य भेद करके अर्जुन ने इसे पाया था परंतु

इसका ब्याह पाँचो भाइयों के साथ हुआ था। यह अपने पतियों के साथ बन-बन घूमती थी। अज्ञातवास के समय इसने सैरिंध्री (दासी) का काम किया था। दुःशासन और दुर्योधन ने भरी सभा में इसका अपमान किया था। जब दुःशासन ने इसका चीर खींचकर इसे नंगी करना चाहा तब इसने श्रीकृष्ण को पुकारा। उस समय भगवान कृष्ण ने चीर बढ़ाकर इसकी लज्जा रखी।

(न) "भयो प्रसाद जु अंबरीष पै दुरबासा को कोप निवारयो।"

३४. अंबरीष—यह सूर्यवंशीय राजा थे। इनकी राजधानी अयोध्या-नगरी थी। यह विष्णु के बड़े भक्त थे। एकादशी व्रत रखते थे। द्वादशी में ब्राह्मणों को भोजन कराकर पारण करते थे। एक समय इन्होंने दुर्वासा ऋषि को निमंत्रित किया। वह गंगास्नान करने चले गये। द्वादशी थोड़ी देर थी, इस कारण ब्राह्मण की आज्ञा से इन्होंने भगवान का चरणामृत पान कर लिया। जब दुर्वासा ऋषि आये तब बहुत कुपित हुए। उन्होंने जटा का एक बाल भूमि पर पटका जिससे एक राक्षसी उत्पन्न हुई। वह राजा को मारने चली। राजा मूर्छित हो भूमि पर गिर पड़े। विष्णु भगवान का सुदर्शन चक्र उस राक्षसी को मारकर ऋषि के पीछे पड़ा। वह भगे। भागते भागते विष्णु की शरण में गये। विष्णु भगवान ने कहा कि राजा की शरण में जाने से तुम्हारी रक्षा हो सकती है। अंत में दुर्वासा ऋषि राजा की शरण में आये। राजा ने चक्र का निवारण किया और ऋषि को भोजन कराकर विदा किया

(प) "ग्वालन हेतु धरयो गोवरधन प्रगट इन्द्र को गर्व प्रहारयो।"

३५.—गिरिधारी—गोकुल में सब ग्वाल-बाल प्रति वर्ष

गोवर्धन की पूजा किया करते थे। एक बार श्रीकृष्ण जी ने उन्हें समझाया कि इन्द्र की पूजा व्यर्थ है। तुम लोग गोवर्धन की पूजा करो जो सब तरह से भला करनेवाला है। सब लोगों ने कृष्ण की बात मान ली। इस पर इन्द्र बहुत बिगड़े। इन्होंने मेघों को बुला कर ब्रज में घोर वृष्टि करने की आज्ञा दी। मेघों ने ब्रज में प्रलयकाल उपस्थित कर दिया। सात दिन-रात मूसलाधार वृष्टि होती रही। उस समय श्रीकृष्ण भगवान ने गोवर्धन पर्वत को उठाकर ब्रज के ग्वाल-बालों की रक्षा की। अन्त में इन्द्र हार गया और उसका गर्व दूर हो गया। तभी से भगवान कृष्ण को 'गिरिधारी' कहते हैं।

इसी घटना का उल्लेख कविवर बिहारी ने इस प्रकार किया है:—

"लोपे कोपे इंद्र लौं, रोपे प्रलय अकाल।
गिरिधारी राखे सबै, गो, गोपी; गोपाल॥"

"मित्र सुदामा कियो अजांचक प्रीति पुरातन मान।"

३६. सुदामा—एक ब्राह्मण थे। बचपन में सांदीपिन गुरु के यहाँ श्रीकृष्णजी के साथ पढ़ते थे। दोनों में सहपाठिक प्रेम था। एक दिन गुरु-माता ने लकड़ी लाने के लिए दोनों को बन में भेज दिया और थोड़ा सा चना सुदामा को देकर कहा कि जब भूख लगे तुम दोनों खा लेना। श्रीकृष्णजी बन में पहुँच कर लकड़ी के लिए वृक्ष पर चढ़ गये। संयोग से पानी बरसने लगा। श्रीकृष्ण ऊपर ही रह गये। उस समय सुदामा चना चबाने लगे। श्रीकृष्ण के पूँछने पर यह बहाना किया कि शीत के कारण दांत खटखटा रहे हैं। गुरु-माता के दिये हुए चना को छिपा

कर खा लेने के कारण ये गुरुकुल छोड़ने के पीछे बड़े दरिद्र हुए।

भिक्षा माँगकर किसी प्रकार उदर पूर्ति करते और भगवान का भजन करते थे।

एक दिन सुदामा की स्त्री सुशीला को जब यह ज्ञात हुआ कि द्वारकाधीश भगवान कृष्ण इनके सहपाठी हैं, तब उसने सुदामा को श्रीकृष्णजी के पास भेजने का हठ किया। सुदामा स्त्री की बात मानकर श्रीकृष्णजी के दरबार में पहुँचे। महाराज श्रीकृष्ण ने उनका बड़ा आदर-सत्कार किया और विश्वकर्मा द्वारा सुदामा का सुन्दर नगर बनवा दिया। इस प्रकार सुदामा अयांचक हुए।

आजकल के सहपाठियों को सुदामा और कृष्ण के चरित्र से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

(ब) "बेर चाखि कटु तजि लै मीठे भिल्लिनी दीनो जाय।
जूठन की कछु शंक न कीन्हीं भक्ष किये सदभाय॥"

३७. भिल्लिनी—इसका नाम शबरी था। यह मतंग ऋषि की सेवा में रत रहती थी। जब ऋषि इस लोक को त्यागने लगे तब शबरी को समझाया कि तू अभी यहीं रह। जब त्रेता में तुझे भगवान राम का दर्शन होगा तब उनकी अविरल भक्ति पाकर परम धाम सिधारेगी।

शबरी भगवान राम की प्रतीक्षा करती और अच्छे-अच्छे बेर भेंट के लिए एकत्र करती। जब राम शबरी के आश्रम पर पहुँचे तब शबरी दौड़कर उनके चरणों पर गिर पड़ी। उनका चरण धोकर उसने चरणामृत लिया। पुनः उसने एकत्र किये हुए बेरों को भगवान राम के सामने रख दिया। भगवान राम ने

उसके बेरों को प्रेम के साथ खाया और लक्ष्मण को चखाया। फिर उसे नवधा भक्ति का उपदेश दिया। इस प्रकार भगवान राम प्रेम को मानने वाले हैं।

(भ) विप्र श्राप नृग अन्धकूप दियो।

३८. नृग—एक बड़ा दानी राजा था। ये नित्य सहस्रों गौ ब्राह्मणों को दान करते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि एक गौ ब्राह्मण के दान किये हुए गोल से बहककर चली आई। वह दूसरे ब्राह्मण के दान की गायों में मिल गई। इसपर दोनों ब्राह्मणों में उस गाय के लिए झगड़ा हो गया। दोनों राजा नृग के पास आये। राजा से कुछ उत्तर देते न बन पड़ा। सिर हिलाते ही रह गये। इसपर ब्राह्मणों ने शाप दिया कि तुम गिरगिट हो जाओ। शापवश राजा नृग गिरगिट होकर अन्धकूप में गिर पड़े। श्रीकृष्ण भगवान ने इनका उद्धार किया।

(म) "कंस, केसि, कुबलय गज मुष्टिक सब सुखधाम सिधारे"

३९. कंस—यह मथुरा के राजा उग्रसेन का लड़का था। बड़ा अत्याचारी था। इसने नारद के मुख से सुना था कि देवकी के आठवें गर्भ से तुम्हारा शत्रु उत्पन्न होगा। इस कारण अपनी बहिन देवकी को वसुदेव सहित कारागार में डाल दिया। इसने अपने राज्य में भी बड़ा उपद्रव किया। अन्त में श्रीकृष्णजी ने इसको मार डाला और फिर उग्रसेन को मथुरा का राजा बनाया।

४०. केसी—यह एक दानव था। राजा कंस का अनुचर था। कंस की आज्ञा से यह घोड़े का रूप धर कर वृन्दावन गया और अनेक गोपाल तथा गौओं को इसने मार

डाला। भगवान कृष्ण ने इसे मार डाला है। इसी से कृष्ण को 'केसीकाल' कहते हैं।

४१. कुबलय गज—कंस के एक साथी का नाम था। श्रीकृष्ण को मारने के लिए कंस ने उस मार्ग पर इसे खड़ा कर दिया था जिस रास्ते से भगवान कृष्ण कंस के दरवार में पहुँचते। अक्रूर द्वारा श्रीकृष्ण गोकुल से मथुरा बुलाये गये। जब यह द्वार पर पहुँचे तब हाथी को देखकर ताड़ गये कि कुछ दाल में काला है। हाथी को डटा हुआ देखकर कृष्ण ने हाथीवान को डाँटा। परन्तु उसने कुछ ध्यान न देकर हाथी को कृष्ण की ओर वढ़ाया। हाथी ने कृष्ण को सूँड़ से पकड़ लिया। देर तक दोनों में युद्ध होता रहा। अन्त में श्रीकृष्ण ने हाथी को पटक कर मार डाला।

(य) "आपुन विदुर सदन पगु धारे सदा सुभाव साधु सुखदाई"।

४२. विदुर—यह विचित्रवीर्य की धर्मपत्नी अम्बिका के दासीपुत्र थे। बड़े विद्वान, नीतिपटु थे। अन्धराज धृतराष्ट्र के मन्त्री थे परन्तु पाण्डवों का अधिक पक्ष करते थे। ये भगवान् कृष्ण के परम भक्त थे। भगवान् कृष्ण स्वयं इनके घर गये थे। इनके दिये हुए शाक को प्रेम से खाया था। महाभारत युद्ध समाप्त होने पर जब युधिष्ठिर राजा हुए तब १५ वर्ष तक विदुर जी उनके साथ हस्तिनापुर में रहे, तत्पश्चात् धृतराष्ट्र के साथ बन गये और वहीं इन्होंने योगवल से शरीर छोड़ दिया।

(र) "परसि गंगा भई पावन तिहूँ पुर उद्धरन"।

४३. गंगा की कथा—अयोध्या के राजा सगर के केशिनी नाम की रानी से असमञ्जस और सुमति से साठ हजार पुत्र

उत्पन्न हुए। असमञ्जस के अंशुमान नामक पुत्र हुआ। राजा सगर ने एक अश्वमेध यज्ञ किया। यज्ञ का घोड़ा छोड़ा गया। इन्द्र ने भयभीत होकर उस घोड़े को कपिल मुनि के आश्रम पर बँधवा दिया। राजा सगर के साठो हज़ार लड़के घोड़ा खोजते-खोजते जब कपिल मुनि के आश्रम पर पहुँचे तब वे उन्हें चोर, धूर्त, पाखण्डी आदि दुर्वचन कहने लगे। मुनि ने क्रोध में आकर उन्हें शाप दे दिया। वे सब भस्म हो गये। अधिक दिन व्यतीत होने पर जब उनका पता न चला तब उन्हें ढूँढ़ने अंशुमान निकला। मार्ग में गरुड़ मिले। उन्होंने सारा वृत्तांत कह सुनाया और यह बतलाया कि जब तक गंगाजी पृथ्वी पर न आयेंगी तब तक तुम्हारे पुरुषों का उद्धार न होगा। अस्तु, अंशुमान, तत्पश्चात् राजा दलीप गंगाजी के लिए घोर तप किये परन्तु गंगाजी का अवतार न हुआ। तब राजा दलीप के पुत्र राजा भगीरथ गौकर्ण तीर्थ में जाकर तप करने लगे। ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर वर माँगने को कहा। राजा भगीरथ ने पुरुषों की मुक्ति के लिये यह वर माँगा कि गंगाजी पृथ्वी पर आवें। ब्रह्मा ने 'एवमस्तु' कहते हुए यह भी कहा कि तुम शिवजी को प्रसन्न कर लो क्योंकि गंगा की भीषण धारा को वे ही संभाल सकते हैं। तब राजा भगीरथ ने शिव को प्रसन्न किया।

ब्रह्मा के कमण्डल द्वारा (जो विराट भगवान के चरणों का धोया हुआ जल कमण्डल में रखा था) आकाश से गिरती हुई गंगा की धारा को शिवजी ने अपने मस्तक पर धारण किया। पुनः शिवजी के सिर से निकल कर गंगाजी हिमालय में छा गईं। हिमालय से निकल कर गंगाजी राजा भगीरथ के पीछे-पीछे चलीं। मार्ग में जन्हु मुनि का

आश्रम पड़ा। उन्होंने गंगा को पी लिया। भगीरथ के अनेक अनुनय-विनय करने पर पुनः उन्होंने छोड़ दिया, इसीसे गंगा को 'जाह्नवी' कहते हैं। गंगाजी ने कपिल मुनि के आश्रम पर पहुँच कर अपने जल-स्पर्श से राजा सगर के साठ हजार पुत्रों का उद्धार किया। राजा भगीरथ के कारण गंगाजी पृथ्वी पर आईं, इसीसे गंगा को 'भागीरथी' भी कहते हैं।

(ल) पतिवरता जालंधर जुवती प्रगटि सत्य तें टारी।

४४. वृन्दा कथा—जालन्धर नाम का एक दानव था। इसकी स्त्री का नाम वृन्दा था, यह बड़ी पतिव्रता थी। स्त्री के पातिव्रत के प्रभाव से जालन्धर अजेय बना था। जालन्धर के उपद्रव से व्याकुल होकर देवताओं ने विष्णु भगवान से प्रार्थना की, यह दुष्ट दानव जालन्धर हमारे धर्मानुष्ठान में विघ्न डाल रहा है और इन्द्रासन ग्रहण करने की इच्छा कर रहा है। विष्णु भगवान ने देवताओं को आश्वासन दिया और दैत्य के निधन करने की ठान ली।

जिस समय जालंधर देवलोक में इंद्र के साथ युद्ध कर रहा था उस समय भगवान विष्णु ने वृन्दा के आँगन में किसी मुर्दे का शरीर फिंकवा दिया। वृन्दा पति का शरीर समझकर बहुत विलाप करने लगी। उसी समय अचानक एक साधु का आगमन हुआ। उसने मृत शरीर को जीवित कर दिया। जब वृन्दा का सतीत्व नष्ट हो गया तब उसका पति युद्ध में सचमुच मारा गया। जब वृन्दा पर विष्णु का छल प्रकट हो गया तब उसने क्रोध में आकर शाप दिया—"जिस प्रकार तुमने पति वियोग का दारुण दुःख मुझे दिया है उसी प्रकार तुम्हें भी पत्नी वियोग का घोर कष्ट

भोगना पड़ेगा।" इसके पश्चात् वृन्दा अपने पति के शव के साथ सती हो गई। भगवान विष्णु को वृन्दा के छलने का पश्चात्ताप हुआ। श्री पार्वती ने भगवान की प्रसन्नता के लिए वृन्दा की चिताभस्म में तुलसी, आंवला और मालती का वृक्ष लगाया। इनमें से तुलसी को भगवान विष्णु ने वृन्दा का रूप समझा और उसे अपनाया।

कहीं कहीं ऐसा लेख मिलता है कि वृन्दा ने विष्णु को यह शाप दिया कि तुम काले पत्थर की वटिया शालिग्राम हो जाओ। तब विष्णु ने यह शाप दिया कि तुम तुलसी वृक्ष हो जाओ। उसी समय से वृन्दा तुलसी वृक्ष हो गई और विष्णु भगवान शालिग्राम हुए।

———

पाँचवाँ अध्याय

शब्दों के सम्बन्ध में

(१)—पर्यायवाची शब्द

एक अर्थ के बहुत से शब्द होते हैं, उन्हें पर्यायवाची या प्रतिशब्द कहते हैं। पर्यायवाची शब्दों के ज्ञान से अर्थ समझने में बड़ी आसानी होती है। नीचे कुछ शब्दों के पर्यायवाची शब्द लिखे जाते हैं।

(१) गणेश—गणपति, गणनायक, गजानन, करिवर वदन, द्विरद मुख, मूसक वाहन, विनायक, लम्बोदर, सिन्धुर वदन, एक रदन।

(२) कामदेव—अतनु, अनंग, कन्दर्प, मदन, मनोज, मन-मथ, मनसिज, मनोभव, मयन, मार, मीन केत, वारिचर केतु, झखकेतु, स्मर।

(३) सूर्य—अरुण, अर्क, आदित्य, कमलिनीवल्लभ, चंडकर, तमारि, तरणि, दिनकर, दिवाकर, दिनेश दिनमणि, पतंग, प्रभाकर, पूषन, मित्र, मार्तण्ड, मरीचिमाली, भास्कर, भानु, सूर, हंस।

(४) चन्द्रमा—इन्दु, उडराज, कुमुदबन्धु, छपानाथ, छपाकर, निशिनाथ, निशानाथ, मयंक, रजनीश, राकेश, राका पति, विधु, शशि, शर्वरीनाथ, सुधाकर, सुधाधर, सोम, हिमकर, हिमांशु।

(५) इन्द्र—आखण्डल, जिष्णु, पुरन्दर, पुरहूत, पाकारि, पाकरिपु, मघवा, मेघवाहन, वासव, सुनासीर, सुरेश, सुरपति, सुरराज, देवराज, देवनाथ, देवपति।

(६) आकाश—अम्बर, गगन, नभ, नाक, व्योम।

(७) जल—अमृत, अम्बु, उद, उदक, कै, जीवन, तोय, नार, नीर, पय, पाथ, पानी, वन, वारि, सलिल।

(८) पृथ्वी—अवनि, धरा, धरती, धरणी, भूमि, महि, मेदिनी, रसा, वसुधा, वसुमति, वसुन्धरा, क्षिति।

(९) अग्नि—अनल, कृशानु, खरखौकी, धनंजय, पावक, वह्नि, हुताशन।

(१०) हवा—अनिल, जगत्प्राण, बात, बयारि, वातावलि, वायु, पवन, प्रभजन, मरुत्, मारुत, समीर, समीरण।

(११) समुद्र—उदधि, अम्बुधि, जलधि, जलनाथ, पारावार, सागर, सिन्धु।

सूचना—निम्न दोहे में समुद्र के १० पर्यायी शब्द स्मरण योग्य हैं :—

बांधे वननिधि, नीरनिधि, जलधि, सिन्धु, वारीस, सत्य, तोयनिधि, कंपती उदधि, पयोधि, नदीस।

(१२) तालाब—तड़ाग, जलाशय, पोखरा, वापो, सर, सरसी, सलिलाशय।

(१३) पहाड़—अचल, कुधर, गिरि, नग, पर्वत, भूधर, महीधर, शैल।

(१४) नदी—आपगा, तटिनी, धुनि, पथगा, सरिता।

(१५) वृक्ष—पेड़, पादप, पर्णी, महीरुह, रूख, विटप।

(१६) बाग—आराम, उपवन, वाटिका, उद्यान।

(१७) फूल—कुसुम, पुष्प, प्रसून, पुहुप, सुमन।

(१८) कमल—अम्बुज, अम्भोज अरबिन्द, उत्पल, कोकनद, कंज, जलज, जलजात, तामरस, नीरज, पद्म, पंकज, पुंडरीक, पंकरुह, राजीव, वारिज, सरोज, सरसिज, सरोरुह, सरसीरुह।

(१९) सिंह—केशरी, केहरी, पंचानन, मृगपति, मृगराज, मृगेन्द्र, हरि।

(२०) हाथी—करि, कुंजर, गज, गय, गयंद, (गजेन्द्र), दन्ति, द्विरद, नाग, मतंग, वारण, वितुण्ड, सिंधुर, हस्ती, व्याल।

(२१) घोड़ा—अश्व, घोटक, बाजि, तुरग; तुरी, हय, सैन्धव, हरि।

(२२) बन्दर—कपि, कीश, वानर, मर्कट, शाखामृग, हरि।

(२३) सर्प—अहि, सांप, फणि, हरि, भुजंग, वातय, पवनाशन।

(२४) मेढक—दादुर, दुर्दर. मण्डूक।

(२५) धनुष—कार्मुक, कोदण्ड, चाप, धनु, विशिषासन, शरासन।

(२६) बाण—तीर, नाराच, विशिष, पुंख, शर, शिलीमुख, शायक।

(२७) तलवार—असि, करवाल, करपाल, कृपाण, खड्ग, चन्द्रहास।

(२८) ढाल—चर्म, वर्म, फल, फलक।

(२९) सेना—अनी, कटक, चमू, दल, वाहिनी, सैन्य, फौज।

(३०) लड़ाई—अनीक, आयोधन, कलह, युद्ध, विग्रह, रण, समर, संयुग, संग्राम।

(३१) हवाई जहाज—पुष्परथ, पुष्पक, विमान, विमान, व्योमयान।

(३२) नगाड़ा--आनक, दुन्दुभी, पटह, दमामा, भेरी।
(३३) पड़ाव--डेरा, निवेश, शिविर, सेनानिवास।
(३४) घर--अयन, आगार, ओक, गेह, गृह, निलय, भवन, मंदिर, धाम, सदन, सम।
(३५) सोना--कनक, कंचन, कलधौत, जातरूप, स्वर्ण, सुवर्ण, हेम।
(३६) राज्य--मंडल, जनपद, देश, राष्ट्र, उपवर्त्तन।
(३७) जीविका--आजीव, जीवनोपाय, जीवनमार्ग, वृत्ति, व्यापार, धंधा, पेशा।

सूचना—जितने पर्यायवाची शब्द लिखे गये हैं उनके अतिरिक्त उन शब्दों के और भी पर्यायवाची शब्द हैं। विस्तार भय से नहीं दिये गये हैं। विशेष ज्ञान के लिए 'पर्यायवाची-शब्द कोश' देखिये।

(२) क्रियावाची शब्दों के पर्याय

(१) अकुलाना--आकुल होना, अधीर होना, घबराना, व्याकुल होना, व्यग्र होना।
(२) अपनाना--अंगीकार करना, आश्रय देना, स्वीकार करना।
(३) आना--आगमन होना, उपविष्ट होना, उपस्थित होना।
(४) उघारना--खोलना, प्रकट करना, व्यक्त करना, नंगा करना।
(५) उकसाना--उठाना, चढ़ाना, आगे बढ़ना, उभारना।
(६) उतरना--घट जाना, नीचे आना, किनारे पहुँचना, पार होना, उदास होना, फीका पड़ना।

(७) ऊँघना—अलसाना, तन्द्रित होना, पलक मारना, झपकी लेना।
(८) ऐंठना—अकड़ाना, उमेठना, मरोड़ना।
(९) ओढ़ना—धारण करना, पहनना, लपेटना।
(१०) औटना—उबालना, जलाना, सुखाना।
(११) कहना—कथना, निवेदन करना, प्रार्थना करना, वर्णन करना, भाषण करना, संलाप करना।
(१२) खाना—जेवना, प्रसाद पाना, भोग लगाना, भोजन करना, भक्षण करना, लक्ष्मीनारायण करना।
(१३) गढ़ना—निर्माण करना, बनाना, रचना, सुधारना।
(१४) घिसना—मलना, रगड़ना, संघर्षण होना।
(१५) चमकना—झलकना, दमकना, प्रकाश होना।
(१६) छिपना—अप्रकट होना, अप्रकाशित होना, ओट में होना, गुप्त होना, लुकना।
(१७) जलना—दग्ध होना, नष्ट होना, सुलगना, स्वाहा होना।
(१८) झँखना—पछताना, पश्चात्ताप करना, अनुताप करना, बड़बड़ाना।
(१९) टोहना—अनुसन्धान करना, अन्वेषण करना, खोजना, टोह लेना, ढूढ़ना।
(२०) ठिठुरना—अकड़ना, काँपना, शीत लगना, सिकुड़ जाना।
(२१) त्यागना—छोड़ना, त्याग देना, पृथक् करना।
(२२) देखना—अवलोकन करना, दृष्टिगोचर करना, दर्शन करना, दृष्टिगत होना, निरखना; निरीक्षण करना।
(२३) दौड़ना—गतिमान होना, धावना, पलायन, प्रभावित होना, वेगमान होना।
(२४) धोना—पखारना, प्रक्षालन करना, शुद्ध करना, निर्मल

करना, स्वच्छ करना ।

(२५) निकालना—काढ़ना, बाहर करना, बहिष्कृत करना, स्थानान्तरित करना, पृथक् करना ।

(२६) प्रकट होना—अवतरित होना, प्रकाशित होना, प्रत्यक्ष होना, व्यक्त होना, स्पष्ट होना, साक्ष होना ।

(२७) पढ़ना—अध्ययन करना, अभ्यास करना, स्मरण करना,

(२८) फेंकना—त्यागना, दूर करना, प्रक्षेपण करना ।

(२९) बरतना—काम में लाना, व्यवहार करना, उपयोग में लाना, प्रयोग करना ।

(३०) भाफना—अटकल लगाना, अनुमान लगाना, कूतना ।

(३१) मचलना—अभिमान करना, हठ करना, मटकना ।

(३२) रूसना—रूठना, कुपित होना, कुढ़ाना, रोष करना ।

(३३) लसना—शोभित होना, शोभा पाना, सोहना, सजना, सुसज्जित होना ।

(३४) विलपना—चिल्लाना, रोना, रुदन करना, दुःख करना ।

(३५) शोधन करना—शुद्ध करना, पवित्र करना, निर्मल करना, दोष-रहित करना ।

(३६) सौंपना—रखना, धरना, समर्पण करना ।

(३७) हिचकना—आगापीछा करना, अटकना, रुकना, अवरुद्ध होना ।

---

(३) पर्यायवाची वाक्य

पर्यायवाची शब्दों की भाँति एकार्थ बोधक वाक्यों की अभिज्ञता से रचना सुन्दर और मधुर हो जाती है । कुछ उदाहरण दिये जाते हैं ।

(१) प्रातः हो गया--प्रभात हो गया, भोर हो गया, पौ फट गई, प्रत्यूष बेला हो गई, निशा बीत गई, सूर्य की किरणें छिटक गईं, भगवान भास्कर प्रगट हो गये, सूर्योदय हो गया, पूषन् की प्रभा प्रकाशित हो गई आदि।

(२) सन्ध्या हो गई--सूरज डूब गया, सूर्यास्त हो गया, भगवान मरीचिमाली अस्ताचल पर विश्राम करने चले गये, तिमिरनाशक के भय से छिपा हुआ तिमिर प्रगट हो गया, दिनान्त हो गया, रजनी-रानी का आगमन हो गया, आदि।

(३) वह जन्मा--उसने जन्म लिया, वह संसार में आया, वह आविर्भूत हुआ, वह अवतीर्ण हुआ, उसका अवतार हुआ, वह पृथ्वी पर प्रगट हुआ, उसका प्रादुर्भाव हुआ आदि।

(४) वह मर गया--उसकी मृत्यु हो गई, वह इस लोक से चल बसा, वह सुर लोक को सिधारा, वह पर लोक वासी हो गया, उसका देहावसान हो गया, उसके प्राण निकल गये, उसके प्राण पखेरू उड़ गये, उसने अपनी संसार-यात्रा समाप्त की, उसका जीवन-प्रदीप बुझ गया, वह काल का ग्रास हो गया, वह काल-कवलित हो गया, वह काल के गाल में चला गया, उसका शरीरान्त हो गया, उसे गंगा-लाभ हो गया, उसकी मानव-लीला समाप्त हो गई, वह गोलोक वासी हुआ, वह परमधाम को सिधारा आदि।

(५) वह अति प्रसन्न हो गया--वह आनन्द-विभोर हो गया, वह आनन्द-मग्न हो गया, वह हर्ष के मारे फूल

गया, वह 'परम प्रफुल्लित पुलकित गाता' हो गया, हर्ष से उसकी रोमावली खड़ी हो गई, उसकी हृदय-कली खिल गई, उसका हृदय हर्ष से हिलोरें मारने लगा।

(६) वह दुःख में है---वह दुःख से कातर है, वह दुखार्त्त है, उसका हृदय दुःख से दग्ध है, वह दुःख से जर्जरित है, आदि।

(७) वह निराश हो गया---उसकी आशा जाती रही, उसकी आशा-लता पर तुषार पड़ गया, उसकी आशा-कलिका मुरझा गई, वह वैराग्य-नद में डूब गया, आदि।

प्रश्न

(१) पर्यायवाची शब्द किसे कहते हैं ?
(२) पर्यायवाची शब्दों के जानने की क्या आवश्यकता है ?
(३) दिन, रात, पुष्प; के ५-५ पर्यायवाची शब्द लिखो ?
(४) निम्नलिखित रचना में 'गणेशजी' के पर्यायवाची शब्द चुनो :—
(क) एक रदन, सिन्धुर वदन, दुर बुधि तिमिर दिनेश। लम्बोदर, असरन-सरन, जय-जय सिद्ध गनेश।
(ख) गणनायक करिवर वदन।
(ग) गाइये गणपति जगबन्दन।
(५) 'छिपाना' चुप रह जाना, भय खाना क्रियावाची शब्दों के ३-३ पर्यायी शब्द लिखो ?
(६) संसार नश्वर है, धैर्य रक्खो, आनन्द से हूँ, रात्रि हो गई, चिड़ियाँ चहचहाने लगीं के ४-४ पर्यायवाचक वाक्य लिखो।

---

(४) पर्यायवाची शब्दों के सूक्ष्म अर्थ-भेद

कतिपय ऐसे शब्द हैं जो साधारणतः पर्यायवाची होते हैं परन्तु उनमें सूक्ष्म अर्थ भेद होता है। शब्द व्यवहार में अर्थ गत भेदों का विचार रखना आवश्यक है। नीचे कुछ ऐसे शब्दों की सूची दी जाती है जिनके अर्थों में सूक्ष्म-भेद है :—

१—अगम और दुर्गम—

अगम—जिसमें पहुँच नहीं है।

दुर्गम—जिसमें कठिनाई से पहुँच हो सके।

२—अप्राप्य और दुष्प्राप्य—

अप्राप्य—जो मिल न सके।

दुष्प्राप्य—जो कठिनाई से मिल सके।

३—अभिमान और अहंकार—

अभिमान—अपनी योग्यता पर विश्वास रखना।

अहंकार—झूठे ही अपनी योग्यता प्रदर्शित करना।

४—अज्ञानी और अनभिज्ञ—

अज्ञानी—जिसमें ज्ञान ही नहीं। (जड़)

अनभिज्ञ—जो अनुभव रहित है।

५—गौरव और दम्भ—

गौरव—अपनी गुरुता का यथार्थ ज्ञान।

दम्भ—अयोग्य व्यक्ति का ढोंग।

६—दारा और पत्नी—

दारा—स्त्री जाति का बोधक है।

पत्नी—अपनी विवाहिता स्त्री।

७—पुत्र और सुत—

पुत्र—अपना लड़का कहा जाता है।

सुत—सब लड़कों को कहते हैं।

८—यश और कीर्ति—

यश—उत्तम कार्य संपादन से जो बड़ाई होती है।

कीर्ति—किया हुआ कार्य जिससे यश होता है।

९—उद्योग और प्रयत्न—

उद्योग—उत्साहपूर्वक उत्कृष्ट प्रयत्न।

प्रयत्न—विशेष यत्न (उपाय)

१०—मूर्ख, खल और शठ—

मूर्ख—जिस पर शिक्षा का प्रभाव न पड़े।

खल—जो स्वाभाविक दुष्ट है।

शठ—जो सत्संग से सुधर जाये।

११—दया, कृपा, करुणा—

दया—दूसरों के दुःख दूर करने की स्वाभाविक इच्छा।

कृपा—छोटों पर दया दिखाना।

करुणा—किसी के दुःख से दुखी होकर दुःख प्रकट करना।

१२—दुःख, खेद, शोक, विषाद और क्षोभ—

दुःख—मानसिक वेदना (पीड़ा होना)।

खेद—निराश होने पर दुखी होना।

शोक—चित्त की व्याकुलता।

विषाद—दुःख की अधिकता पर 'क्या करना चाहिये ? यह न सूझ पड़ना।

क्षोभ—अनुचित कार्य हो जाने पर पछताना।

१३—प्रेम, स्नेह, वात्सल्य, प्रणय, श्रद्धा और भक्ति—

प्रेम—हृदय का आकर्षित होना।

स्नेह—छोटों पर प्रेम।

वात्सल्य—छोटे बच्चों पर माता-पिता का प्रेम।

प्रणय—स्त्री से प्रेम करना ।

श्रद्धा—गुरु, पिता आदि माननीय व्यक्ति विषय प्रेम ।

भक्ति—ईश्वर अथवा अपने इष्ट देव में श्रद्धा पूर्वक प्रेम ।

१४-प्रणाम, नमस्कार, अभिवादन, नमस्ते, दण्डवत—

प्रणाम—बड़ों के प्रति नम्रता ।

नमस्कार—बराबर वालों के प्रति नम्रता ।

अभिवादन—अपना परिचय देकर प्रणाम करना ।

नमस्ते—देवताओं के प्रति नम्रता प्रकट करना, बराबर वालों के प्रति सम्मान प्रदर्शन करना ।

दण्डवत्—साष्टांग प्रणाम करना ।

---

(५) ऐसे शब्द जिनके रूप में अल्प विभिन्नता है ।

कतिपय ऐसे शब्द हैं जिनके रूप में किंचित विभिन्नता है किन्तु उनके अर्थ भिन्न-भिन्न हैं। ऐसे शब्दों के प्रयोग में सतर्क रहना चाहिये । कुछ शब्द नीचे दिये जाते हैं :—

अज=ब्रह्मा, बकरा; अजा=ब्रह्माणी, बकरी । अंश=भाग; अंस=कन्धा । इति=समाप्ति सूचक; ईति=आपदा । कुल=वंश, कूल=किनारा । खल=दुष्ट; खलु=निश्चय, ग्रह=सूर्य, चंद्र आदि, गृह=घर । गाध=अभिलाषा; गाधि=एक राजा । घुड़=घोड़ा; घुण=कीड़ा । चिर=बहुत दिन, चीर=वस्त्र । छात्र=विद्यार्थी, क्षात्र=क्षत्रिय । जटा=बालों का समूह, जटी=शिवजी । द्विप=हाथी; द्वीप=टापू । प्रथा=रीति, पृथा=कुन्ती । मूल=जड़; मूल्य=कीमत । शर=बाण; सर=

तालाब । शूर = वीर; सूर = सूर्य, अन्धा । सुर = देवता; स्वर = शब्द । अशक्त = शक्ति रहित; असक्त = पृथक् । अपेक्षा = चाहना; उपेक्षा = न चाहना । आकर = खानि; आकार = सूरत । तरणी = नाव; तरुणी = युवती । तोषक = धैर्यदाता; तोशक = पलंग पर बिछाने का रूईदार गद्दा । प्रसाद = प्रसन्नता, प्रासाद = महल । विविध = तरह-तरह के, विबुध = देवता, पंडित । बसन = वस्त्र, व्यसन = बुरीलत । शंकर = कल्याणकर्ता, शिव; संकर = मिला हुआ ।

———

छठवाँ अध्याय

तत्सम विलोमादि शब्द

(१) तद्भव तथा तत्सम शब्द

तद्भव—वे शब्द जो संस्कृत शब्दों से बने हैं।

तत्सम—वे शब्द जो संस्कृत से ज्यों के त्यों हिन्दी में प्रयुक्त हैं।

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
अकाज	अकार्य	अच्छत	अक्षत
अंगरखा	अंगरक्षा	अचानक	अकस्मात्
अच्छर (आखर)	अक्षर	अटारी	अट्टालिका
अनत	अन्यत्र	अनाज	अन्न
अनाड़ी	अनार्य	अग्य	अज्ञ
अबतक	अद्यावधि	अमचूर	आम्रचूर्ण
अमिय	अमृत	अमोल	अमूल्य
अरब	अर्बुद	अहेर	आखेट
आक	अर्क	आग	अग्नि
आँवला	आमलक	आज	अद्य
इमली	अम्लीका	उछाह	उत्साह
उठना	उत्थान	उर	उरस्
उसास	उच्छ्वास	ऊँट	उष्ट्र
ओठ	ओष्ठ	औसर	अवसर
कपड़ा	कर्पट	कपूर	कर्पूर
करतब	कर्त्तव्य		

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
कहावत	कथावत	कांख	कक्ष
कंधा	स्कन्ध	काठ	काष्ठ
करन	कर्ण	कियारी	केदार
किसान	कृषाण	कीरति	कीर्ति
कुम्हार	कुम्भकार	कुँआ	कूप
केवट	कैवर्त्त	कोस	कोश
खांसी	कास	खार	क्षार
गाँठ	ग्रन्थि	गगरी	गर्गरी
गड्ढा	गर्त्त	गयन्द	गजेन्द्र
गाँव	ग्राम	गात	गात्र
गाहक	ग्राहक	गिद्ध	गृद्ध
गेहूँ	गोधूम	गोबर	गोमय
घड़ा	घट	घर	गृह
घरनी	गृहिणी	धाम	घर्म
घी	घृत	चँवर	चमर
चाक	चक्र	चितेरा	चित्रकार
चोंच	चञ्चु	छकड़ा	शकट
छीन	क्षीण	जुग	युग
जौ	यव	जांचक	याचक
जोंक	जलौका	जोति	ज्योति
जूठा	उच्छिष्ट	जोधा	योद्धा
टकसाल	टंकशाला	टिटिहरी	टिट्टिभ
ठाँव	स्थान	डाह	दाह
ढिठाई	धृष्टता	तत्ता (तात)	तप्त
तीछन	तीक्ष्ण	तिय (तिरिया)	स्त्री

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
तुरंत	त्वरित	थम्भ	स्तम्भ
थन	स्तन	दच्छ	दक्ष
दही	दधि	दिया	दीप
दीठि	दृष्टि	दुति	द्युति
दोहा	द्विपदा	धुजा	ध्वजा
धरती	धरित्री	धूल	धूलि
नखत	नक्षत्र	नाई	नापित
नाक	नासिका	नाच	नृत्य
निठुर	निष्ठुर	नेह	स्नेह
पंछी	पक्षी	पतोहू	पुत्रवधू
परख	परिक्षा	पारखी	परीक्षक
पलंग	पर्यंक	पत्थर (पाथर)	प्रस्तर
पाहन	पाषाण	प्रगट	प्रकट
फंदा	पाश	फुलवारी	फुल्लवाटी
बन्दर	बानर	बच्चा	वत्स
बनिज	वाणिज्य	बयारि	वातावलि
बरात	वरयात्रा	बालू	बालुका
बिच्छू	वृश्चिक	बिजली	विद्युत्
भतीजा	भ्रातृज	भांड	भंड
भालु	भल्लुक	भीख	भिक्षा
भूखा	बुभुक्षित	भौंह	भ्रू
मक्खी	मक्षिका	मट्टी	मृत्तिका
मदार	मन्दार	महरानी	महाराज्ञी
माथा	मस्तक	मूरख	मूर्ख
मूसा	मूषक	मेढ़क	मण्डूक

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
मोर	मयूर	रसरी	रज्जू
रसोई	रसवती	रात	रात्रि
रिस	रोष	रिन	ऋण
रीछ	ऋक्ष	रूठना	रुष्ट
लाख	लक्ष	लाठी	यष्टि
सिवाला	शिवालय	सिर (सीस)	शीर्ष
सकत	शक्ति	साँच	सत्य
सपना	स्वप्न	सब	सर्व
साप	सर्प	साँवा	श्यामलक
सावन्त	सामन्त	सिख	शिष्य
सिरिस	शिरीष	सुमिरन	स्मरण
सून	शून्य	सेज	शय्या
सोनार	स्वर्णकार	सोहाग	सौभाग्य
सौ	शत	सैकड़ा	शतक
हरख	हर्ष	हजार	हज़ार (उर्दू)
हलरी	हरिद्रा	हाथ	हस्त
हाथी	हस्ती	हिया	हृदय
होली	होलिका		

---

(२) शुद्धाशुद्ध शब्द

कुछ ऐसे शब्द हैं जो देखने में शुद्ध जान पड़ते हैं किन्तु व्याकरण के नियमानुसार अशुद्ध हैं। कुछ नीचे लिखे जाते हैं:—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
अत्योक्ति	अत्युक्ति	अनुरागिता	अनुराग

असहनीय	असह्य	आवश्यकीय	आवश्यक
आरोग्यता	आरोग्य	उपरोक्त	उपर्युक्त
उत्कर्षना	उत्कर्ष	औदार्यता	औदार्य
कृतघ्नी	कृतघ्न	गुणीगण	गुणिगण
गड्डर	गरुड़	दरिद्रता	दारिद्र्य
धैर्यता	धैर्य	पार्वतीय	पर्वतीय
निर्धनी	निर्धन	निर्बली	निर्बल
बाहुल्यता	बाहुल्य	भाग्यमान्	भाग्यवान
बुध्यानुसार	बुध्यनुसार	महत्वा	महत्ता
महिमासागर	महिमसागर	महात्मागण	महात्मगण
महानता	महान	वादाविवाद	वाद-विवाद
श्रीवान्	श्रीमान्	समाजिक	सामाजिक
सदोपदेश	सदुपदेश	सराहनीय	श्लाघनीय
सविनयपूर्वक	विनयपूर्वक	सन्मान	सम्मान

---

(३) विलोम शब्द

जो शब्द परस्पर प्रतिकूल अर्थ प्रकट करते हैं उन्हें विलोम शब्द कहते हैं।

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
अगम	सुगम	अचित्र	सचित्र
अनुकूल	प्रतिकूल	अनुग्रह	विग्रह
अनुचित	समुचित	आदान	प्रदान
आकाश	पाताल	आय	व्यय
आदि	अन्त	आरोह	अवरोह
उदय	अस्त	उदार	अनुदार

उन्नति	अवनति	उत्थान	पतन
उत्कर्ष	अपकर्ष	उत्कृष्ट	अपकृष्ट
उपकार	अपकार	एक	अनेक
ऐक्य	अनैक्य	क्रय	विक्रय
कुपूत	सुपूत	कठोर	कोमल
कठिन	सरल	कृतज्ञ	कृतघ्न
कीर्ति	अपकीर्ति	कृपा	अकृपा
खल	साधु	गुण	दोष
गुरु	लघु	गरिमा	लघिमा
गौरव	लाघव	गन्ध	निर्गन्ध
ग्राह्य	त्याज्य	घात	प्रतिघात
चेतन	जड़	जय	अजय
जन्म	मृत्यु	जीवन	मरण
तेज	निस्तेज	थल	जल
दिन	रात	दीन	अदीन
पवित्र	अपवित्र	प्राची	प्रतीची
प्राचीन	अर्वाचीन	पावन	अपावन
		पाप	पुण्य
पात्र	अपात्र	प्रातः	सायं
पण्डित	मूर्ख	पूज्य	अपूज्य
भल	अनभल	भद्र	क्षुद्र
भक्त	अभक्त	भाग्य	अभाग्य
मंगल	अमंगल	मान	अपमान
यश	अपयश	रोगी	निरोगी
रागी	विरागी	वादी	प्रतिवादी
विधवा	सधवा	विजय	पराजय

सजल	निर्जल	सफल	विफल
सक्रिय	निष्क्रिय	सजीव	निर्जीव
सरस	नीरस	सुगन्ध	दुर्गन्ध
सुख	दुःख	सुजाति	कुजाति
सुपात्र	कुपात्र	सुलभ	दुर्लभ
स्वीकृत	अस्वीकृत	स्वतन्त्र	परतन्त्र
स्वाधीन	पराधीन	स्ववश	परवश
स्वदेश	परदेश	सम्भव	असम्भव
सम्पति	विपत्ति	संयोग	वियोग
स्तुति	निन्दा	स्थूल	सूक्ष्म
हार	जीत	हानि	लाभ

---

(४) अनेकार्थवाची शब्द

बहुत शब्द ऐसे हैं जिनके कई अर्थ होते हैं, उन्हें अनेकार्थवाची शब्द कहते हैं। कुछ शब्दों की सूची निम्नांकित है:—

अग—जो गमन न करे, पर्वत, वृक्ष।

अम्बर—आकाश, वस्त्र।

अरुण—सूर्य, सूर्य का सारथी, लाल, सिन्दूर।

अर्क—सूर्य, मन्दार।

आगम—भविष्य, शास्त्र, आना।

कनक—सोना, धतूरा।

कर—हाथ, किरण, टैक्स, करनेवाला।

कल—सुन्दर, आराम, यन्त्र, दाँव-पेंच।

कुवलय—कमल, कुई ।
पय—दूध, पानी ।
गति—दशा, चाल, ज्ञान, उपाय ।
गुण—गुण, रस्सी, कला, कर्त्तव्य ।
चपला—चंचला, बिजली, लक्ष्मी ।
जाल—फन्दा, समूह, माया ।
जीवन—जीना, जिन्दगी, पानी ।
तात—पिता, पुत्र, मित्र, प्यारा ।
दल—सेना, पत्ता, पार्टी ।
नाग—हाथी, साँप ।
नीलकण्ठ—एक पक्षी, महादेव, मोर ।
पक्ष—पाँख, पक्ष, सहायक, ओर (तरफ़) ।
पानी—चमक, आब, प्रतिष्ठा, जल ।
मुद्रा—अवस्था, रुपया, छाप, टकसाल ।
रस—स्वाद, पानी, अलौकिक आनन्द ।
वन—पानी, जंगल, स्थान ।
वर्ण—जाति, रङ्ग, अक्षर ।
विधि—रीति, ब्रह्मा, ढंग, शास्त्र में कही हुई रीति ।
स्नेह—प्रीति, तेल, प्यार ।
सारंग—साँप, मोर, बादल, पानी, फूल, धनुष, चन्दन, कोयल, कामदेव आदि ।
हरि—विष्णू, इन्द्र, सिंह, घोड़ा, बन्दर, मेढ़क, साँप, पानी आदि ।

---

(५) अनेकार्थवाची शब्दों के अर्थ निर्णय का ढंग

जब कोई ऐसा शब्द नहीं आ जाता है जिसके कई अर्थ

होते हैं तब एक अर्थ निश्चय करने के लिये निम्नलिखित ढंग से बड़ी सहायता मिलती है:—

१–संयोग से—जैसे 'विचरत हरि सिंहिनि सहित' में 'सिंहिनि' के संयोग से 'हरि' का अर्थ 'सिंह' ही लिया जायगा।

२—वियोग से—जैसे 'लखो धनञ्जय धूम बिन' में 'धूम' के वियोग से 'धनञ्जय' का अर्थ 'अग्नि' होगा।

३—साहचर्य से—जैसे–'राम लखन-सिय कानन बस हो' में 'सीता और लखन' के साहचर्य से 'राम' का अर्थ दशरथ के पुत्र 'राम' लिया जायगा। परशुराम और बलराम नहीं।

४—विरोध से—जैसे 'लुको नाग लखि मोरहि आवत' में 'मोर' के विरोध से 'नाग' का अर्थ 'सर्प' होगा। क्योंकि 'सर्प और मोर' का विरोध प्रसिद्ध है।

५—प्रकरण (१) जैसे—'सुधावृष्टि भई दुहुँ दल ऊपर' यहाँ 'दल' का अर्थ 'सेना' है, पत्ता नहीं।

(२) 'दल को साजत है उतकोऊ' यदि प्रकरण युद्ध का होगा तो 'दल' का अर्थ 'सेना' और यदि माली के प्रसङ्ग में होगा तो 'दल' का अर्थ है 'पत्ता'।

६—सामर्थ्य से—'तन महँ प्रविसि निसरि सरजाहीं' यहाँ 'सर' का अर्थ है—'बाण'। क्योंकि इसी में प्रवेश करने और निकलने का सामर्थ्य है।

७—औचित्य से–'अर्क जवास पात बिनु भयऊ' यहाँ 'अर्क' का अर्थ 'मदार' ही उचित है 'सूर्य' नहीं। क्योंकि 'मदार' ही में होते हैं।

८—देश-बल से—'मरु में जीवन दूरी है' यहाँ मरुस्थल के कारण 'जीवन' का अर्थ है 'पानी' जिन्दगी नहीं।

९—काल-बल से—'कुवलय निसि फूल्यो' यहाँ रात में फूलने के कारण 'कुवलय' का अर्थ 'कुई' ही होगा।

१०—अन्य सन्निधि से—जहाँ समीपता के कारण एक अर्थ की सिद्धि हो। जैसे—'दान लसत है नाग सिर'। 'दान' की समीपता से 'नाग' का अर्थ 'हाथी' और 'नाग' की समीपता से 'दान' का अर्थ 'गज-मद' होगा।

---

(६) परिवर्तन

बहुत से ऐसे शब्द हैं जिनके अर्थ बोध के लिये कोई रूढ़ शब्द नहीं मिलता। ऐसे शब्दों को वाक्य में परिवर्त्तित कर देने से अर्थ स्पष्ट हो जाता है। उदाहरणतः कुछ शब्द लिखे जाते हैं:—

अलौकिक—जैसा लोक में नहीं है।

अभूतपूर्व—जैसा पहले नहीं हुआ।

अश्रुतपूर्व—जो पहले नहीं सुना गया हो।

आस्तिक—जो ईश्वर अथवा देवताओं में विश्वास रखता हो।

अजातशत्रु—जिसका कोई शत्रु पैदा ही न हुआ हो।

कृतज्ञ—जो किये हुए उपकार को मानता हो।

गोपनीय—जो छिपाने के योग्य हो।

दीर्घजीवी—जो बहुत दिनों तक जीता रहे।

वयोवृद्ध—जो अवस्था में अत्यधिक दिनों का हो।

विधवा—जिसका पति मर गया हो।

बुद्धिजीवी—जो बुद्धि द्वारा अपनी जीविका चलाये।

श्रमजीवी—जो परिश्रम करके अपनी जीविका प्राप्त करे (मजदूर)।

साहित्यज्ञ—जो साहित्य का जाननेवाला है।

प्रश्न

निम्नलिखित वाक्यों के बदले एक शब्द लिखो जिससे उसका अर्थ स्पष्ट प्रगट हो :—

(१) जो कहने योग्य नहीं है।
(२) जो वर्णन योग्य नहीं है।
(३) जो उपेक्षा योग्य नहीं है।
(४) जो उपेक्षा योग्य है।
(५) जिसे चार मुख हों।
(६) जो गणित का ज्ञाता हो।
(७) जिसे ईश्वर में विश्वास नहीं है।
(८) जिसका उदर लम्बा हो।
(९) जो सहस्र भुजा वाला है।
(१०) जिसे दश आनन (मुख) हो।
(११) जो सुख देने वाला है।
(१२) जिसकी जीविका श्रम द्वारा चले।

———

(७) गूढ़ार्थ प्रकाश

१—दो पक्ष—कृष्ण और शुक्ल।
२—(क) तीन गुण—सत्वोगुण, रजोगुण, तमोगुण।
(ख) तीन अग्नि—दावाग्नि, जठराग्नि, बड़वाग्नि।
(ग) तीन बल—तन, मन, धन।

(घ) तीन विधि—वेद, लोक, कुल।
(ङ) तीन लोक—स्वर्ग, मृत्यु, पाताल।
(च) तीन देव—ब्रह्मा, विष्णु, महेश।
(छ) तीन ताप—दैहिक, दैविक, भौतिक।
(ज) तीन वायु—शीतल, मन्द, सुगन्ध।
(झ) तीन ऋण—मातृ, पितृ, गुरु ऋण।
(ञ) तीन पन—बाल, युवा, वृद्ध।
(ट) तीन राम—परशुराम, राम, बलराम।
(ठ) तीन गुरु—माता, पिता, गुरु।
(ड) तीन काल—भूत, वर्त्तमान, भविष्य।
३—(क) चार वेद—ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथवद।
(ख) चार पदार्थ—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष।
(ग) चार अवस्था—जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरिय।
(घ) चारवर्ण—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र।
(ङ) चार आश्रम—ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ, वानप्रस्थ संन्यास।
(च) चार अंग (सेना के)—हाथी, घोड़े, रथ, पैदल।
(छ) चार प्रमाण—प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, उपमान।
(ज) चार भक्त—आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी, ज्ञानी।
(झ) चार प्रकार की मुक्ति—सालोक्य, सामीप्य, सारुप्य, सायुज्य।
४—(क) पंच प्राण—प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान।
(ख) पंच कन्या—अहल्या, द्रौपदी, कुंती, तारा, मंदोदरी।
(ग) पंच माता—निज जननी, आचार्य पत्नी, राज पत्नी, सास और मित्र पत्नी।
(घ) पंच पिता—जनक, उपनेता, आचार्य, अन्नदाता, भयत्राता।

(ङ) पंच गव्य---दूध, दही, घी, गोबर, मूत्र (गौ का)
(च) पंच तत्व---पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश।
(छ) पंच महायज्ञ---वेद पाठ, तर्पण, होम, बलि वैश्वदेव, अतिथि-सत्कार।
(ज) पंचामृत---दूध, दही, घी, शहद और शक्कर।
(झ) पंच ज्ञानेन्द्रिय---आँख, नाक, कान, जिह्वा, त्वचा।
(ञ) पंच कर्मेन्द्रिय---हाथ, पाँव, मुख, लिंग, गुदा।

५---(क) षट् तर्क---वेदांत, सांख्य, योग, न्याय, मीमांसा, वैशेषिक।
(ख) षट् रस---खट्टा, मीठा, कटु, अम्ल, कसैला, नमकीन।
(ग) षट् गुण (नीति के छः अंग)---संधि, विग्रह, मान, आसान, द्वैधी भाव और संश्रय।
(घ) षट्-रिपु---काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर (कुटिलता)।
(ङ) षट् कर्म (ब्राह्मण के)---पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना, दान देना, दान लेना।
(च) षट् वेदांग---शिक्षा (वर्णोच्चारण विधि), व्याकरण, ज्योतिष, छंद, निरुक्ति, (वैदिक शब्द तथा अर्थ का ज्ञान) और कल्प (कर्म करने की विधि)।
(छ) षट् राग---श्री, वसंत, पंचम, भैरव, मेघ, नटनारायण।

६---(क) सात लोक---भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपलोक, सत्यलोक।
(ख) सात तल---तल, अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, पाताल।

(ग) सात मुनि (वैदिक)—मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वशिष्ठ।

(घ) सप्तर्षि—कश्यप, अत्रि, यमदग्नि, विश्वामित्र, वसिष्ठ, भरद्वाज, गौतम।

(ङ) सात सुख—खान, पान, परिधान, ज्ञान, गान, शोभा, संयोग।

(च) सप्त द्वीप—जंबु, प्लक्ष, क्रौंच, पुष्कर, कुश, शाक, शाल्मलि।

(छ) सप्त सागर—क्षीर, क्षार, दधि, मधु, घृत, सुरा, इक्षु।

(ज) सात ईति—अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूसक, शुक, शलभ का आना, स्वचक्र, परचक्र।

(झ) सप्तराज अंग—रानी, युवराज, मंत्री, मित्र, देश, कोश, सेना।

(ञ) सप्ताश्चर्य—(१) आगरे का ताजमहल, (२) चीन की क़हक़हा दीवार, (३) मिश्र के पिरामिड, (४) साइप्रस की पीतल की मूर्ति (यह इतनी बड़ी है कि जहाज इसकी टांगों में होकर जा सकता है), (५) मास्को का घंटाघर, (६) बाबुल मंदप का लटकता हुआ बगीचा और (७) नियाग्रा का झरना।

(ट) सप्तपुरी—अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवंतिका और द्वारावती।

(ठ) सप्तस्वर—षडज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत्, निषाद।

(संक्षेप में—सा, रे, ग, म, प, ध, नि)

७—(क) योग के आठ अंग—यम, नियम, आसन, प्राणायाम,

प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि।

(ख) दिगपाल—इंद्र, अग्नि, यम, नैऋत्य, वरुण, वायु, कुबेर, ईशान।

(ग) अष्टकर्म—खाना, पीना, सोना, जागना, संतानोत्पत्ति करना, शत्रु से बचना, मरना और पैदा होना।

(घ) अष्टसिद्धि—अणिमा (बहुत छोटा बन जाने की शक्ति), महिमा (बहुत बड़ा बन जाने की शक्ति), लघिमा (बहुत हल्का बन जाने की शक्ति), गरिमा (बहुत भारी बन जाने की शक्ति), प्राप्ति (दूर की वस्तु प्राप्त कर लेने की शक्ति), प्राकाम्य (मन चाही वस्तु प्राप्त कर लेने की शक्ति), ईशित्व (अधिकार जमाने की शक्ति), वशित्व (दूसरों को वश में करने की शक्ति)।

(ङ) अष्टवसु—धर, ध्रुव, सोम, सावित्र, अनल, प्रत्यूष, प्रभास, अनिल।

(च) साष्टांग प्रणाम—हाथ, पैर, जंघा, हिरदा, आँख, शिर, वचन और मन से प्रणाम करना।

(छ) अष्ट छाप (ब्रज के ८ प्रसिद्ध कवि)—नंददास, कुंभनदास, परमानंद, छीत स्वामी, गोविंद स्वामी, चतुर्भुजदास, कृष्णदास, सूरदास।

(ज) अष्टमूर्ति (शंकर की)—जल, अग्नि, होत्री, चंद्र, सूर्य, पवन, पृथ्वी और आकाश।

(झ) अष्टविवाह—देव, ब्रह्म, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, पैशाच, गांधर्व, स्वयंवर।

८—(क) नवखण्ड—इलावर्त, रम्यक, कुरु, हिरण्मय, किंपुरुष, भरत, केतुमाल, भद्राश्व, हरि।

(ख) नवधा भक्ति-श्रवण, कीर्तन स्मरण, पाद सेवन, अर्चन, वंदन, दास्य (दासता का भाव), सख्य (सखा भाव) आत्म निवेदन।

(ग) नवनिधि (कुवेर के खज़ाने)—महापद्म, पद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुंद, कुंद, नील, खर्व।

(घ) नवरस—शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भय, बीभत्स, अद्भुत, शांत।

(ङ) नवरत्न—हीरा, पन्ना, माणिक, नीलम, पुखराज, मोती, मूँगा, लहसुनिया, गोमेद।

(च) हिंदी के नवरत्न,—तुलसी, सूर, देव, बिहारी, केशव, कबीर, त्रिपाठी बंधु (भूषण, मतिराम), भारतेंदु हरिश्चन्द्र और चन्दवरदाई।

(छ) विक्रमादित्य के दरबार के नवरत्न—कालिदास, क्षपणक, अमरसिंह, वैताल भट्ट, खर्पर, शंकु, धन्वन्तरि, वाररुचि और वराह मिहिर।

(ज) ब्राह्मण के नव गुण—धृति, क्षमा, दया, अस्तेय (चोरी का त्याग), शौच, इन्द्रियनिग्रह, ज्ञान, विद्या और सत्य।

(झ) नवग्रह—सूर, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु।

(ञ) नवद्वार—दो आखें, दो कान, दो नाक के छेद, मुँह लिंग, गुदा।

९—(क) दश दिशायें—(१) पूर्व, (२), ईशान, (३) उत्तर, (४) वायव्य, (५) पश्चिम, (६) नैऋत्य, (७) दक्षिण, (८) अग्नि, (९) आकाश, (१०) पाताल।

(ख) दिशाओं के स्वामी—(१) इंद्र, (२) शंकर, (३) कुबेर, (४) वायु, (५) वरुण, (६) नैऋत, (७) यमराज, (८) अग्नि, (९) ब्रह्मा, (१०) विष्णु।

(ग) दशावतार—कच्छप, मीन, वाराह, नरसिंह वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बौद्ध, कल्कि।

(घ) धर्म के दश लक्षण—धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय निग्रह, धी (बुद्धि) विद्या, सत्य, अक्रोध।

(ङ) दश उपनिषद्—ईश, केन, कठ, प्रश्न मुंडक, मांडूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, छांदोग्य, बृहदारण्यक।

(च) दश दशा—गर्भवास, जन्म, बाल्य, कौमार, पोगंड, यौवन, स्थाविर्य, जरा, प्राणरोध, नाश।

१०—ग्यारह रुद्र—प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनंजय, जीवात्मा।

११—(क) बारह भूषण—नूपुर, किंकिण, हार, नथ, चूड़ी, मुदरी, सीस, फूल, बिरिया, कंकन, कंठश्री, बाजुबंद, टीका।

(ख) बारह प्रयोग—मारण, मोहन, उच्चाटण, कीलन, विद्वेषण, कामनाशन (ये छः बुरे प्रयोग हैं), स्तंभन, वशीकरण, आकर्षण, बंदीमोचन,

कामपूरण, वाक्प्रसारण (ये छः भले प्रयोग हैं)।

(ग) बारह राशियाँ—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुंभ, मीन।

(घ) बारह आदित्य—दिवः, बृहद्भानु, रवि, चक्षु, ऋचीक, भानु, विभावसु, अर्क, आशावह, सविता, आत्मा, सह्य।

१२—(क) चौदह विद्या—ब्रह्मज्ञान, रसायन, स्वरसाधन, वेद-पाठ, ज्योतिष, व्याकरण, धनुर्विद्या, जल-तरण, वैद्यक, कृषि, कोक, अश्वारोहण, नृत्य, समाधानकरण चातुर्य।

(ख) चौदह रत्न (जो समुद्र से निकले)—श्री, मणि, रंभा, वारुणी, अमी, शंख, गजराज, कल्पद्रुम, शशि, धेनु, धनु, धंन्वन्तरि, विष, बाज (उच्चैश्रवा घोड़ा)।

(ग) चौदह लोक—सात लोक ऊपर के और सात लोक नीचे के कुल चौदह।

१३-(क) सोलह शृंगार—सकल शुचि (शौच, दंतधावन, उबटनादि करना), मंजन, आमलवास (स्वच्छ वस्त्र पहनना), महावर, 'बाल संवारना, मांग में सिंदूर धरना, भालपर खौर, कपोल तथा चिबुक पर तिलक लगाना, केशर मलना, हाथों में मेंहदी लगाना, पुष्प, भूषण, सुगन्ध, मुखराग, दंतराग, अधर राग, काजल।

(ख) सोलह प्रकार की पूजा--आसन, स्वागत, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, मधुपर्क, पुनः आचमन, स्नान, वस्त्र, भूषण, गंध, पुष्प, धूप, दीप नैवेद्य और वंदन।

(ग) सोलह प्रकार का दान---भूमि, आसन, पानी, वस्त्र, दीपक, अन्न, यान, छत्र, सुगन्धित वस्तु, पुष्पमाल, फल, सेज, खड़ाऊ, गाय, सोना, चाँदी।

(घ) सोलह कला (चन्द्रमा की)--अमृता, मानदा, पूषा, तुष्टि, पुष्टि, रति, धृति, शशिनी, चन्द्रिका, कांति, ज्योत्स्ना, श्रिय, प्रीति, अंगदा, पूर्णा, पूर्णामृता।

१४---पुराण १८---मत्स, कूर्म, लिंग, शिव, स्कंद, अग्नि, विष्णु नारद, भागवत्, गरुड़, पद्म, वाराह, ब्रह्माण्ड, ब्रह्मवैवर्त, मारकण्डे, वामन, ब्रह्म भविष्य।

१५---नक्षत्र २७---अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वा फाल्गुनि, उत्तरा फाल्गुनि, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, सतभिखा, पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा, रेवी।

१६---३३ देवता---८ वसु, ११ रुद्र, १२ आदित्य, इन्द्र और प्रजापति मिलकर ३३ देवता कहलाते हैं।

सातवाँ अध्याय

(१) एक भाव विषयक भिन्न-भिन्न कवियों की उक्तियाँ

किसी काव्य का भाव समझने के लिये जैसे पर्यायवाची विलोम और अनेकार्थवाची शब्दों के ज्ञान की आवश्यकता है वैसे ही एक भाव विषयक भिन्न-भिन्न कवियों की उक्तियों के संग्रह की भी बड़ी आवश्यकता होती है इस प्रकार के संग्रह से शब्द-भण्डार की वृद्धि के साथ-साथ तुलना करने की शक्ति उत्पन्न होती है। इसी कारण यहाँ पर कुछ उक्तियाँ आदर्शवत् उद्धृत की जाती है :—

१—(क) भावी प्रबल है :—

(१) सुनहु भरत भावी प्रबल, विलखि कहेंं मुनिनाथ।
हानि लाभ, जीवन मरन, जस अपजस विधिहाथ॥
—तुलसी

(२) राम न जाते हरिन सँग, सीय न रावन साथ।
जो 'रहीम' भावी कतहुँ, होत आपके हाथ॥
—रहीम

(३) टूटै टूटनहार तरु, वायुहि दीजत दोष।
त्यौं अब हर के धनुष को हम पर कीजत रोष॥
हम पर कीजत रोष कालगति जानि न जाई।
होनहार ह्वै रहै मिटै मेटे न मिटाई।

होनहार ह्वै रहे मोहमद सबको छूटै।
होय तिनूका वज्र वज्र तिनका ह्वै टूटै॥

—केशव

(ख) विधाता के अंक कोई मिटा नहीं सकता :—

(१) हँसि बोले रघुवंस कुमारा।
विधिकर लिखा को मेटनहारा॥

—तुलसी

(२) सुदामा—

छोड़ि सबै जक* तोहिं लगी बक,
आठहु याम† यही बक ठानी।
जातहिं देहे लदाय लढ़ा‡ भरि,
ऐहौं लिये तु यही जियजानी॥
पावैं कहाँ ते अटारी अटा,
जिनको है लिखी विधि टूटिय छानी।
जो पै दरिद्र ललाट लिखो कहु,
को त्यहि मेटि सकैगो अयानी॥

—नरोत्तम

(३) होत उदोत प्रभाकर के दिसि
पच्छिम तौ कछु धोखो नहीं है।
फूले सरोज पहारन पै अरु
मेरु चलै तो चलै कबहीं है॥
पावक शीतल होय समय इक
'मोतियराम' विचारि कही है।

* एक ही बात बार-बार कहना। † आठो पहर (दिन-रात)। ‡ गाड़ी लदाना।

अंक लिखे न मिटै विधि के
यह वेद-पुरानन माहिं सही है ॥

—मोतीराम

(४) जो सुख भाल लिख्यो न गुपाल
तो मेल-मिलाप महान को झूठो ।
मित्र सों मित्र, विरंचि सों पुत्र,
तउ हिम जारत कंज अनूठो ॥
ससि सिंधु धस्यो हर सीस बस्यो,
करि कोटि खस्यो पै कलंक न छूटो ।
चंद्र को यार चकोर को कौर
अंगार कहो करि गौर को रूठो ।

(५) कोऊ दूर न कर सके, उलटे विधि के अंक ।
उदधि पिता तउ चंद्र को, धोइ न सक्यो कलंक ॥

(ग) चतुरानन की चूक—

(१) फिरत नारि-नर अति पछिताहीं ।
दैवहिं दोष देहिं मनमाहीं ॥
सहित विषाद परस्पर कहहीं । विषाद दुःख
विधि करतब उलटे सब अहहीं ॥
बिल्कुल निपट निरंकुस निठुर निसंकू । निडर
जेहि ससि कीन्ह सरुज सकलंकू ॥
रूख कल्पतरु, सागर खारा ।
तेहि पठये वन राजकुमारा । —तुलसी

(२) गृहिन* दरिद्र ग्रह त्यागिन विभूति† दीन्हीं,
पापिन प्रमोद पुन्यवंतन छलो गयो ।

---

* गृहस्थ । † ऐश्वर्य, धन । आनन्द

शनि को सुचित्त*, रवि ससि को कलेस,
लघु व्यालन आनंद, सेष भारन दलो गयो॥
फेरन फिरावत गुनिन गृह द्वार-द्वार,
गुन ते विहीन ताहि बैठक भलो दयो।
कौन कौन चूक तेरी कहौं एक आनन सों,
नाम चतुरानन† पै चूकतै चलो गयो॥

(३) चंदन में फूल और ऊख में न दीन्हें फल,
बड़े-बड़े कटंक गुलाबन के डारे की।
कोयल सुबानी है अमर कीन्हें कागन को,
छोटी-छोटी अखियाँ बनाईं गज भारे की॥
सोने में सुगंध नाहि हीरा विषमूल कीन्हें,
अगिन सधूम गति थिर नहिं पारे की।
माखैं 'सीताराम' हेरि-हेरि एक आनन तें,
कौन-कौन चूक चतुरानन बिचारे की।
—सीताराम।

(४) चारु चरित तेरे चतुरानन ! भक्ति युक्त सब गाते हैं।
इस सुविशाल विश्व की रचना तुझ से ही बतलाते हैं।
कहते हैं तुझ में चतुराई इतनी है सविशेष।
जिसको देख चकित होते हैं शेष, महेश, रमेश।
दोषराशि से दूषित तेरी करतूतें पर पाते हैं।
अतः यहाँ पर कोई-कोई उनमें से दरसाते हैं॥
यदि तेरे कर में कुछ होता कला-कुशलता‡ लेश।
काक और पिक एक रंग के क्यों होते लोकेश॥
वायस विहरे हैं गलियों में हंस न पाये जाते हैं।
कंटकादि सब कहीं कमल-कुल कहीं कहीं दिखलाते हैं।

* सुखी। † ब्रह्मा। ‡ कारीगरी का गुण।

मृगमद* पाने का क्या कोई था ही नहीं सुपात्र।
जो तूने उससे पशुओं का किया सुगंधित गात्र॥
कटु इंद्रायण में सुंदर फल ! मधुर ईख में एक नहीं।
बुद्धि मांद्य† की सीमा तूने दिखलाई कहीं-कहीं॥
निपट सुगंध-हीन यदि तूने पैदा किया पलास।
तो क्या कंचन में भी तुझको करना न था सुवास॥
घोड़े जहाँ अनेक, गधोंका वहाँ काम क्या था ! सच कह
विदित हो गई तेरी सारी चतुराई, तू चुप ही रह॥
एकानन हम, चतुरानन तू, अतः कहें, क्या और विशेष।
बुद्धिमान जन को इतना ही बतलाना बस है भुवनेश‡॥

—पं महावीर प्रसाद द्विवेदी।

(घ) सत्य सब सुकृतियों की जड़ है।

(१) सत्य मूल सब सुकृति§ सोहाई।
वेद, पुरान विदित मुनि गाई॥
नहिं असत्य सम पातक पुंजा।
गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा‖॥

—तुलसी।

(२) साँच बरोबर तप नहिं, झूठ बरोबर पाप।
जाके हिरदै साँच है, ताके हिरदै आप॥

—कबीर।

(३) साँचे स्राप न लागई, साँचे काल न खाइ।
साँचे को साँचा मिले, साँचे माँहि समाइ॥

—कबीर।

---

* कस्तूरी। † मंदता। ‡ लोकों के स्वामी, ब्रह्मा। § अच्छी करनी, पुण्य। ‖ घुंघुची।

(४) सत्य ते प्रतीत होय जाति सब देसन में,
सत्य ते सचाई और सत्य ते भलाई है।
सत्य ही ते सुख पावै जस औ धरम बढ़ै,
सत्य ही ते लेवा-देवा, सत्य ते बड़ाई है।
'साधूलाल' कहै होय आदर बहुत याते।
मुक्ति होति अंत यह पुन्य-फलदाई है॥
सत्य बिन मानुस को दरजा रहत नाहिं,
याते चतुरानन* सु सत्य उपजाई है॥

—साधूलाल।

(५) झूठ कबहुँ नहिं बोलिए, झूठ पाप को मूल।
झूठे की कोउ जगत में, करै प्रतीति न भूल॥

—संकलित।

(६) सोभित सो न सभा जहँ वृद्ध न,
वृद्ध न ते जु पढ़े कछु नाहीं।
ते न पढ़े जिन साधु न साधित,
दीह† दया न दिखै तिन माहीं॥
सो न दया जु न धर्म धरै,
धर्म न सो जहँ दान वृथा हीं।
दान न सो जहँ साँच न 'केसव',
साँच न सो जु बसै छल छाँहीं॥

—केशव।

(ङ) मांगना बुरा है—

(१) 'रहिमन' यांचकता‡ गहे, बड़े छोट ह्वै जात।
नारायण हूँ को भयो, बावन आंगुर गात॥

—रहीम।

---

* ब्रह्मा। † बड़ी। ‡ मांगना।

(२) सब से लघु है मांगनो, यामें फेर न सार।
बलि-मख जांचत ही भयो, बावन तन करतार ॥
—वृंद।

(३) 'तुलसी' कर पर कर धरो, करतल* कर न धरो।
जा दिन करतल कर धरो; ता दिन मरन धरो ॥
—तुलसी।

(४) मन सनमान को पयान होत पहिले ही,
तद्यपि निपट गुनी गिरिहूँ ते गरुवो†।
कहै कविदेव जस वार-वार उच्चरत,
चुटकी देत लागे अति कुटकी ते करुवो‡ ॥
अति ही अजान बाहु तऊ तन थोरो दीस,
मनमांहि लसे जो हिंडोरो कोसो मरुवो।
तृनहूँ ते, फेनहूँ ते, फेनहूँ ते, फूलहू ते,
मेरे जान मांगिवो है सब ही ते हरुवो ॥
—देव।

(५) मांगत ही मैं बड़ेन की, लघुता होत अनूप।
बलि-मख जांचत ही धरे, श्रीपतिहू§ लघु रूप ॥
—दीनदयाल गिरी।

(च) प्रेम का प्रभाव।

(१) प्रेम विचित्र वस्तु है जग में अद्भुत शक्ति निधान।
प्रेम मनुज को जाग्रत में भी रखना सुप्त समान ॥
प्रेम नशा जब छा जाता है आँखों में भरपूर।
उसी दिवस से समझो उनसे हुई नींद भी दूर ॥

(२) प्रेम एक है पर प्रभाव है उसका युगल प्रकार।
प्रेम संयोग-वियोग काल में सुखप्रद-दुखद अपार ॥

---

* हथेली। †भारी। ‡कड़ुवा, कठिन। § विष्णु भगवान।

मधुर सुगंध-विहीन पुष्प ज्यों चंद्र चंद्रिका हीन।
त्यों फीका जग में मनुष्य का जीवन प्रेम विहीन॥
—रामनरेश त्रिपाठी।

(३) जा घट प्रेम न संचरै, सो घट जान मसान।
जैसे खाल लोहार की, साँस लेत बिनु प्रान॥
—कबीर।

(४) प्रीति सीखिवो चाहिए, छीर-नीर के पास।
वह दै कीमति मधुर छबि, वह संग सहै हुतास*॥
—दीनदयाल।

(५) 'दास' परस्पर प्रेम लखौ गुन
छीर का नीर मिले सरसातु है।
नीरै बेंचावत आपुने मोल
जहाँ-तहाँ जायके छीर बिकातु है॥
पावक* जारन छीर लगै तब
नीर जरावत आपुनो गात† है।
नीर की पीर निवारन कारन
छीर धरी-ही-धरी उफनात है॥
—दास।

(६) सब मिलि गावहु प्रेम बधाई।
यह संसार रतन एक प्रेमहि और वादि‡ चतुराई।
प्रेम बिना फीकी सब बातें कहहु न लाख बनाई।
जोग-ध्यान-जप-तप-व्रत-पूजा प्रेम बिना बिनसाई।
प्रेमहि सों हरि हू प्रगटत हैं जदपि ब्रह्म जगराई॥।
तासों यह जग प्रेम सार है व्यर्थ है आन उपाई।
—हरिश्चन्द्र।

---

* अग्नि। † शरीर। ‡ व्यर्थ। ॥ संसार के स्वामी।

(छ) असमय में कोई साथी नहीं—

(१) बधिक बध्यो मृग बान ते, रुधिरो दियो बताय।
अति हित अनहित होत है,' तुलसी' दुरदिन पाय ॥

—तुलसी।

(२) असमय मीत काको कौन।
कमल को रवि परम हित है, कहत श्रुति* अस वैन।
घटत बारि बिलोकि दुरदिन करत कमलहिं दहन ॥
रस रहत लवलीन मधुकर प्रेम चित दे चैन।
निरस होते त्यागि सुमनहिं तुरत कीजत गौन ॥
बध्यो व्याधा बान मृग तन दुर्‍यो कानन† भौन।
तन के श्रोणित भयो वैरी, खोलि दीन्हों नैन ॥
जगत हित है चित्त जौं लौ खोलि देखौ नैन।
सूर श्याम सराहि देखो एक राधा रौन‡ ॥

—सूर।

(३) जब लौं रहे सुख राज को तब लौं सबै सेवा करैं।
पुनि राज बिगड़े कौन मंत्री तनिक नहिं चित में धरैं ॥
जे विपति हू में पालि पूरब प्रीति काज सवाँरहीं।
ते धन्य नर तुम सारिखे दुरलभ अहैं संशय नहीं ॥

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

(४) फल हीन महीरुह को खग वृन्द
तजैं बन को मृग भस्म भये।
मकरन्द§ पियैं अरविन्द मलिन्द
तजैं सर सारस सूख गये ॥
धनहीन मनुष्य तजैं गनिका‖
नृप को शठ सेवक राज हये।

*वेद। †बन में छिप गया। ‡रमण (स्वामी)। §रस। ‖ वेश्या।

बिन कारज कौन सखा जग में
सब स्वारथ के हित होत भये ॥
—संकलित।

(५) स्वारथ के सब होत हैं, विनु स्वारथ कोउ नाहिं।
सेवैं पंछी सरस तरु, निरस भये उड़ि जाहिं॥
—वृन्द

(६) सर सूखे पंछी उड़ैं, औरहिं सरन* समाहिं॥
—रहीम।

(७) राज भ्रष्ट लखि भूप को, त्यागि जाहिं सब दास।
ज्यों सर सूखो देखि कै, हंस न आवत पास॥

(ज) गंगा गौरव—

(१) ब्रह्म जो व्यापक वेद कहैं,
गम नाहिं गिरा गुन ज्ञान गुनी को।
जो करता भरता हरता
सुर-साहिब, साहिब दीन-दुनी को॥
सोइ भयो द्रवरूप† सही जु है
नाथ विरंचि महेश मुनी को।
मानि प्रतीति सदा 'तुलसी' जल
काहे न सेवत देवधुनी‡ को॥
—तुलसी।

(२) चामर-सी चंदन-सी, चंद ऐसी,
चाँदनी चमेली चारु चाँदी-सी सुघर है।
कुंद-सी कुमुद-सी, कपूर-सी कपास-ऐसी,
कल्पतरु कुसुम-सी कीरति-सी बर है॥
'पूरन' प्रकाश-ऐसो कांस-ऐसी हास-ऐसी,

*तालाब। † पिघला हुआ रूप। ‡ गंगा।

सुख के सुपास-ऐसी सुखमा* की घर है।
पाप को जहर-ऐसी कलि का कहर†ऐसी,
सुधा की छहर‡ ऐसी गंगा की लहर है॥
—पूर्ण।

(३) विधि के कमंडलु की सिद्धि है प्रसिद्ध यही,
हरि पद-पंकज-प्रताप की लहर है।
कहै 'पद्माकर' गिरीस||-सीस-मंडल की,
मुंडन की माल तत्काल अघहर है॥
भूपति भगीरथ के रथ को सुपुन्य-पथ,
जन्हु जप जोग फल फैल की फहर है।
छेम की छहर गंगा! रावरी लहर,
कलि काल को कहर जमजाल को जहर है॥
—पद्माकर।

(४) जम को सब त्रास विनास करी
मुख ते निज नाम उचारन में।
सब पाप-प्रतापहिं दूर हर्‌यौ
तुम आपन आप§ निहारन में॥
अहो गंग! अनंग के शत्रु¶ करे
बहु नेक जलै मुख डारन में।
गिरिधारन जू कितने विरचे
गिरिधारन[१] धारन धारन में॥
—गिरिधरदास।

---

* शोभा। † आफत ढहानेवाली। ‡ फैलाव। || महादेवजी।
§ जल। ¶ कामदेव के शत्रु, महादेव। [१] पर्वत धारण करने वाले, कृष्ण।

(५) सुभग स्वर्ग-सोपान सरिस सब के मनभावत।
दरसन मज्जन पान त्रिविध भव ताप नसावन॥
श्री हरि-पद-नख-चंद्रकांत मनि-द्रवित सुधारस।
ब्रह्म कमंडल-मंडन, भव-खंडन सुर सरवस॥
शिव-सिर-मालती माल भगीरथ नृपति पुन्य फल।
ऐरावत गज गिरिपति हिमनग* कंठहार कल॥
सगर-सुवन सठ सहस परस जल मात्र उधारण।
अगिनित धारा रूप धारि सागर संचारण॥
—भारतेंदु हरिश्चंद्र।

(६) विधि वरदायक की सुकृति-समृद्धि-वृद्धि,
संभु सुरनायक की सिद्धि की सुनाका† है।
कहै 'रत्नाकर' त्रिलोक-सोक नासन को,
अतुल त्रिविक्रम‡ के विक्रम की साका|| है।
जम-भय-भारी तम-तोम§ निवारन को,
गंग यह रावरी तरंग तुंग राका¶ है।
सगर-कुमारन के तारन की श्रेनी सुभ,
भूपति भगीरथ के पुन्य की पताका है॥
—रत्नाकर।

(७) शम्भु के गरल की गरलता न दूर होती,
सहज तरलता न सिन्धु को निवहती।
हिमवान महिमा-निधान बन पाता नहीं,
शुचिता न लोक में महत्ता पाती महती॥
'हरि औध' पावनता मिलती पाताल को न,
भूतल में भरित अपावनता रहती।

* शैलराज हिमालय पर्वत। † सुंदर। ‡ विराट रूप § भगवान।
|| शक्ति। ¶ अंधकार के समूह।

करते असुरता असुर के समान सुर,
सुर-सरि-धारा जो सहारा दे न बहती ॥
—अयोध्या सिंह उपाध्याय ।

(८) वैद की औषधि खाऊँ कछू न करौ व्रत-संजमरी सुनमोसे
ते रोइ पानी पियौ रसखानि संजीवन-लाभ लहौं सुखतोसे ।
एरी सुधामयी भागीरथी ! कोउ पथ्य-कुपथ्य करै तऊयोसे
आक धतूरे फिरै विष खात फिरै सिव तेरे भरोसे ॥
—रसखान ।

(९) गंगा-गंगा कहत हो निर्मल होत शरीर ।
गान आदि ध्याये सुयश न्हाये रहत न पीठ ॥
—स्वामी रामतीर्थ ।

(झ) वसंत वर्णन—

(१) वायु बहारि वहारि रहे छिति
बीथी सुगंधन जाती सिंचाई ।
त्यों मधु माते मलिन्द* सबै
जय के करखान† रहे कछु गाई ॥
मंगल पाठ पढ़ै 'द्विज देव'
सबै बिधि सो सुषमा उपजाई ।
साजि रहे सब साजि घने
वन में ऋतुराज की जानि अवाई ॥
—द्विजदेव ।

(२) कूकि उठीं कोकिलानि गूंज उठी भौंर-भीर,
डोलि उठे सौरभ‡ समीर सरसावने ।
फूलि उठीं लतिका लवंगन की लोनी लोनी,
झूलि उठीं डलियाँ, कदम्ब सुख पावने ॥

---

* भौंरे । † उभड़ने वाली बात । ‡ सुगन्ध ।

चहकि चकोर उठे कीर करि शोर उठे,
टेरि उटीं सारिका विनोद उप जावने।
चटकि 'गुलाव' उठे लटकि सरोज पुंज,
खटकि मराल ऋतुराज सुनि आवने॥

—गुलाव

(३) बरन बरन तरु फूले उपवन वन
सोई चतुरंग संग दल लहियतु है।
बन्दीजन बोलद विरद वीर कोकिल है,
गुंजत मधुप गुनगन गहियतु है॥
आवे आस-पास पुसपन* की सुवसा सोई
सौंधे की सुगन्धि महि सने रहियतु है।
सोभा को समाज 'सेनापति' सुख साज आज,
आवत वसंत ऋतुराज कहियतु है॥

—सेनापति

(४) कूलन कछारन में तथा केलि कुंजन में,
क्यारिन में कलित कलीन किलकंत है।
कहै 'पद्माकर' परागहू में पौनहू में,
पातन में पीकन पलासन पगंत है॥
द्वार में, दिसान में, दुनी में देस-देसन में,
देखो दीप-दीपन में, दीपति दिपंत† है।
विपित में, व्रज में, नवेलिन में, वेलिन में,
बनन में, बागन में, बगरो ‡ बसत है॥

—पद्माकर।

---

* पुष्प। † शोभित। ‡ फैला है।

(५) नवल* वन फूली द्रुम† वेली।
लहलह लहकहिं महमह महकहिं मधुर सुगंधहि रेली॥
गूँजहिं भँवर विहंगम डोलहिं बोलहिं प्रकृति वधाई।
पुतली सी जित-तित तितलीगन फिरहिं सुगंध लुभाई॥
लहरहिं जल लहकहिं सरोज मन, हिलहिं पात अरु डारी
लखि ऋतुपति‡ आगम सिगरे जग मनहुँ कुलाहल भारी

—हरिश्चन्द्र।

(६) आ-आ प्यारी वसंत सब ऋतुओं में प्यारी।
तेरा सुभागमन सुन फूली केसर क्यारी॥
सरसों तुझको देख रही है आँख उठाये॥
गेंदें ले-ले फूल खड़े हैं सजे-सजाये॥ १॥
पेड़ बुलाते हैं तुझको टहनियाँ हिला के।
बड़े प्रेम से टेर रहे हैं हाथ उठा के॥
पत्तों ने गिर-गिर तेरा पांवड़ा-बिछाया।
झाड़-पोंछ वायू ने उसको स्वच्छ बनाया॥ २॥
फुल सुंघनी की टोली उड़-उड़ डाली-डाली।
झूम रही हैं मद में तेरे हो मतवाली॥
इस प्रकार है तेरे आने की तैयारी।
आ आ प्यारी वसंत सब ऋतुओं में प्यारी॥ ३॥

—बालमुकुंद गुप्त।

(ब) विनोद और व्यंग्य—

(१) विलग मत मानो ऊधो प्यारे।
यह मथुरा काजर की ओवरी जो आवैं सो कारे॥
तुम कारे सुफलक-सुत कारे, कारे श्याम हमारे

* नयी। † वृक्ष। ‡ वसंत। आना। बिछौना।

मानो एक माठ में बोरैं जमुना-जल जु पखारे।
ता गुन श्याम भई कालिंदी 'सूर' श्याम गुन न्यारे॥

—सूर।

(२) विंध्य के बासी उदासी तपोव्रतधारी,
महा बिनु नारि दुखारे।
गौतम-तीय तरी 'तुलसी' सो,
कथा सुनि भे मुनि वृन्द सुखारे॥
कीन्हीं भली रघुनायक जू
करुणा करि आनन को पगुधारे।
ह्वै हैं सिला सब चंद्र मुखी
परसे पद मंजुल कंज तिहारे॥

—तुलसी।

(३) कमला थिर न 'रहीम' कह, यह जानत सब कोय।
पुरुष पुरातन की बधू, क्यों न चंचला होय।

—रहीम।

(४) चिर्जीवौ जोरी जुरै, क्यों न सनेह गंभीर।
को घटि ये वृषभानुजा*, वे हलधर के बीर† ॥

—बिहारी।

(५) जगत के कारन, करन चारों वेदन के;
कमल में बसे वे सुजान ध्यान धरिकै।
मोखन अवनि दुख-सोखन तिलोकन के,
समुद्र में जाय सोये सेस सेज करि कै॥

* वृषभान की बेटी, वृषभ (बैल) की बहिन। † बलदाऊ हल धारण करनेवाला, बैल।

मदन जरायो जो सँहारै दृष्टि ही सो सृष्टि,
बसे हैं पहार वे ऊ भाजि हरवारि कै।
बढ़ विधि, हरि और हर ते न कोऊ तेऊ,
खाट पै न सोवैं खटमल सो डरि कै॥

—प्रीतम।

(६) पौर के किवार देत, घरै सबै गारि देत,
साधुन को दोष देत प्रीति न चहत हैं।
मंगन को ज्वाब देत बात कहे रोये देत,
लेत-देत भाँजी देत ऐसे निबहत हैं।
वागेहू को बन्द देत, बारन की गाँठ देत,
धोतीहू की काँछ देत धीरज गहत हैं।
एते पै सबैई कहैं दाऊ कछु देत नाहीं,
'दाऊ जू' तौ आठौ जाम देत ही रहत हैं॥

—:o:—

आठवाँ अध्याय

अर्थ करना

अर्थ क्या है ? किसी गद्यमय या पद्यमय वाक्य को सुन कर या पढ़कर जो कुछ समझ में आये, उसे 'अर्थ' कहते हैं। अर्थ करने के कई ढंग हैं। जिनका स्पष्टीकरण नीचे किया जाता है :—

(१) "कहेउ कृपाल भानुकुल नाथा।
परहरि सोच चलहु बन साथा।।
नहिं विषाद कर अवसर आजू।
वेगि करहु बन-गमन समाजू।।"

यदि इस पद्य पर विचार करोगे तो तुम्हें ज्ञात होगा कि इसके सब पद ठीक स्थान पर नहीं है। इसके पदों को व्याकरण के नियमानुसार रखने से तुम्हें इसका यह रूप मिलेगा :—

"कृपालु भानुकुल नाथा कहेउ (कि) (तुम) सोच परिहरि, (मेरे) साथा बन चलहु। आजू विषाद कर अवसर नहिं (है) (अतः) बन-गमन-समाजू वेगि करहु"।

इस प्रकार गद्य की भाँति पद्य के सब पदों को नियमानुसार यथास्थान रखने को "अन्वय करना" कहते हैं।

किसी पद्य का अन्वय* कर लेने पर उसका अर्थ लिखना सरल हो जाता है। अब यदि उक्त पद्य का अर्थ लिखोगे तो यह रूप होगा :—

"दयालु सूर्यकुल के स्वामी भगवान (राम) ने कहा कि तुम चिंता छोड़कर मेरे साथ बन चलो। आज शोक करने का अवसर नहीं है। अतः बन चलने की तैयारी शीघ्र करलो" इस प्रकार के अर्थ करने को 'अनुवाद' करना कहते हैं।

यदि इस अनुवाद पर तुम विचार करोगे तो तुम्हें मालूम होगा कि इसमें किसी कठिन शब्द का अर्थ छूटने नहीं पाया है। संज्ञा का पर्याय संज्ञारूप में और विशेषण का पर्याय विशेषण रूप में रखा गया है। यथासंभव वाक्य का रूप वैसा ही रखा गया है जैसा कि पद्य में था परंतु आवश्यकतानुसार विभक्तियां और क्रियायें बढ़ाई गई हैं।

(२) "नर-अहार रजनीचर करहीं।
कपट-भेस वन कोटिक धरहीं॥
लागै अति पहार कर पानी।
विपिन-विपति नहिं जात बखानी॥

अन्वय—रजनीचर नर-अहार करहीं (और) वन (में) कोटिक कपट-भेस धरहीं। पहार कर पानी अति लागै, विपिन-विपति नहिं बखानी जात॥

---

* अन्वय करने में सबसे पहले क्रिया ढूँढो फिर उसका कर्ता। तत्पश्चात जो पद जिससे संबंध रखते हों, उनको ढूंढ लो। फिर क्रमशः उनको लिखलो। यदि उसमें कहीं किसी बाहरी पद के रखने की आवश्यकता प्रतीत हो तो उसे कोष्ठ के भीतर रख दो।

अनुवाद—रात में चलने वाले (राक्षस) मनुष्यों को खा जाते हैं और वे अनेक कपट रूप धारण करते हैं। पहाड़ का पानी भी बहुत लगता है। वन की विपत्ति कही नहीं जाती।

यदि इस पद्य का अर्थ इस प्रकार लिखा जाये कि :—

रजनीचर = (रजनी = रात + चर = चलने वाले) राक्षस। पानी लागे = (पानी लगना = मुहाविरा है) हानि पहुँचाना॥

जब श्री सीता जी ने यह सुना कि भगवान राम वन जा रहे हैं तब वे बहुत घबराईं और उनके साथ बन जाने के लिए हठ करने लगीं। उस समय भगवान राम, सीताजी को अयोध्या में रह जाने के उद्देश्य से समझा रहे हैं कि—

वन में राक्षस आदमियों को खा जाते हैं और वे अनेक कपट रूप बनाकर फिरा करते हैं। वहाँ पीने के लिए पहाड़ का पानी मिलता है जो स्वास्थ्य बिगाड़ देता है! इस प्रकार वन में अनेक प्रकार की विपत्ति भोगनी पड़ती है जो कहने योग्य नहीं है। (अतः तुम घर पर ही रहो।)

तो—इस प्रकार के अर्थ को 'अर्थ' 'सरलार्थ' या 'स्पष्टार्थ' कहेंगे।

यदि किसी पद्य का अर्थ लिखने को कहा जाय तो निम्नलिखित बातों पर ध्यान रखो :—

(१) जो शब्द व्याख्या की अपेक्षा रखते हैं उनकी व्याख्या कर दो।

(२) मुहाविरों और अंतर्कथाओं को समझा दो।

(३) कौन, किससे, किस स्थान पर, किस समय और किस उद्देश्य से कहता है, समझ लो। तब दिये हुए पद्य का अर्थ शुद्ध और साधु भाषा में लिखो।

(३) "दिन दस आदर पाइके, करले आपु बखान।
जौ लगि काग सराध पख, तौ लगि तो संमान ॥"

अन्वय—हे काग! जौ लगि सराध पख (है) तौ लगि तो संमान (है) (अतः) दस दिन (का) आदर पाइके (तू) आपु बखान करले।

शव्दार्थ—सराध पख=(श्राद्ध पक्ष) क्वार मास का पहला पक्ष (जिसे पितृपक्ष भी कहते हैं) इस पक्ष में श्रद्धालु जन अपने पितरों के निमित्त कौवों को भोजन देते हैं। दस दिन=(मुहाविरा है) थोड़े दिनों तक।

सरलार्थ=कोई व्यक्ति श्राद्ध पक्ष में कौवे को अपने संमान का अहंकार करते हुए देखकर उसका अभिमान तोड़ देने के अभिप्राय से कह रहा है कि:—

हे कौवा! तू इस श्राद्ध पक्ष में लोगों द्वारा सम्मानित होने के कारण अपनी शेखी बघार ले; पर यह निश्चय समझे रहे कि केवल श्राद्ध पक्ष भर ही तेरा सम्मान होगा! अधिक दिन नहीं।

यदि उक्त दोहे का अर्थ इस प्रकार लिखें कि:—"दुष्ट स्वभाव वालों का सम्मान किसी कारण वश थोड़े ही दिन तक हो सकता है, अधिक समय तक नहीं। हे दुष्ट! यह बात तू भली भाँति याद करले।

तो इस प्रकार के अर्थ को 'भावार्थ' या 'सारांश' अथवा 'तात्पर्य' कहते हैं।

'भावार्थ' या 'सारांश' लिखने में अनुवाद या सरलार्थ करने की आवश्यकता नहीं है। जिस अभिप्राय से वह लिखा गया है उसी को समझ कर सरल भाषा में लिख देना उचित है।

ऊपर के उदाहरणों से तुम्हें भली भाँति ज्ञात हो गया होगा कि अर्थ लिखने के तीन ढँग हैं :—

(१) अनुवाद, (२) स्पष्टार्थ या सरलार्थ, (३) भावार्थ।

जो विधि पद्य के अर्थ लिखने की बताई गई है, वही ढंग गद्य के अर्थ लिखने का भी है। जैसा कि निम्न लिखित उदाहरणों से प्रगट होगा :—

(१) शरीर में चरित्र ही मुख्य वस्तु है। वचन से उपदेशक और क्रियादिक से कैसा ही धर्मनिष्ठ क्यों न हो पर यदि उसके चरित्र शुद्ध नहीं हैं तो वह लोगों में टकसाल न समझा जायगा और उसकी बातें प्रमाण न होंगी। महात्मा और दुरात्मा में इतना ही भेद है कि उनके मन, वचन, कर्म एक रहते हैं और इनके भिन्न-भिन्न।

शब्दार्थ—धर्मनिष्ठ = धर्म में प्रेम रखने वाला।

टकसाल = (टंकशाला संस्कृत शब्द) वह स्थान जहाँ पर रुपये, पैसे आदि सिक्के ढाले जाते हैं। यहाँ पर इसका अर्थ है—मान्य।

महात्मा = महान् है आत्मा जिसकी, भले विचार वाला व्यक्ति।

दुरात्मा = दुष्ट है आत्मा जिसकी, बुरे विचार वाला मनुष्य।

गद्यार्थ—मनुष्य में प्रधान वस्तु है आचरण। कोई मनुष्य मुख से बहुत सुन्दर शिक्षा देता हो, पूजा-पाठ, तिलक मुद्रादि क्रियाओं से बहुत बड़ा धार्मिक बनता हो, परन्तु यदि वह बुरे आचरण का है, चरित्रहीन है तो वह लोगों में मान्य न होगा और उसकी बातें भी विश्वास के योग्य न समझी जायँगी। भले

और बुरे विचार वाले व्यक्तियों में केवल इतना ही अंतर है कि भले पुरुष (महात्मा पुरुष) जो कुछ मन में सोचते हैं, वही मुख से कहते हैं, और वैसाही कार्य करके दिखला देते हैं परंतु दुष्ट विचारवाले मन में सोचते हैं कुछ, कहते हैं कुछ और करते हैं कुछ।

(२) भारत माता का वचन—इसी हमारे अंक-आलबाल में कैसे पुण्य-कल्पतरु हुए हैं जिनकी कीर्ति-शाखा दसो दिशा में भी नहीं समा सकी।

सूचना—इस गद्य की भाषा आलंकारिक है। इसमें 'अंक', 'पुण्य' और 'कीर्ति' उपमेय तथा 'आलवाल', 'कल्पतरु' और 'शाखा' उपमान हैं। उपमेय पर उपमान का आरोप होने से रूपकालंकार है।

शब्दार्थ—आलवाल=थाला, गमला जिसमें पौधे लगाये जाते हैं।

दसोदिशा=(द्विगुसमास) सर्वत्र।

गद्यार्थ—भारत माता कहती हैं कि हमारे इसी गोद रूपी गमले से कल्पवृक्ष के समान ऐसे-ऐसे पुण्यात्मा पुरुष उत्पन्न हुए हैं जिनकी कीर्ति, शाखा की भाँति संसार में सर्वत्र फैली हुई है।

सारांश—यह कि हमारे देश में ऐसे अनेक दिव्य पुरुषों ने जन्म लिया है जो अपने गुणों के कारण सारे संसार में प्रसिद्ध हैं।

(३) हरिश्चन्द्र—(ऊपर देखकर) अहा! स्थिरता किसी को भी नहीं है। जो सूर्य उदय होते ही पद्मिनी-वल्लभ और लौकिक, वैदिक दोनों कार्यों का प्रवर्त्तक था, जो दोपहर तक अपना प्रचंड-प्रताप क्षण-क्षण बढ़ाता गया, जो गगनांगन का दीपक और कालसर्प का शिखामणि था, वह इस समय परकटे

गिद्ध की भाँति अपना सब तेज़ गवाँकर देखो समुद्र में गिरा चाहता है।

शब्दार्थ—पद्मिनी-वल्लभ = कमलिनी को प्यारा।
लौकिक = लोक संबंधी, सांसारिक।
वैदिक = वेद संबंधी।
प्रवर्त्तक = प्रवृत्ति कराने वाला, लगाने वाला।
गगनांगन = गगन (आकाश) रूपी आंगन
शिखामणि = मस्तक मणि (वह मणि जिसके न रहने से सर्प मर जाता है।)

भावार्थ—

(महाराज हरिश्चन्द्र श्मशान के स्थान में संध्या समय सूर्य को डूबते हुए देख कर कह रहे हैं कि)

संसार में कोई सदैव एक ढंग से रहने वाला नहीं है। सभी चल हैं। देखो यही सूर्य जब प्रातःकाल उदय हुआ था तब उसे देखकर कमलिनी खिल उठी थी और सभी लोग सांसारिक और वैदिक कामों में लग गये थे! यह दोपहर तक प्रत्येक क्षण अपना तेज (गर्मी) बढ़ाता ही गया था। यह आकाशरूपी आंगन को दीपक के समान प्रकाशित करने वाला और समय रूपी सर्प का मस्तक मणि था (सूर्य ही से समय का बोध होता है)। वही सूर्य अपना सारा प्रताप खो कर समुद्र में ऐसे गिरना चाहता है जैसे पंख कट जाने पर गिद्ध बेलाग नीचे गिर पड़ता है।

भावार्थ यह है कि संसार में सदा स्थिर रहने वाला कोई नहीं है।

अब अधिक उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं है। किसी पद्य या गद्य भाग का अर्थ लिखना अभ्यास पर निर्भर है

जिस विद्यार्थी का अध्ययन जितना ही अधिक होगा उसकी योग्यता उतनी ही अधिक होगी।

अभ्यास के लिए कुछ पद्य और गद्य भाग नीचे उद्धृत किये जाते हैं। तुम बतलाए हुए ढंग पर उनका अर्थ लिखो और उनके नीचे जो प्रश्न किये गये हैं उनका भी उत्तर दो—

पद्य भाग

१—(क) प्रभुवर ! जो तेरे गुण गाते।
सकल सिद्धियाँ सो सुसिद्ध कर महा मोद मन पाते॥
किसी दीन दुर्बल के दिल को कुछ कह के न दुखाते।
किस के शत्रु, मित्र वे किसके, लखते नर, न लखाते॥
दीन-अदीन सभी के सम्मुख प्रेम-भाव प्रकटाते।
परम प्रेम मय प्रिय वचनों से कलुषित भाव मिटाते॥
सत्संगति में सदा समुद सो अपना समय बिताते।
सुख युत जीवन निज व्यतीत कर नाम अमर कर जाते॥

(ख) आगे रहे गनिका-गज, गीध सो
तौ अब कोऊ दिखात नहीं हैं।
पाप-परायन ताप भरे
'परताप' समान न और कहीं हैं॥
हे सुखदायक प्रेमनिधे !
जग यों तो भले औ बुरे सबही हैं।
दीन दयाल औ दीन प्रभो !
तुमसे तुमहीं हमसे हमहीं हैं॥

(ग) पापी अजामिल पार कियो
जेहि नाम लियो सुतही का नरायन।
त्यों 'पद्माकर' लात लगे पर
विप्रहु के पग चौगुन चायन।
को अस दीन दयाल भयो
दशरथ के लाल के सूधे सुभायन।
दौरे गयंद उबारिवे कौ प्रभु
बाहन छोड़ि उपाहने पाँयन॥

(१) उक्त पद्यों में हर एक का उचित शीर्षक चुनो।

(२) पद्य (ख और ग) की अंतर्कथायें लिखो।

(३) 'गयंद' और 'वाहन' के अर्थ बताओ और प्रत्येक के ५-५ पर्यायवाची शब्द लिखो।

२—(क) सेस महेस गनेस दिनेस,
सुरेसहु जाहि निरंतर गावैं।
जाहि अनादि अनंत अखंड,
अछेद अभेद सुवेद बतावैं॥
नारद से सुक व्यास रटैं,
पचि हारे तऊ पुनि पार न पावैं।
ताहि अहीर की छोहरियाँ,
छछिया भरि छाछ पै नाच नचावैं*॥

(ख) या लकुटी अरु कामरिया पर,
राज तिहूँ पुर को तज डारौं।
आठहु सिद्धि नवो निधि को सुख,
नंद की गाय चराय बिसारौं॥

* थोड़े से मट्ठे के लिए हैरान करती हैं।

'रस खानि' कवौं इन आंखिन सों,
ब्रज के वन बाग तड़ाग निहारौं
कोटि कहौं कलधौत के धाम*
करील के कुंजन ऊपर वारौं ॥

(१) उक्त पद्यों के रचयिता के नाम बताओ।

(२) आठों सिद्धियों और नवो निधियों के नाम लिखो।

(३) 'करील' की पहचान बताओ।

:—(क) बुद्धि-विवेक की जोति बुझी,
ममता-मद-मोह-घटा घनी घेरी।
है न सहारो, अनेकन हैं
ठग पाप के पन्नग की रहैं फेरी॥
त्यों अभिमान को कूप इतै
उतै कामना रूप सिलान की ढेरी।
तू चलु मूढ़ सँभारि अरे मन,
राह न जानी है रैन अंधेरी॥

(ख) जिनपै हरि तुष्ट हैं तो अरि दुष्ट करैं क्या
भ्रमैं गिरि में नग में।
रिपु की असि शूल कराल मृणाल सी
कोमल हो उसके पग में।
बिछते मृदु फूल अहो! पल में
दुख कंटक छाये हुए मग में।
जब रक्षक राम खड़े अपने,
तब भक्षक कौन यहाँ जग में॥

---

* सोने का महल।

(ग) वर-बुद्धि-विवेक- विचार बढ़े
मन में कुविचार विकार न आवे।
बल-साहस-चाह-उमंग रहे
निज रंग न आलस अंग जमाये॥
दल दुर्गुण-दुष्ट दरिद्र नसे
नर नाम तथा धन धान्य कमाये।
नित पालन जो कर्त्तव्य करे
फिर कौन उसे जग आँख दिखाये॥

(घ) रावण ने कर बन्धु विरोध लखो
निज संपति जान गवाँई।
बालि ने व्यर्थ सुकण्ठ को कष्ट दे
खोई स्वजीवन राज बड़ाई॥
भूल से भी न कभी करिये
निज भाइयों से इस हेतु लड़ाई।
काम हैं आते विपत्ति के काल में
गांठ का कंचन पीठ का भाई॥

(१) उक्त पद्यों में से हर एक के लिए उचित शीर्षक चुनो।

(२) प्रमाण द्वारा सिद्ध करो कि पास का पैसा और पीठ का भाई ही काम आते हैं।

(३) पद्य (ख) के भाव का कोई दूसरा पद्य कहो।

४—(क) नैया मेरी तनक सी बोझी पाथर भार।
चहुँ दिसि अति भौंरे उठत केवट है मतवार॥
केवट है मतवार नाव मझधारहिं आनी।
आंधी चलत उदंड तेहुं पर बरसै पानी॥

कह गिरिधर कविराय नाथ हौ तुमहिं खेवैया।
उठहि दया को डांड घाट पर आवै नैया॥

(ख) उरझी नाव कुठौर में परी भँवर विच आय।
दीनबंधु अब तोहिं बिन को करि सकै सहाय॥
को करि सकै सहाय वहै करियाँ* बिन नाउर§॥
आँधी चलत उदंड देखि अति आवै ताउर‡॥
कह गिरिधर कविराय नाथ बिन कव केहि सुरझो।
ताते हा! हा! करौं नाव विपदा में उरझी॥

(ग) क्षुद्र सी हमारी नाव, चारों ओर है समुद्र,
वायु के झकोरे उग्र रुद्र रूप|| धारे हैं।
शीघ्र निगल जाने को, ये नौका के चारों ओर,
सिंधु की तरंगे सौ सौ जिह्वाये पसारे हैं॥
हारे सभी भाँति हम, अब तो तुम्हारे बिन,
झूठे ज्ञात होते और सब के सहारे हैं॥
और क्या कहैं अहो! डुबा दो या लगादो पार,
चाहे जो करो शरण्य¶! शरण तुम्हारे हैं॥

(१) 'नैया' से क्या तात्पर्य है?
(२) पाथर, भँवर, केवट किस शब्द के अपभ्रंश हैं?
(३) उक्त तीनों पद्यों के भावों की तुलना करो।

५—(क) दूब, दधि रोचना†, जनक थार भरि भरि,
आरती सँवारि बरनारि चली गावतीं।
लीन्हें जयमाल करकंज सोहै जानकी के,
पहरावो राघौ जी को सखियाँ सिखावतीं॥

---

*मल्लाह। § नाव। ‡ मूर्छा। || भयानक रूप। ¶ जिसकी शरण सब चाहते हैं (परमेश्वर) † रोरी।

'तुलसी' मुदित मन जनक नगर जन,
झाँकहिं झरोखे लागीं शोभारानी पावतीं।
मनहुँ चकोरी चारु बैठि निज निज नीड*,
चंद्र की किरन पीवें पलको न लावतीं ॥

(ख) बबुर बहेरे की बनाई बाग लाइयतु,
रुधिबो को सोउ सुरतरु काटियतु है।
गारी देत नीच हरिचंदहू दधीचहू को,
आपने चना चबाइ हाथ चटायतु है ॥‡
आप महापातकी हँसत हरि हर हू को,
आप ह अभागी भूरि भागी डाटयतु हैं।
कलि को कलुष मन मलिन किये मइल,
मसक की पासुरी पयोधि पाटियतु है ॥¶

(१) उक्त पद्यों का अवसर दिखाओ।

(२) हरिश्चन्द्र और दधीचि का संक्षेप में परिचय दो।

(३) (क) में कौन सा अलंकार है, लक्षण बताओ।

६—(क) बकसि वितुंड दये, झुंडन के झुंड
रिपुमुंडन की मालिका दई ज्यों त्रिपुरारी को।
कहै 'पद्माकर' करोरन के कोष दये
षोड़शहू§ दीन्हें महादान अधिकारी को ॥
ग्राम दये, धाम दये, अमित अराम दये
अन्न जल दीन्हें जगती के जीवधारी को।

---

*घोंसला ‡ बड़े कंजूस (चना चबाकर हाथ चाटते हैं कि कहीं कुछ लगा तो नहीं है।) ¶ मच्छर की पसलियों से समुद्र को पाटना चाहते हैं (बहुत पाप करने पर भी यह समझते हैं कि हम भवसागर पार हो जायँगे।) § सोलह प्रकार से।

दाता जयसिंह दोय बातें तौ न दीन्हीं कहूँ
वैरिन को पीठ और दीठ परनारी को ॥

(ख) संपति सुमेर की कुबेर की जु पावै, ताहि
तुरत लुटावत विलंब उर धारै ना।
कहै 'पदमाकर' सुहेम हय हाथिन के
हलके हजारन के विरत विचारै ना ॥
दीन्हें गज बकसि महीप रघुनाथ राय
याहि गज धोखे कहूँ काहू देइ डारै ना।
याही डर गिरिजा गजानन को गोइ रही,
गिरतें गरे तें निज गोद तें उतारै ना ॥

(१) उक्त पद्यों में कौनसा रस है ?

(२) राजा जयसिंह और रघुनाथराव के संबंध में क्या कहा गया है ?

(३) 'बकसि' का शुद्ध रूप लिखो।

७—(क) जो अभिषेक की बात सुनी,
तौ प्रसन्नता नेकु परी न दिखाई ।
औ बनवास की आयसु पै,
नहिं रेख कछू दुख की तहँ छाई ॥
जो दुख में न मलीन भई,
सुख में नहिं जो कछुहू हरखाई।
सो सुख—श्री रघुनंदन की
तुव होहु हमें नित मंगलदाई ॥

(ख) दरिद्र के जीर्ण-जरा कुटीर में
किसान के श्यामल शस्य खेत में,
विश्वास में निष्ठ-प्रतिज्ञ भक्त के
प्रसन्न होते घनश्याम देखे।

दुखी जनों के गहरी उसांस में
औ पीड़ितों की करुणार्द्र आह में।
सहायतापेक्ष्य सनीर नैन से
हैं झाँकते श्री घनश्याम देखे॥

(१) पद्य (क) का शीर्षक लिखो।

(२) पद्य (ख) की रचना किस भाषा में हुई है ?

८—(क) मनस्वी वीर अपने चित्त पर अधिकार रखते हैं;
न दुख की भीति रखते हैं न सुख का प्यार रखते हैं।
स्ववश ये इन्द्रियाँ क्या, वे सकल संसार रखते हैं;
हृदय में लोभ का उपकार निज उद्धार रखते हैं॥
नहीं कर्तव्य से हैं दुःख सुख उनको डिगा सकते।
वही है कर्म के मैदान में कुछ काम आ सकते॥

(ख) पुरुष हो, पुरुषार्थ करो, उठो !
न जिसमें कुछ पौरुष हो, यहाँ—
सफलता वह पा सकता कहाँ ?
अपुरुषार्थ भयंकर पाप है,
न उसमें यश है, न प्रताप है।
न कृमि-कीट-समान मरो, उठो;
पुरुष हो, पुरुषार्थ करो, उठो॥

(१) उक्त पद्यों का भावार्थ संक्षेप में लिखो।

(२) 'अधिकार' कैसे बना ? 'अधि' से युक्त ५ शब्द लिखकर उसका अर्थ लिखो।

(३) 'पुरुषार्थ' किसे कहते हैं ?

९—(क) अब मैं जानी देह बुढ़ानी।
सीस पाँव कर कह्यौ न मानैं तनकी दसा सिरानी॥

आन कहत आनै कहि आवत नै न नाक बहै पानी।
मिटि गइ चमक दमक अंग अंग की गई जु सुमति हिरानी*।।
नाहिं रही कछु सुधि तन मन की है गई बात बिरानी[१]
'सूरदास' प्रभु अबहिं चेत लो भज ले सारंगपानी[२]
(ख) हौं तो पतित-सिरोमनि माधो !
अजामील बातन ही तार्‍यो सुन्यो जो मोतें आधो।।
कै प्रभु हार मानि कै बैठहु कै अबहीं निसतारो।
'सूर' पतित को और ठौर नहिं है हरि नाम सहारो।।
(ग) मो सम कौन कुटिल खल कामी।
जिन तनु दियो ताहि बिसरायो ऐसो नोन हरामी।।
भरि-भरि उदर विषय को धावों जैसे सूकर ग्रामी।
हरिजन छाड़ि हरी-विमुखन को निसि दिन करत गुलामी।।
पापी कौन बड़ो है मोते, सब पतितन में नामी।
'सूर' पतित को ठौर कहाँ है, सुनिये श्रीपति स्वामी।।

(१) पद्य (क) में मनुष्य की किस अवस्था का वर्णन दिया गया है।
(२) 'हरि शब्द के अर्थ लिखो और प्रयोग करके दिखाओ।
(३) निसि-दिन, पतित सिरोमनि, हरिजन के विग्रह सहित समास बताओ।

१०—(क) लाल, पीले, श्वेत और नीले वस्त्र धार कर
घर से निकल आये फूल कहाँ जाने को ?
पहने रुचिर परिधान[३] नव पल्लवों का
पादप खड़े हैं किसे आदर दिखाने को ?
क्यों बनी-ठनी लोल ललित लतायें सभी,
कोयल है कूक रही किसको रिझाने को ?

*सुबुद्धि खो गई है। १ दूसरों के हाथों शरीर का निर्वाह होने लगा। २ सारंगपाणी भगवान। ३ वस्त्र।

कौन आ रहा है, मुझको बतला दो ज़रा,
वायु क्यों लुटाता है, सुगंधि के खज़ाने को ?

(ख) पाइकै फूलन संग वहै अब,
सीतल मन्द सुगन्ध बयारी।
मेघ छटे अतिनील, अकास,
दिसान के भाग भये सुखकारी॥
तारे मिले नभ में लखिये पसरी,
शशि की जग में उजियारी।
भूमि पै कीच सुखानी चहुँ दिश,
तालन में भये निर्मल वारी* ॥

(१) उक्त पद्यों में किन किन ऋतुओं का वर्णन किया गया है ?
(२) 'बयारी' 'कीच' के शुद्ध रूप लिखो।

११—(क) ऐसेहि जन्म समूह सिराने।
प्राणनाथ रघुनाथ से प्रभु तजि सेवत चरन विराने।
जें जड जीव कुटिल कायर खल केवल कलिमल साने।
सूखत बदन प्रशंसत तिन्ह कहँ हरिते अधिकहि माने।
सुखहित कोटि उपाय निरंतर करत न पाँय पिराने।
सदा मलीन पंथ के जल ज्यों कबहुँ न हृदय थिराने।
यह दीनता दूरि करिबे कहँ कोटि जतन उर आने।
'तुलसी' चित चिंता न मिटै बिनु चिंतामणि पहिचाने।

(ख) जाके प्रिय न राम वैदेही।
सो छाँड़िये कोटि वैरी सम जद्यपि परम सनेही।
तज्यो पिता प्रहलाद, विभीषण बंधु भरत महतारी।
बलि गुरु तज्यो, कंत ब्रज बनितनि, भये मुद मंगलकारी॥

---

*स्वच्छ जल।

नाते नेह राम के मनियत सुहृद सुसेव्य जहाँ लौं।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै, बहुतक कहों कहाँ लौं॥
'तुलसी' सों सब भाँति परम हित पुंजी प्रान तें प्यारो।
जासों होय सनेह राम पद, एतो मतो हमारो॥

[१] चिंतामणि, मंगल, सनेह, मत शब्दों का वाक्यों में प्रयोग करो।

[२] चित-चिंता, पंथ-जल, परमहित में कौन सा समास है, विग्रह करके दिखाओ।

[३] प्रहलाद, विभीषण, बलि का संक्षिप्त परिचय दो।

१२—(क) कुल को कुलीन होय, उपकार लीन होय,
पंडित प्रवीन होय, दोष सब खोई है।
उदित उदार होय, पूर परिवार होय,
चाबुक सवार होय बैद बुध जोई है॥
बल को निधान होय बल को प्रमान होय,
सब गुन थान होय शील सन्त सोई है।
सूर होय वीर होय सुन्दर शरीर होय,
लच्छिमी न होय ताहि पूछत न कोई है॥

(ख) सेंहुड़, बबूर को लगावैं जो जतन करि,
काटत चमेली चंपा चंदन जुहिन को।
हिंसा करि हंसा और कोकिला कलापिन को,
आदर समेत पालैं वायस मलिन को॥
गधे गजराज को समान मान होत जहाँ,
एक से कपूर और कपास लागैं जिनको।
हमैं 'कमलाकर' न देश दिखरावै वह,
दूर सों हमारे हैं प्रणाम कोटि तिनको॥

(१) पद्य (क) में कवि ने किसकी महत्ता दिखाई है?

(२) पद्य (ख) में कवि ने कैसे देश में न रहने का उपदेश दिया है!

(३) उक्त पद्यों का भावार्थ क्या है ?

१३—(क) देखो कलि जू की राजनीति को तमासो यह,
बास कियो आय हर एक की अकल पै।
खानदान वारे पानदान लिये दौरत हैं,
तान गान वारे बैठे जोहत महल पै॥
'ग्वाल' कवि कहैं चारु चतुर को चैन है न,
ऐसे में रहत जैसे कूर चढ़े बल पै।
मलमल धारे जे वे धूर रहे मल मल,
मलखानवारे सोवें सेज मखमल पै॥

(ख) गुन को पूछै कोऊ औगुन की बात पूछै,
कहा भयो दई कलियुग यों खरानो है।
पोथी औ पुरान ज्ञान ठट्ठन में डारि देत,
चुगुल चबाइन को मान ठहरानो है॥
'कादर' कहत यासों कछू कहिवे की नाँहिं,
जगत की रीति देख चुप मनमानो है।
खोलि देखो हियो सब भाँतिन सों भाँति भाँति,
गुन न हिरानो गुन-गाहक हिरानो है॥

(ग) होइ जो लजीलो ताहि मूरख बतावत हैं
धर्म धरै ताहि कहे दम्भ को बढ़ाव है।
चलै जो पवित्रता सों, कपटी कहत तासों,
सूर को कहत यामें दया को अभाव है॥
'गिरिधरदास' साधुताई देखि कहैं धूर्त,
उदर के हेतु कियो भेष को बनाव है।
जे जे अहैं गुनी तिन्हैं अवगुनी बखाने यह,
जगत में पापिन को सहज सुभाव है॥

(१) उक्त पद्यों का उचित शीर्षक चुनो।
(२) अकल, खानदान, चुगुल, मूरख के शुद्ध रूप लिखो।
(३) पाप, गुण, पवित्रता के प्रतिलोम शब्द लिखो।

१४—(क) भाल में जाके सुधाधर हैं,
वहै साहब ताप हमारो हरैगो।
अंग है जाको विभूति भरो
वहै भौन में सम्पति भूरि भरैगो॥
घातक है जो मनोभव को,
जग पातक वाही के जारे जरैगो।
'दास' जो सीस पै गंग लिये रहै,
ताकी कृपा कहो को न तरैगो॥

(ख) ऐसे वेहाल वेवाइन सों पग,
कंटक जाल लगे पुनि जोये।
हाय! महादुख पायो सखा,
तुम आये इतै न कितै दिन खोये॥
देखि सुदामा की दीन दशा,
करुना करिकै करुनानिधि रोये।
पानी परात को हाथ छुयो नहिं,
नैनन के जल सों पग धोये॥

(ग) मेरु समान स्वर्ण ले कोई अपना भवन बनावे।
विष-वारुणी विहीन रत्न सब लाकर उसे सजावे॥
वासव-विभव, कुवेर-कोष पर निज अधिकार जमावे।
मित्र-विहीन व्यक्ति ऐसा भी कभी प्रमोद न पावे॥

(१) उक्त पद्यों का भावार्थ लिखो।
(२) प्रत्येक पद्य में रस पहचानो।

(३) उक्त पद्यों में कौन सा छंद है ? लक्षण घटाओ।

१५—(क) ऐसे राम दीन हितकारी।
अति कोमल करुना निधान बिनु कारन पर-उपकारी॥
साधन हीन दीन निज अघ* बस सिला भइ मुनि नारी।
गृह ते गवनि परसि पद, पावन, घोर साप ते तारी॥
हिंसारत निषाद तापस वपु[1], पशु समान बन-चारी।
भेंटेउ हृदय लगाय प्रेम बस, नहिं कुल जात विचारी॥
यद्यपि द्रोह कियो सुरपति सुत, कहि न जाय अति भारी।
सकल लोक अवलोकि सोक-हत, सरन गये भय हारी।

(ख) ऐसी मूढ़ता या मन की।
परिहरि राम-भक्ति सुर-सरिता आश करत ओस-कनकी॥
धूम समूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घन की॥
नहिं तहँ सीतलता न बारि पुनि हानि होत लोचन की॥
त्यों गच कांच विलोकि सेन जड़, छाँह आपने तनकी।
टूटत अति आतुर अहार बस, क्षति बिसार आनन की॥
कहँ लौं कहौं कुचालि कृपानिधि, जानत हौ गांत जनकी।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुःसह दुःख, राखुलाज निज पन की॥

(ग) मन पछतैहो अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाइ हरिपद भजु, करम बचन अरु ही ते।
सहस बाहु दस वदन आदि नृप, बचे न काल बलीते॥
हम-हम करि धन-धाम सँवारे, अन्त चले उठिरीते।
सुत, वनितादि जानि स्वारथ रत, न करु नेह सबहीते॥
अन्तहूं तोहिं तजेंगे पामर ! तू न तजों अबहीते।
अब नाथहिं अनुराग जागु जड़, त्यागु दुरासाजीते॥
बुझै न काम अगिनि 'तुलसी' कहुँ विषय भोग बहुघीते॥

* पाप। [1] तामसी शरीर।

(१) पद्य [क] में भगवान राम की दीन हितै सिव के विषय में कौन प्रमाण दिये गये हैं !

(२) पद्य (ख) में अलंकारों का निर्देश करो।

(३) धूम, सोक, सहस, रीते किस शब्द के अपभ्रंश हैं ?

(४) 'सहसबाहु' के विषय में क्या जानते हो ?

१६—[क] महरि* ! तैं बड़ी कृपिन है माई ।
दूध दही विधि को है दीनो सुत डर धरति छिपाई ॥
बालक बहुत नाहिंरी तेरे एकै कुँवर कन्हाई ।
सोऊ तौ घर ही घर डोलत माखन खात चोराई ॥
वृद्ध बैस पूरे पुन्यनि तें तैं बहुतै निधि[1] पाई ।
ताहू को खैबे पियबे को कहा करति चतुराई ॥
सुनहू न वचन चतुर नागरि के जसुमति नंद सुमाई ।
सूर स्याम को चोरी के मिस है देखन को आई ॥

[ख] तेरे लाल मेरे माखन खायो ।
दुपहर दिवस जानि घर सूनो ढूंढ़ि ढँढोर आपही आयो ।
खोलि किवार सून मंदिर में दूध दही सब सखन खवायो ॥
सीके[2] काढ़ि खाट चढ़ि मोहन कछु कछु ले ढरकायो ।
दिन प्रति हानि होत गोरस की यह ढोता कौन ढँगलायो ॥
'सूरदास' कहती व्रजनारी पूत अनोखो जसुमति जायो ॥

[१] उक्त पदों में किस किस के बीच बातें हुई हैं ?

[२] 'निधि' का क्या अर्थ है ? यहाँ 'निधि' शब्द का प्रयोग किस के लिए किया गया है ?

[३] दूध, दही, पुन्य, किवार, किन शुद्ध शब्दों के रूपान्तर हैं ?

---

*यशोदा । १ खजाना । २ सिकहर ।

१७—(क) सब जग तजे प्रेम के नाते ।
चातक स्वाति बूंद ना छाड़ह, प्रगट प्रकारत ताते ॥
समुझत मीन नीर की बातैं, तजन प्रान हरि हारत ।
जानि कुरंग प्रेम नहिं त्यागत, जदपि व्याध सर मारत ॥
निमिष चकोर नैन नहिं लावत ससि जोवत जुग बीते ।
ज्योति पतंग देखि बपुजारत, भये न प्रेम घटरीते ॥
कहि अलि, क्यों बिसरति वै बातैं सँग जो करि ब्रजराजै ।
कैसे 'सूर' स्याम हम छोड़ैं एक देह के काजै ॥
(ख) प्रीति करि काहू सुख न लह्यो ।
प्रीति पतंग करी दीपक सों आपै प्रान दह्यो ॥
अलि सुत* प्रीति करी जल सुत|| सों सपति हागह्यो ।
सारँग§ प्रीति करी जो नादसों सन्मुख बान सह्यो ॥
हम जो प्रीति करी माधव सों चलत न कछु कह्यो ।
सूरदास प्रभु बिनु दुख दूनो नैनन नीर बह्यो ॥

[१] उक्त पदों में किस वस्तु का महत्त्व वर्णन किया गया है। कौन किससे कह रहा है ?

[२] ऊपर के पदों का उचित शीर्षक चुनो ?

[३] अलिसु, जलसुत, सारँग, के अर्थ लिखो ?

१८—(क) भेजे मनभावन¶ के ऊधव के आवन की,
सुधि ब्रज गावनि मैं पावन जबै लगीं ।
कहै रतनाधर गुवालिनी की झौरि-झौरि,[1]
दौरि-दौरि नन्द पौरि[2] आवत तबै लगीं ॥
उझकि-उझकि पद-कंजनि कै पंजनि पै,
पोखि-पोखि पाती छाती छोहनि छवै लगीं ।

---

* भौंरा || कमल § हिरन ¶ श्रीकृष्ण १ झुण्ड-झुण्ड २ नन्द के द्वार पर ।

हमकौं लिख्यौ है कहा, हमकौं लिख्यौ है कहा,
हमकौं लिख्यौ है कहा, कहन सबै लगीं ॥
(ख) दीन दसा देखि ब्रज बालनि की ऊधव कौ,
गरिगो गुमान ज्ञान गौरव गुठाने से।
कहै 'रतनाकर' न आये मुख बैन नैन,
नीर भरि ल्याये, भये सकुचि सिहाने से ॥
सूखे से, स्रमे से, सक बके*से, सके से थके,
भूले से, भ्रमेसे, भमरे से, भकुवाने से।
हौलेसे, हलेसे हूल-हूले से हिये मैं हाय,
हारे से, हरेसे रहे हेरत हिरनि से ॥

१९—(क) हम चाकर राधा रानी के।
ठाकुर श्री नंद नंदन के वृषभान लली ठकुराइन के ॥
निर्भय रहत, बदत नहिं काहू, डर नहिं डरत भवानी के।
'हरीचंद' नित रहत दिवाने सूरत अजब निवानी [1] के ॥

(ख) हम हूँ कबहूँ सुख सों रहते।
छाड़ि जाल सब, निसि दिन मुख सों केवल कृष्णहिं कहते ॥
सदा मगन लीला अनुभव में, दृग दोउ अविचल वहते।
'हरीचंद' घनश्याम विरह इक जग-दुख तृन सम दहते ॥

(ग) मरम की पीर न जानै कोय।
कासों कहौं, कौन पुनि मानै, पैठि रही घर रोय ॥
कोऊ जरनि न जानन वारी वे मरहम सब लोय।

---

* बौरहे से। [1] निवानी नाम की एक खत्रानी थी जिस पर बाबू हरिश्चन्द्रजी का प्रेम था। कुछ लोगों ने इनके पदों में 'निवानी' शब्द उसी खत्रानी पर घटाया है। पर यह बात नहीं है। बाबू साहब ने 'निवानी' शब्द को श्रीकृष्ण की दिव्य सुन्दरता पर ही घटित किया है।

अपुनी कहत, सुनत नहिं मेरी, केहि समझाऊँ सोय ॥
लोक लाज, कुलकी मरजादा बैठि रही सब खोय।
'हरीचंद' ऐसेहिं निबहैगी, होनो होयसो होय ॥

(१) उक्त पदों का भावार्थ अपनी भाषा में लिखो ?

(२) ऊपर के पदों के आधार पर बाबू हरिश्चन्द्र के स्वभाव का वर्णन करो।

(३) मगन, तृन, स्याम किन शुद्ध शब्दों के रूपान्तर हैं ?

(४) काहू, कासों, के प्रचलित हिन्दी रूप लिखो ?

गद्य-भाग

नीचे लिखे भागों को पढ़ो और उनके संबंध में जो प्रश्न पूछे गये हैं उनके उत्तर लिखो।—

१—यह कहना बहुत सरल है कि हम सभी मनुष्य हैं, यह समस्त वसुधा ही एक कुटुम्ब है; परन्तु इस भाव का हृदय में जाग्रत कर उसको कार्य्यरूप में परिणत करना कठिन है इसका कारण यह है कि अभी तक मनुष्य हिंसा के भाव को दूर नहीं कर सका। वर्तमान युग में मनुष्य-मात्र को स्वाधीनता और समता की शिक्षा सभी दे रहे हैं, सभी देश और राष्ट्र न्याय की घोषणा कर, मनुष्य जाति के पारस्परिक विद्वेष को दूर करना चाहते हैं तो भी वर्तमान काल में जो अशांति फैली हुई है, उसका कारण विषमता, पराधीनता और जाति-गत विद्वेष ही है। स्वार्थ साधन के लिये दूसरों को पद-दलित करने में ही अनेक मनुष्य विश्व-प्रेम का स्वप्न देख रहे हैं।

(क) विश्वप्रेम से क्या समझते हो ? इसके फैलने में कौन सी बाधाएँ हैं ?

(ख) रेखांकित अंशों के अर्थ सरल भाषा में समझाकर लिखो।

(ग) सम्पूर्ण वसुधा को किस प्रकार एक कुटुम्ब बनाया जा सकता है ?

(घ) राष्ट्र और देश का अंतर वाक्य में प्रयोग करके समझाओ।

२—समस्त बोर्ड के प्रबन्ध की सफलता उसके चेयरमैन के व्यक्तित्व पर निर्भर है। सभापति का चुनाव बोर्ड के लिये बड़ा महत्वपूर्ण कार्य है और उसके चुनाव पर भावी सुप्रबन्ध या कुप्रबन्ध निर्भर है। अभाग्यवश ऐसे अवसरों पर बहुत सी बाहरी बातों का प्रभाव पड़ता है, जिसका परिणाम हानिकारक होता है। चेयरमैन का सुयोग्य कार्यकर्त्ता और सुदृढ़ प्रबन्धक होना आवश्यक है। उसको सबकी सहायता स्वीकार करने के लिए उत्सुक होना चाहिए और उसे प्रत्येक मेंबर का सहयोग प्राप्त करना चाहिये। साथ ही उसे निष्पक्षता तथा स्वतंत्रता से अपना मत निश्चित करना चाहिए। उसे अपने नागरिकों की भलाई के लिए सदा तत्पर रहना चाहिए। उसको किसी पार्टी या कर्मचारी का पक्षपात न करते हुए न्यायप्रिय, उत्साही और परिश्रमी होना चाहिए।

(क) चेयरमैन के चुनाव का क्या महत्व है ? चुनाव करते समय किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?

(ख) रेखाङ्कित अंशों के अर्थ सरल भाषा में समझाकर लिखो।

(ग) चेयरमैन में किन किन गुणों की आवश्यकता है ?

३—इस प्रकार सामाजिक जीवन में परिवर्तन के साथ-साथ मस्तिष्क-शक्ति का विकास होने लगा। सामाजिक

जीवन के परिवर्तन का दूसरा नाम असभ्यावस्था या सभ्यावस्था को प्राप्त होना है, अर्थात् ज्यों-ज्यों सामाजिक जीवन का विकास, विस्तार और उसकी संकुलता* बढ़ती गई त्यों-त्यों सभ्यता देवी का साम्राज्य स्थापित होता गया। जहाँ पहिले असभ्यता व जङ्गलीपन में ही मनुष्य सन्तुष्ट रहते थे वहाँ उन्हें सभ्यता पूर्वक रहना पसन्द आने लगा। सभ्यता सामाजिक जीवन में उस स्थिति का नाम है जब मनुष्य को अपने सुख और चैन के साथ-साथ दूसरे के स्वत्वों और अधिकारों का भी ज्ञान होता है। आदर्श सभ्यता वह है जिसमें मनुष्य का यह स्थिर सिद्धान्त हो जाय कि "जितना किसी काम के रहने का अधिकार मुझे है उतना ही दूसरे को भी है"।

(१) रेखांकित पदों तथा शब्दों के अर्थ लिखो।
(२) 'सभ्यता देवी' का साम्राज्य कैसे स्थापित होता गया।
(३) 'आदर्श सभ्यता' किसे कहते हैं ?
(४) उक्त गद्यांश का उचित शीर्षक चुनो।
(५) ऊपर के गद्य भाग का भावार्थ अपनी भाषा में समझाओ।

४—कबीरदास के पीछे एकेश्वरवादी[1] संतों की एक शृंखला चलती है, जो स्वामी प्राणनाथ के साथ समाप्त होती है। इनमें अधिकांश अस्पृश्य जाति के लोग रहते हैं। ध्यान रखना चाहिए कि इन अस्पृश्य संत-महात्माओं ने हिन्दी साहित्य की पुष्टि और प्रचार में बड़ा प्रयत्न किया है। इसके लिए हिंदी, उनकी चिर ऋणी बनी रहेगी। अधिकतर लोग

*एक से अधिक होना। १ एक ईश्वर को ही मानने वाला

ईश्वर को उस रूप में पाने के लिये लालायित* थे, जो सज्जनों की सहायता तथा दुष्टों का दमन करने वाला हो। तुलसीदास ने रामचरित मानस द्वारा इस रूप को हृदयङ्गम करा दिया, जिसका परिणाम यह हुआ कि हिंदुओं के घर घर में उसका ग्रंथ आदृत है। गार्हस्थ्य-जीवन का आदर्श चित्र खींच कर उन्होंने हिंदुओं का बड़ा उपकार किया है।

(१) रेखांकित पदों तथा शब्दों के अर्थ लिखो।

(२) 'कबीरदास' कैसे संतों में से थे?

(३) 'तुलसीदास' ने किस प्रकार हिंदुओं का उपकार किया है?

(४) 'तुलसीकृत रामचरित-मानस' का इतना आदर क्यों है?

५—हमारे ग्रन्थ गुरु शान्ति और क्षमा के आधार हैं, तृष्णा-लता के काटने को कुठार हैं, अज्ञान-तिमिर के हटाने को सहस्रांशु हैं, हठ और दुराग्रह क्रूर ग्रह के अस्ताचल हैं, उदार-भाव के उदयगिरि हैं, सतपथ प्रदर्शक, शील-सौजन्य-सुमन के कुसुमाकर हैं। क्रोध तो मानो इन्हें छू तक नहीं गया। यह प्रश्नकर्त्ता के प्रश्नों का सुस्पष्ट उत्तर बता देते हैं, उसकी शंकाओं का समाधान कर देते हैं। अतएव ऐसे ज्ञान से भरे हुए ग्रन्थ-गुरुओं की श्रद्धा और प्रीति से सेवा करनी चाहिए।

(१) उक्त गद्यांश में लेखक ने किसका गुणगान किया है। समझा-कर अपनी भाषा में लिखो।

(२) ग्रन्थ-गुरु की सेवा क्यों करनी चाहिए।

(३) शान्ति, क्षमा, दुराग्रह, अस्ताचल, के विलोम शब्द लिखो।

(४) 'सुजन' शब्द से 'सौजन्य' भाववाचक शब्द बना है तुम 'सुगम' सरल, सुख, दुर्बल शब्द को भाववाचक संज्ञा के रूप में लिखो।

---

* उत्सुक।

६—पाठशाला की दुनिया निराली है। यहाँ वायुमंडल शिक्षामय है। यहाँ से यम-नियम, सभ्यता-शिष्टाचार, समय तथा आज्ञापालन के सिवाय दूसरे कामों के लिए स्थान नहीं। अध्यापक और विद्यार्थी एक निराले प्रेम-सूत्र में बँधे हुए पठन-पाठन में रत रहते हैं। शिक्षा और परीक्षा के अतिरिक्त 'न ऊधो का लेना न माधो का देना'। ऐसे शान्तमय वातावरण में प्रधान पद को सुशोभित करने वाले मुं० दरबारीलाल, घर पर पारिवारिक झंझट में कैसे सुखी और प्रसन्न रह सकते हैं? यह अनुभव करने की बात है।

(१) रेखांकित अंशों का अर्थ लिखो।

(२) 'पाठशाला की दुनियाँ निराली है' इस वाक्य की व्याख्या करके समझाओ।

(३) दरबारीलाल को घर पर क्यों सुख नहीं मिलता था?

७—पतित-पावनी पुण्यतोया श्री गंगाजी के तट पर विश्वनाथपुरी काशी की शोभा अनुपम है। अविनाशी शंकर के त्रिशूल पर शोभित यह वही काशी है जो चिरकाल* से हिन्दू धर्म, आर्य्य संस्कृति और संस्कृत भाषा की संरक्षिका रही है। भारत के कोने कोने से लाखों यात्री प्रति वर्ष यहाँ आते और गंगाजल में स्नान कर चारों फल पाते हैं। यहाँ के विशाल प्रसाद उन वयोवृद्ध सम्बन्धियों से भरे रहते हैं, जो काशी धाम में प्राण परित्याग करने के लिये लालायित रहते हैं। अनेक धर्माचार्य्यों, धुरन्धर विद्वानों, प्रबुद्धां

* बहुत दिनों से। †जागते हुए।

प्रचारकों, कवि-कोविदों तथा साधु-संन्यासियों से इसकी गोद समय-समय पर सुशोभित होती रहती है। यहीं से तुलसी ने अपनी कोमल-कान्त पदावली और भारतेन्दु ने ललित नाटकावली में राष्ट्र भाषा हिन्दी की नूतन धारा बहाई थी।

(१) रेखाङ्कित पदों तथा शब्दों का अर्थ लिखो।

(२) काशी का विशेषताएँ अपनी भाषा में दिखलाओ।

(३) 'चारों फल' कौन कौन से हैं ?

(४) 'राष्ट्रभाषा' से क्या अभिप्राय है ?

८—रामायण और महाभारत के आचार्य्य क्रम से कविकुल-गुरु वाल्मीकि और व्यास थे। पृथ्वी के और-और देशों में इनके समान या इनसे बढ़कर कवि नहीं हुए, ऐसा नहीं है। यूनानी देश में होमर, रोमदेश में वरजिल, इटली में डेंटो, इंगलैंड में चासर और मिल्टन अपनी अपनी असाधारण प्रतिभा से मनुष्य-जाति का गौरव बढ़ाने में कुछ कम न थे। परन्तु विचित्र कल्पना और प्रकृति के यथार्थ अनुकरण में चिरन्तन * वृद्ध वाल्मीकि के समान होमर तथा मिल्टन किसी अंश में नहीं बढ़ने पाये, जिनकी कविता के प्रधान नायक श्री रामचन्द्र आर्य जाति के प्राण, दया के अमृतसागर, गाम्भीर्य्य और पौरुषदर्प की मानों सजीव प्रतिकृति थे। वे प्रीति और समभाव से महानीच जाति चाण्डाल तक को गले से लगाते थे।

(१) रेखांकित पदों तथा शब्दों के अर्थ लिखो।

(२) वाल्मीकि के समान होमर तथा मिल्टन क्यों नहीं कहे जा सकते ?

---

* सदैव।

(३) श्री रामचन्द्र में क्या गुण थे ?

(४) चासर होमर कहाँ के रहने वाले थे ?

९—जो काश्मीर-मण्डल केवल पुण्यबल से ही जीता जा सकता है न कि तलवार के बल से और वहाँ के रहने वालों को यदि कुछ भय है तो परलोक से है। न कि चोर, डाकू, शत्रु, सिंह, सर्प आदि से। जहाँ शीत में स्नान करने को गरम जल के हम्माम † और रमणीय तीर वाली निरुपद्रव हिंस्र जल-जन्तुओं से रहित उत्तम उत्तम नदियाँ हैं; जिस काश्मीर-मण्डल को संतापरहित और पिता कश्यप की रचना जान कर सूर्य्यदेव पिता की प्रतिष्ठा रखने को गर्मी के दिनों में भी प्रखर किरणों को नहीं धारण करता, जिस काश्मीर-मण्डल में वहाँ के सर्व-साधारण रहने वाले बड़े बड़े विद्यालयों में शास्त्राभ्यास करते हैं और स्वर्गवासियों को भी दुर्लभ केसर, बरफ का पानी, अंगूर आदि वस्तुओं को भोगते हैं अहा! त्रिलोकी में यह रत्नगर्भा भूमि धन्य [1] है।

(१) रेखांकित पदों तथा शब्दों के अर्थ लिखो।

(२) 'काश्मीर मण्डल की क्या विशेषतायें हैं ?

(३) काश्मीर में सूर्य की किरणें क्यों प्रखर नहीं होतीं ?

(४) 'शास्त्र' किसे कहते हैं और ये कितने हैं ?

(५) पुष्पांकित शब्दों की शब्द-निरुक्ति लिखो।

१०—श्रीकृष्ण सबसे श्रेष्ठ और माननीय राजनीतिज्ञ थे। इसीसे युधिष्ठिर ने वेदव्यास के कहने पर भी श्रीकृष्ण के परामर्श बिना राजसूय यज्ञ में हाथ नहीं लगाया। जरासंध को मारकर उसकी कैद से राजाओं को छुड़ाना उन्नत

---

† स्नानागार। १ प्रशंसा के योग्य।

राजनीति का अति सुन्दर उदाहरण है। यह साम्राज्य स्थापन का बड़ा सहज परमोचित उपाय है। श्रीकृष्ण की बुद्धि का विकास चरमसीमा† तक हुआ था, इसी से वह सर्वव्यापी, सर्वदर्शी और सब उपायों की उद्भावना करने वाली थी। जिस अपूर्व आध्यात्मतत्व और धर्मत्व के आगे अबतक मनुष्य की बुद्धि नहीं जा सकती है, उससे लेकर चिकित्सा, सङ्गीत और अश्व परिचर्य्या‡ तक भलीभाँति जानते थे। उत्तरा के मृत- पुत्र को जिलाना, उनकी चिकित्सा का, वंशीवादन उनके सङ्गीत का और जयद्रथ वध के दिन घोड़ों की चिकित्सा उनकी अश्वपरिचर्य्या का उदाहरण है।

[१] रेखांकित अंशो के अर्थ समझाओ।

[२] सिद्ध करो कि श्रीकृष्ण सबसे श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ थे।

[३] युधिष्ठिर, वेदव्यास और जरासंध के विषय में अपनी जानकारी प्रकट करो।

[४] पुष्पांकित शब्दों की शब्द-निरुक्ति करो।

११—सारे व्यवसायों का मूलाधार कृषि है। इस देश में कृषि विद्या का जितना अधिक प्रचार होगा, यहाँ सुशिक्षित कृषकों की संख्या जितनी अधिक बढ़ेगी, उतना ही अधिक यह देश धन-धान्य से पूरा होगा। इससे लोगों में स्वावलम्बन का भाव पैदा होगा और भारत सन्तानों को दर-दर घूमने की आवश्यकता न रहेगी। भारतीय किसान आज इतने दीन-हीन क्यों हैं और उनका व्यावसाय इतनी

† हद्दतक। ‡ घोड़ों की सेवा।

घृणा की दृष्टि से क्यों देखा जाता है ? कारण यही है कि भारत के बाबू दल ने कृषि कर्म के महत्त्व को नहीं समझा। इसी से इस स्वर्गीय विद्या का इस देश से प्रायः लोप होता जा रहा है। अन्यथा यह कब संभव था कि जिस कृषि के प्रताप से आज आस्ट्रेलिया आदि देश कुबेर के भंडार बन रहे हैं, वही कृषि कर्म भारत की जीविका का प्रधान साधन हम लोगों को दरिद्र और दीन बना रखता।

(क) रेखांकित अंशों को सरल हिंदी में लिखो।

(ख) कृषि को सारे व्यवसायों का मूलाधार क्यों कहा गया है।

(ग) भारतवर्ष की आर्थिक उन्नति का कौन सा उपाय यहाँ बतलाया गया है ?

१२—यदि भविष्य में आपको अपने पूर्वजों की भूलों और भ्रमों से बचना हो तो इतिहास का अनुशीलन कीजिये। इतिहास सब शासकों को चेतावनी देता है कि गत युगों में अमुक-अमुक शासकों ने ये भूलें कीं, इसलिये उन्हें उलटी मुँह की खानी पड़ी*। प्रजा के असन्तोष और विद्रोह का यह फल हुआ और सैनिकराज्यों† का अंतिम फल यह हुआ, इत्यादि, अनेक दृष्टांत हमें भविष्य के लिये पथ-प्रदर्शक की भाँति हैं। प्राचीन अनुभव से लाभ उठाना हो तो इतिहास को पढ़िये। कारण की समानता पर कार्य का सादृश्य निर्भर है। प्राचीन कारण के पुनः प्रगट होने पर प्राचीन कार्य भी पुनः आविर्भूत होगा। तभी तो कहा गया है कि इतिहास की पुनरावृत्ति होती है।

---

* कड़ा जवाब मिला। † जो राज्य सेना के बल से ठहरा रहे।

(क) इतिहास पढ़ने के कौन से लाभ ऊपर के गद्यखंड में बतलाये गये हैं।

(ख) रेखाङ्कित शब्दों के अर्थ सरलभाषा में समझाकर लिखो।

(ग) 'इतिहास की पुनरावृत्ति' से क्या समझते हो तथा वह कैसे होती है?

१३—अब सन्ध्या हो गई, मुनि कुमारों ने रक्त चन्दन से अर्घ्य दिया था, वह उनके अंग में लगकर कैसी शोभा देता था जैसे लोहित वर्ण सूर्य। तमारि की किरण ने धीरे धीरे पृथ्वी से कमल वन में और कमल वन से वृक्षों की शिखर पर और वहाँ से पहाड़ों की चोटी पर जाकर स्वर्ण-वर्ण किया था। वायु से चलायमान पात्र रूपी हस्त द्वारा वृक्ष सब पक्षियों को अपने अपने खोतों में बुलाने लगे और विहङ्गों ने भी कल-रव करके उत्तर दिया। मुनि सब ध्यान-स्थित होकर, हाथ बाँधकर सन्ध्या वन्दन करने लगे। तिमिर नाशक के भय से छिपा हुआ तिमिर प्रगट हुआ। सन्ध्या के क्षय होने के शोक से दुःखित रात्रि अन्धकार रूपी मलिन वस्त्र धारण दृष्टि गोचर हुई और ग्रह रूपी चोर भी बाहर निकले जो सूर्य के प्रताप से छिपे थे। पूर्व दिशा में चन्द्रमा का प्रकाश होने लगा। मन्द मन्द समीर के बहने से मृग आल्हादित हुए, जब लोग आनन्दमय और तपोवन प्रकाशमय हुआ।

(१) उक्त गद्यांश का भावार्थ अपनी भाषा में लिखो।

(२) रेखांकित अंशों का अर्थ लिखो।

(३) इस गद्यांश में क्या विशेषता है?

१४—जिस मनुष्य ने किसी के ऊपर दया नहीं की वह यह आशा रक्खे कि मुझ पर दूसरे दया करेंगे तो यह

सर्वथा उसका भ्रम है । वे मनुष्य जो हिसाब से चलते हैं, फूँक फूँक कर पैर रखते हैं*, उन्हीं की जेब में इतने रुपये रहते हैं कि जो किसी दीन-दुखिया के काम आवे । किन्तु वे मनुष्य जो शाह खर्च कहलाते हैं, केवल नाम मात्र को राजा हैं, उनसे किसी निरासे की आशा पूरी नहीं हो सकती।

हाँ, यह भी ठीक है कि लेन देन में संकीर्ण हृदय का होना किसी वुद्धि के कारण होता है । इसलिए उससे किसी के काम का होना बहुत ही कठिन है । जिस मनुष्य की आँख एक कौड़ी पर रहती है, वह दो कौड़ियों पर नहीं जाती । परोपकार और दूसरे का भला करना बड़े कामों की जड़ है । इतिहास के अध्ययन से इसके सैकड़ों दृष्टांत मिलते हैं कि "जिसकी लाठी उसकी भैंस†" रही है और 'जिसके हाथ लोई, उसके हाथ सब कोई‡" रहते हैं। दाता का सदा बोल वाल बना रहता है। ऋणी मनुष्य सिर ऊँचा नहीं कर सकते, उनकी आँखें सदा नीची रहती हैं । वे अपने महाजन के गुलाम बन जाते हैं। उधार लेने वाला सच्चा नहीं रह सकता, यह लोकोक्ति बहुत ठीक है कि ऋण की पीठ पर झूठ को सवारी§ इसलिए उचित है कि कभी ऋण न लो ।

(१) ऋण लेना क्यों बुरा है ?

(२) कैसे व्यक्ति, दीन-दुखियों की सहायता कर सकते हैं ।

(३) 'लेन-देन' में 'संकीर्णता' क्यों आती है ।

(४) रेखांकित अशों का अर्थ समझाओ ।

---

* बचकर चलते हैं। † जबरदस्त का सब कुछ । ‡ अधिकार वाले का सब कुछ । § ऋणी झूठा होता है ।

(५) उक्त गद्यांश में क्या साहित्यिक विशेषता है।

(६) उक्त गद्य का भावार्थ अपनी भाषा में संक्षेप में लिखो।

१५—ग्रीष्मऋतु में भारत में दक्षिणी-पश्चिमी मानसून हवा बहती है। अप्रैल, मई और जून के मध्य तक प्रचंड सूर्य वाले ग्रीष्म का प्रबल प्रताप रहता है। इस समय मानसून हवा विषुवत् रेखा के दक्षिण ही रहती है और देश इसके दर्शन के लिए बड़ी-बड़ी तपस्या करता है। मैदानों के मध्यम तापक्रम ९५° से कभी कम नहीं होता। संयुक्तप्रांत में सिन्ध का जैकोबाबाद अधिकतम उष्णता*के कारण जलाभुना करता है। भारत का यही तो उष्णतम स्थान है। सूर्य की प्रचंड किरणें ज्वाला बरसाती हैं। तृणादि सूखकर धूल में मिल जाते† हैं। जून के मध्य में तपस्या पूर्ण हो जाती है। दक्षिणी-पश्चिमी मानसून एकाएक आ धमकता है। देश की काया पलट आती है‡। हवा के प्रचंड झोंके बहने लगते हैं। आकाश मेघाच्छन्न हो जाता है॥। दामिनी की दमक के साथ "घन घमंड नभ गरजत घोरा" का हृदयग्राही दृश्य उपस्थित हो जाता है। फिर क्या है, पानी बरसने लगता है और "महावृष्टि चलि फूटि कियारी" की दशा आ जाती है। अकस्मात् मृतप्राय स्थल भाग§ में जीवन का संचार हो जाता है। अब पहले की तृण-शून्य भारत-भूमि को, 'सजला, सफला शस्य-श्यामला' देखकर आश्चर्याभिभूत हो¶ कहना पड़ता है—

* सबसे अधिक गर्मी। † नष्ट हो जाते हैं। ‡ देश की दशा बदल जाती है। ॥ आकाश में बादल छा जाते हैं। § सूखी भूमि जो मरने के करीब है। ¶ चकित होकर।

"यह दो दिन में क्या माजरा हो गया।
कि जंगल का जंगल हरा हो गया॥
जड़ी, बूटियाँ पेड़ आये निकल।
अजब वेलबूटे, अजब फूल फल॥"

(१) रेखांकित अंशों के अर्थ समझाओ।

(२) ग्रीष्मऋतु में कौन सी हवा बहती है ?

(३) दक्षिणी-पश्चिमी मानसून हवा आने से भारत भूमि में क्या परिवर्त्तन होते हैं ?

(४) उक्त गद्यांश का भावार्थ लिखो।

१६—हम नाम के आस्तिक हैं। हर बात में ईश्वर का तिरस्कार करके ही हमने आस्तिक की ऊँची उपाधि पाई है। ईश्वर का एक नाम 'दीनबन्धु' है। यदि हम वास्तव में आस्तिक हैं, ईश्वर-भक्त हैं तो हमारा यह पहला धर्म है कि दीनों को प्रेम से गले लगावें, उनकी सहायता करें, उनकी सेवा करें, उनकी शुश्रूषा करें। तभी न दीनबन्धु ईश्वर हम पर प्रसन्न होगा ? पर ऐसा कब करते हैं ? हम तो दीन-दुर्बलों को ठुकरा-ठुकरा कर ही आस्तिक या दीनबन्धु भगवान के भक्त बने बैठे हैं। दीनबन्धु की ओट में हम दीनों को खूब सता रहे हैं। कैसे अद्वितीय आस्तिक हैं हम ! न जाने क्या समझ कर हम अपने कल्पित ईश्वर का नाम दीनबन्धु रखे हुए हैं।

'दीनन देखि घिनात जे, नहिं दीनन सों काम।
कहा जानि तें लेत हैं, दीनबन्धु का नाम ?

(१) लेखक ने उक्त गद्यांश में ईश्वर के प्रसन्न रहने का क्या उपाय बतलाया है।

१७—'काम वह कर कि जमाने में तेरा नाम रहे' नहीं तो परलोक में वैकुंठ पाने पर भी उसे थूक थूक कर नरक बना लोगे; इस लोक का तो कहना ही क्या है अभी थूक-खखार देख कुटुम्बवाले घृणा करते हैं। यदि वर्त्तमान करतूतें विदित हो गई तो सारा जगत थूड़् थूड़् करेगा! यों तो मनुष्य की देह ही क्या है, जिसके यावदवमव घृणामय हैं, केवल बनानेवाले की पवित्रता के निहारे श्रेष्ठ कहलाते हैं, नहीं तो निरी 'खारिज खराब हाल खाल की खलीतो है, तिसपर भी यदि भगवच्चरणानुसरण एवं सदाचरण न हो सका तो हम क्या हैं राह चलनेवाले तक धिक्कारेंगे और कहेंगे कि 'कहा धन-धामें धरि लेहुगे सारा में भये, जीरन तऊ न तुम रामै भजत हो ?

(१) रेखांकित अंशों का आशय लिखो।

(२) लेखक ने मनुष्य को किस कार्य की ओर संकेत किया है! अपने शब्दो में लिखो।

(३) उक्त गद्यांश का उचित शीर्षक चुनो ?

१८—उद्योग हीन और कार्य हीन मनुष्यों के मन में शैतान का निवास स्थान रहता है। हाथ पर हाथ धरकर बैठे रहना मनुष्य के देह धर्म के विरुद्ध है। मनुष्य का मन पनचक्की के समान है। जब उसमें डालते जाओगे, तब वह गेहूँ को पीसकर आटा बना देगी, परन्तु जब उसमें गेहूँ न डालोगे, तब वह स्वयं अपने आप को पीसकर क्षीण बना डालेगी। अतः हमारा यही कर्त्तव्य है कि हम कुछ न कुछ अच्छा व्यवसाय अपने लिये पसंद करें। यह व्यवसाय हमारे मन, इच्छा,

कार्य-शक्ति और स्वभाव के अनुकूल होना चाहिये। यह शक्ति अथवा स्वाभाविक प्रवृत्ति चाहे किसी विशेष अवस्था अथवा परिस्थिति में न भी मालूम हो सके परन्तु वह ऐसी दृढ़ और उत्कट होती है कि वह आपही आप प्रकट हो जाती है। उसे कोई छिपा नहीं सकता। सारांशतः स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुकूल व्यवसाय करने पर जीवन की सफलता निर्भर है।

(क) ऊपर दिये हुए गद्यांश का आशय अपनी भाषा में लिखो।

(ख) रेखांकित भागों का अर्थ अपनी भाषा में स्पष्ट करो।

(ग) मनुष्य जीवन की सफलता उपयुक्त व्यवसाय चुनने पर निर्भर है। इसे उक्त गद्यांश के आधार पर प्रमाणित करो।

१९—संसार में वही व्यक्ति विजय लाभ करते हैं। जो 'निष्फलता' शब्द को अंतकरण से बहिष्कृत कहते हैं, उनका ध्यान चिन्तन अथवा कल्पना तक नहीं करते, उस ओर से मुँह मोड़ कर सदा-सर्वदा निज कार्य-सिद्धि-सफलता, विजय को परम परिपुष्ट साधनाकी ओर ही अपनी समस्त शक्ति उन्मुख रखते हैं तथा विघ्न-बाधाओं को परास्त करने की दृढ़ता भी आ जाती है। वे एक बार जो कार्य करने का निश्चय कर लेते हैं, उसमें अन्त तक दृढ़ता एवं धैर्य पूर्वक डटे रहते हैं। इस प्रकार चट्टान की तरह दृढ़ और निश्चय वाले व्यक्ति ही संसार में कुछ कार्य कर सकते हैं।

अशक्य, संशय, असम्भव जैसे पंगुकारी घृणित शब्दों को आज ही अपने कोश से निकाल दो। यदि संसार में कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पन्न करना चाहते हो तो कम हिम्मती को

मन के देश से निकाल दो और साग्रह निश्चय को धारण करो। धैर्य, शौर्य, निश्चय एवं निर्भयता की दिव्य पूंजी द्वारा तुम विजयी हो सकते हो।

(क) ऊपर दिये हुए गद्यांश का आशय अपनी भाषा में लिखो।

(ख) रेखांकित भागों का अर्थ अपनी सरल भाषा में स्पष्ट करो।

(ग) 'निश्चय बल' से क्या अभिप्राय है। ऊपर दिये हुए गद्यांश के आधार पर प्रमाणित करो कि निश्चय बल वाले आदमी ही संसार में कुछ कर सकते हैं।

नवाँ अध्याय

(१) वाक्य रचना

१—मनुष्य अपने मनोभावों को वाक्यों द्वारा प्रकट करता है। दो या अधिक शब्दों के समुदाय को वाक्य कहते हैं जिससे कहनेवाले का पूरा आशय समझ में आजाये। जैसे—देवदत्त हिन्दी लिखता है।

२—वाक्य के परस्पर सम्बन्ध रखने वाले दो या अधिक शब्दों को, जिनसे पूरा अभिप्राय नहीं समझ पड़ता, वाक्यांश कहते हैं। यथा—देवदत्त का भाई यज्ञदत्त, इतना होने पर।

३—वाक्य के दो बड़े भाग होते हैं :—(१) उद्देश्य, (२) विधेय। जिसके विषय में कुछ कहा जाता है, उसे 'उद्देश्य', और उद्देश्य के विषय में जो कुछ कहा जाता है, उसे 'विधेय' कहते हैं। यथा—विद्यार्थी पढ़ते हैं। इसमें 'विद्यार्थी' उद्देश्य और 'पढ़ते हैं' विधेय हैं।

४—उद्देश्य और विधेय को विशेषण एवं सम्बन्धी शब्दों द्वारा बढ़ा सकते हैं। यथा—परिश्रमी विद्यार्थी अपना पाठ शीघ्र पढ़ लेते हैं।

५—वाक्य में मुख्य उद्देश्य को 'कर्त्ता' और मुख्य विधेय को 'क्रिया' कहते हैं। उक्त उदाहरण में 'विद्यार्थी' कर्त्ता और 'पढ़ लेते हैं' क्रिया है।

६—पद योजना की साधारण रीति यह है कि वाक्य के आदि में कर्त्ता और अन्त में क्रिया और यदि अन्य कारकों की

आवश्यकता पड़े तो उन्हें कर्त्ता और क्रिया मध्य रखते हैं। यथा :—गुरुजी अपने छात्रों को हिन्दी की पुस्तक पढ़ा रहे हैं।

७—वाक्य में 'कर्म' कारक सकर्मक क्रिया के पूर्व और करण कारक उसके भी पहले लिखा जाता है। यथा—दर्जी सूई से कपड़ा सीता है।

८—अधिकरण, अपादान तथा सम्प्रदान कारक क्रमशः करण-कारक के पूर्व आते हैं। यथा:—विद्याशंकर ने विद्यालय में बस्ते से दयाशंकर के लिये अपने हाथ से पोथी निकाली।

९—सम्बोधन कारक कर्त्ता से भी पहले बोला और लिखा जाता है। यथा—हे दयालु भगवन ! मेरी सुनिये।

१०—सम्बन्ध कारक में सम्बन्ध पद के पश्चात् सम्बन्धी पद आता है। यथा—पुरन्दर की पुस्तक।

११—कर्त्ता, कर्म आदि कारकों का विशेषण एवं उनके सम्बन्धित शब्द उनके पूर्व ही आते हैं। यथा:—देवेन्द्र की बड़ी-बड़ी गायें घने वन में हरी-हरी घास शीघ्रता से चर रही हैं।

१२—विशेषण, विशेष्य के पूर्व आता है। यथा :—सुशील बालक। यदि विधेय विशेषण हो तो वह विशेष्य के आगे आता है। यथा :—सुरेन्द्र सच्चरित्र और सुशील है। यदि एक विशेष्य के कई विशेषण हों तो अन्त के विशेषण के पूर्व 'अव्यय' आता है। यथा :—कर्तव्य शील और उद्योगी छात्र।

१३—सर्वनाम के विशेषण प्रायः अन्त में ही रहते हैं। यथा :—वह बड़ा चंचल है। सर्वनाम यदि विशेषण में आये तो वह विशेष्य के पहले ही आता है। यथा :—ये सब सज्जन।

१४—जिसके विषय में मुख्य करके प्रश्न किया जाता है उसके पूर्व प्रश्नवाचक सर्वनाम आता है। यथा :—कौन कहता है ?

१५—पूर्व कालिक और समापिका क्रिया दोनों का प्रयोग यदि एकही वाक्य में हो तो पूर्व कालिक क्रिया, समापिका क्रिया के पूर्व रक्खी जाती हैं। यथा :—वीरेश्वर पढ़कर गया। उक्त दोनों क्रिया में अपना विशेषण अपने पहले रखती हैं। यथा—वीरेश्वर भलीभाँति पढ़कर शीघ्र गया।

१६—विस्मयादि बोधक अव्यय प्राय: वाक्य के प्रारम्भ में आता है। यथा—वाह ! आप भी क्या कहते हैं।

१७—यद्यपि और तथापि, जो और वह, जब और तब, यदि और तो ये सम्बन्ध वाचक शब्द हैं। जब 'यद्यपि' का प्रयोग किया जायगा तब दूसरे खण्ड में 'तथापि' शब्द लिखा जायगा। यथा :—यद्यपि आपने समझाया तथापि उसने न माना।

इसी प्रकार—यदि हीरा पढ़ना चाहता है तो पढ़ने दो। जो परिश्रम करेगा वह सुख से रहेगा। आदि।

१८—वाक्य में अन्य पद जो जिससे सम्बन्ध रखते हैं उनको उसके निकट रखना चाहिए। उपर्युक्त नियम पद-विन्यास के सम्बन्ध में लिखे गये हैं। कभी-कभी जब वाक्य में जिस भाग की प्रधानता दिखलानी हो, उसको पहले रखते हैं यथा—बोलता तो हूँ मैं, आप क्यों चिढ़ते हैं।

प्रश्न

अधो लिखित पदों को यथा स्थान रखते हुये फिर से लिखिये :—

(१) बातें बहुत कहकर चला गया वह।

(२) जानता है दामोदर इस बात को और जानेगा क्या कोई।

(३) मातृभाषा है जिनकी हिन्दी अपनी बोलचाल में नित्यकी करते हैं जिस रीति से वाक्य रचना उसे हैं कहते रोजमर्रा।

(४) अनुराग है आदमियों को पढ़ने में बहुत से ऐसा कि उनको लगता है अच्छा पढ़ना दिन भर।

(५) होता है लाभ बड़ा और आचार-विचार का पढ़ने से पुस्तकों के अच्छा सुधार है होता।

---

(२) अन्वय (मेल)

लिंग, वचन, पुरुष, कारक, काल आदि में कौन शब्द किस के अनुसार होता है अर्थात् 'अन्वय' की अभिज्ञता आवश्यक है। अतः कुछ नियम निम्नांकित हैं :—

(१) जब किसी वाक्य का कर्त्ता चिह्न-रहित हो तब क्रिया का लिंग, वचन, पुरुष, कर्त्ता के अनुसार होता है। यथा—वीरेन्द्र पुस्तक पढ़ता है।

(२) यदि कर्त्ता 'ने' युक्त हो और कर्म चिह्न रहित हो तो क्रिया का लिंग, वचन, पुरुष, कर्म के अनुसार होता है। यथा—सुरेन्द्र ने पुस्तक पढ़ी।

(३) यदि वाक्य में कर्त्ता और कर्म दोनों चिह्न सहित हों तो क्रिया सदा एक वचन, पुल्लिंग और अन्य पुरुष में होती है। यथा—लड़की ने आम को खाया। उस स्त्री ने बच्चे को बुलाया।

(४) यदि किसी वाक्य का कर्म 'सर्वनाम' हो, या क्रियार्थक संज्ञा हो, अथवा उपवाक्य हो तो 'ने' युक्त कर्त्ता की क्रिया

सदा एक वचन, पुल्लिंग और अन्य पुरुष में होती है। यथा—राम ने मुझे बुलाया। श्याम ने तैरना नहीं सीखा। विद्याधर ने कहा कि मैं कल पाठशाला जाऊँगा।

(५) यदि क्रिया के अनेक कर्त्ता किसी एक ही लिंग में हो, तो क्रिया उसी लिंग में बहुवचन होती है। यथा—वीरेन्द्र, सुरेन्द्र और धीरेन्द्र आये।

(६) आदर प्रदर्शन के लिये एकवचन कर्त्ता की क्रिया प्रायः बहुवचन में प्रयुक्त होती है। यथा—पंडित जी घर गये।

(७) यदि एक ही क्रिया के अनेक कर्त्ता, दोनों लिंगों और दोनों वचनों में हो तो क्रिया बहुवचन और लिंग, अन्तिम कर्त्ता के अनुसार होता है। यथा—उस मैदान में एक घोड़ा और बहुत सी गायें चरती हैं।

(८) यदि एकवचन के अनेक कर्त्ता भिन्न लिंग के हों तो क्रिया पुल्लिंग और बहुवचन होती है। यथा—बुढ़वा और बुढ़िया इस झोपड़े में बैठे। उस विद्यालय में सुशील और मनोरमा पढ़ते हैं।

(९) यदि वाक्य में एक ही क्रिया के भिन्न-भिन्न लिंग के अनेक कर्त्ता हों और उनके मध्य में कोई समुदायवाचक शब्द आ पड़े तो क्रिया का लिंग, वचन समुदायवाचक शब्द के अनुसार होता है। यथा—इस गाँव के पुरुष और स्त्रियां सब के सब साक्षर हो गये।

(१०) यदि किसी क्रिया के चिह्न रहित अनेक कर्त्ता हों और मध्य में 'न' 'या' 'अथवा' 'चाहे' आदि कोई विभाजक शब्द हो तो क्रिया का लिंग, वचन अन्तिम कर्त्ता के अनुसार होता है। यथा—उसका बैल अथवा मोहन की गाय घास चरती है।

(११) यदि एक ही वाक्य में तीनों पुरुष के कर्त्ता हों तो क्रिया का लिंग, वचन और पुरुष, उत्तम पुरुष, के अनुसार, यदि मध्यम और अन्य पुरुष हों तो क्रिया मध्यम पुरुष के अनुसार होगी । यथा—काशी में हम, तुम और मोहन जायँगे । वहाँ मोहन और तुम अवश्य जाना ।

(१२) ईश्वर और अनादर के लिए एकवचन में ही क्रिया लिखी और बोली जाती है । यथा—ईश्वर सब जानता है । तू यहाँ से भाग जा ।

(१३) कुछ कर्त्ताओं की क्रियायें प्रायः बहुवचन में ही प्रयुक्त होती है । यथा—आप निकल गये ।

(१४) यदि बहुत से उद्देश्यों का विधेय एक हो तो विधेय में अन्तिम उद्देश्य का लिंग होगा । यथा—रामू के बालक और बालिकायें साफ रहती हैं । यदि विधेय संज्ञा हो तो विधेय के अनुसार लिंग वचन होते हैं । यथा—सोना, चांदी, तांबा, लोहा आदि धातु हैं ।

(१५) विशेषण के लिंग, वचन, विशेष्य के अनुसार सम्बन्ध के सम्बन्धी के अनुसार होते हैं । तथा उसकी पुस्तक, राम के घोड़े आदि ।

(१६) 'प्रत्येक' या 'हर एक' विभाग बोधक विशेषण यदि संज्ञा के साथ हो तो क्रिया में एक वचन होगा । यथा—प्रत्येक बालक पढ़ रहा है ।

(१७) यदि भिन्न लिंग के विशेष्यों का एक ही विशेषण हो तो उसमें निकट के विशेष्य के लिंग और वचन होंगे । यथा—अच्छे घोड़े और घोड़ियाँ ।

(१८) यदि कई विशेषणों का एक ही विशेष्य हो तो सब में वही

लिंग, वचन होंगे जो विशेष्य के हैं। यथा—बेचारा, सीधा, सादा, मोटा पथिक।

(१९) उपर्युक्त नियमों के अतिरिक्तवाक्य रचना में आकांक्षा—योग्यता और आसानी का ज्ञान आवश्यक है। अकांक्षा एक पद की दूसरे पद के साथ योजना करने की जो इच्छा होती है, उसे आकांक्षा कहते हैं। जैसे—लड़का, घोड़ा यह वाक्य नहीं हैं क्योंकि आकांक्षा नहीं है किन्तु पढ़ता है, दौड़ता है इन क्रियाओं की योजना से वाक्य बन जाता है और पूरा अर्थ भी समझ में आ जाता है।

योग्यता—पदों के परस्पर उचित सम्बन्ध को कहते हैं। यदि कोई कहे कि आग से सींचते हैं तो यह वाक्य अशुद्ध है। क्योंकि 'सींचते हैं' क्रिया की योग्यता 'आग' से नहीं, वरंच 'जल' से है। अतः 'जल से सींचते हैं' शुद्ध वाक्य हुआ।

आसत्ति—पदों की समीपता को कहते हैं। अर्थात् जिस पद का अन्वय जिस शव्द के साथ अपेक्षित हो उसके बीच में बहुत समय का अन्तर न पड़ने पावे। जैसे—प्रातः काल 'धीरेश्वर', कहा जाये और सन्ध्या को 'पढ़ता है' कहा जाय तो यह वाक्य न कहलायेगा 'धीरेश्वर' के साथ ही 'पढ़ता है' कहने से वाक्य शुद्ध होगा।

प्रश्न

[१] निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करके लिखोः—

(१) मोहन ने यह पुस्तक नहीं पढ़ा है।
(२) माधो और साधो पढ़ता है।
(३) माधो या साधो पढ़ते हैं।
(४) पंडितजी ने कहा कि वह आम खाता है।

(५) हम और तुम आवो।

(६) मैं और वह जायँगे।

(७) उस मेले से कितनी गायें, और बैल खरीदे थे।

(८) ये पाठशालायें किसके हैं।

(९) तू, आइये।

३—'ने' का प्रयोग

वाक्य रचना में कर्त्ता के चिह्न 'ने' के प्रयोग की प्रायः अशुद्धि होती है। अतः इसके प्रयोग पर थोड़ा सा प्रकाश डाल देना अनुचित न होगा।

कर्त्ता का चिह्न 'ने' कहीं आता है कहीं नहीं।

(१) अकर्मक क्रिया चाहे किसी काल में हो उसके कर्त्ता के साथ 'ने' कदापि नहीं आता। यथा—राम खेलता है, श्याम सोया, गोपाल आयेगा।

(२) सकर्मक क्रिया के कर्त्ता के साथ—जब कि वह वर्त्तमान काल या भविष्य काल में हो 'ने' प्रयुक्त नहीं होता। यथा—लड़का पढ़ता है, लड़के जायँगे।

(३) सकर्मक क्रिया यदि अपूर्ण भूत या हेतुहेतुमद्भूत में हो तो उसके कर्त्ता के साथ 'ने' नहीं आता। जैसे—मैं पढ़ता था। वे पढ़ रहे थे।

(४) सकर्मक क्रिया यदि सामान्य भूत, आसक्तभूत, पूर्णभूत या सन्दिग्धभूत में हो तो उसके कर्त्ता के साथ 'ने' का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। जैसे—मैंने आम खाया।

लड़की ने आम खाया। लड़के ने आम खाया था, लड़की ने आम खाया होगा।

(५) आसन्न हेतु-हेतु मद्भूत, अथवा अन्तरित हेतुहेतुमद्भूत में यदि क्रिया सकर्मक हो तो उसका कर्ता 'ने' युक्त होता है। जैसे—उसने आम खाया हो, उसने आम खाया होता।

(६) बकना, बोलना, भूलना, लाना, ले जाना, खो जाना इन क्रियाओं के कर्त्ता के साथ उपर्युक्त कालों में 'न' का प्रयोग नहीं किया जाता। जैसे—वह थका। मैं भूला था। मोहन ले गया है। तू खा गया होगा।

(७) संयुक्त सकर्मक क्रिया में यदि उसका उत्तरार्द्ध अकर्मक हो तो सामान्यादि भूतकाल में उसमें कर्त्ता के साथ 'ने' का प्रयोग नहीं होता। जैसे—वह ले चुका था। मैं पढ़ चुका हूँ।

(८) यदि एक ही क्रिया के कई कर्त्ता हों तो अन्तिम कर्त्ता के साथ 'ने' प्रयुक्त होता है। गोपाल, कल्लन और मोहन ने पुस्तक पढ़ी।

प्रश्न

(१) निम्न लिखित वाक्यों को शुद्ध करके लिखो :—

मैं कहा। वह पूछे थे। पंडित जी ने बोला। वह उसे देखे होंगे। वह पुकारा पर मैं न सुने। सोहन ने देखता था। पन्ना कहे थे कि मैं घर जाऊंगा। स्त्रियें कहीं कि मैं शेर देखे हैं। वह नई रीतियों का चलाया था। श्रीमान् रानी महोदय ने बुलाया है। दमयन्ती गुणवान्, रूपवान, विद्वान और सुशीलवान थी।

(२) नीचे लिखे हुए वाक्यों में शब्दों और वाक्यों को शुद्ध करके पुनः लिखो :—

(क) इस कारज में भूल कर भी शैथिल्यता न की जाय।

(ख) उसका परसंसा सव लोग हिरदै से करते हैं।
(ग) भगवानदास के सौजन्यता से जगदीस को वड़ा प्रमोद हुआ था।
(घ) बुद्धिवान मनोरमा ने श्रीमान् रानी महोदय का वड़ा सेवा किया।

४—शोर्षक और प्रघट्टक

किसी विषय पर अपने मनोभावों या विचारों को व्यक्त करने के लिये लेखक उसे कई भागों में विभक्त कर देते हैं। प्रत्येक विभाग ऐसा होता है जो परस्पर सम्बद्ध रहता है और उसमें एक ही भाव की परिपुष्टि के लिये कई वाक्य समूह होते हैं। प्रत्येक विभाग नई पंक्ति से कुछ दाहिनी ओर हटकर लिखा जाता है। इस प्रकार एक ही भाव के परिपोषक वाक्य-समूह को 'प्रघट्टक' अथवा 'अनुच्छेद' कहते हैं। और, उस विषय के—जिसके सम्बन्ध में क्रमवद्ध प्रघट्टकों की रचना की जाती है और जो सवसे ऊपर (सिरे पर) मोटे अक्षरों में अंकित किया जाता जाता है 'शीर्षक' कहते हैं। आगे 'वैल' 'काशी' आदि कई शीर्षकों पर क्रमवद्ध प्रघट्टकों की रचना की गई है। इससे समझ में आ जायेगा कि प्रत्येक प्रघट्टक का प्रारम्भ कैसे किया जाता है और उससे यह भी ज्ञात होगा कि प्रघट्टक छोटा और वड़ा सव तरह का हो सकता है।

५—विरामादि चिह्न

वार्तालाप के तारतम्य में वक्ता अपने आशय को स्पष्ट समझाने के लिये कहीं अधिक समय तक रुक जाया करता है। ऐसे ही लेख में वाक्यों का भाव स्पष्ट करने हेतु यथा

स्थान रुकने के लिये चिह्नों की आवश्यकता पड़ती है। ठहराव सूचक चिह्नों को विरामादि चिह्न कहते हैं। इन चिह्नों के विना कभी-कभी अर्थ का अनर्थ हो जाता है। जैसे निम्नलिखित वाक्य देखने में एक ही मालूम होते हैं किन्तु चिह्नों के प्रयोग से इनके अर्थों में विभिन्नता पाई जाती है :—

(१) रोको मत, जाने दो।

(२) रोको, मत जाने दो।

अतः स्पष्ट है कि आवश्यकतानुसार रुकने और भाव को लेख से सूचित करने के लिए विरामादि चिह्नों का प्रयोग यथा स्थान किया जाये।

मुख्य विरामादि चिह्नों के नाम और प्रयोग संक्षेप में दिये जाते हैं।

(१) अल्प विराम (,) का प्रयोग वहाँ किया जाता है, जहाँ एक तरह के कई पदों अथवा वाक्यों का प्रयोग एक ही दशा में होता है। यथा—सुरेश, नरेश, महेश और दिनेश पाठशाला जा रहे हैं।

(क) सम्बोधन के पीछे अल्प विराम (,) लाते हैं। यथा-हे मोहन, यहाँ आवो।

(ख) पर, परन्तु, किन्तु, क्योंकि, इसलिये या इसी प्रकार के अन्य शब्द से कोई वाक्य आरम्भ हो तो उसके पूर्व अल्प विराम लाते हैं। यथा—वीरेन्द्र और धीरेन्द्र तो पढ़ते हैं, परन्तु सुरेन्द्र खेल रहा है। सुरेश आज उपस्थित नहीं हुआ, क्योंकि अस्वस्थ है।

(२) अर्द्ध विराम (;) का प्रयोग वहाँ किया जाता है जहाँ बाक्यांशों में दूर का सम्बन्ध होता है। यथा—जिस रचना में संस्कृत के सैकड़ों क्लिष्ट शब्द हों; जिसमें संस्कृत के

अनेक वचन तथा श्लोक उद्धृत हों; जिसमें अमेरिका, यूरोप के अनेक देशों के पण्डितों और लेखकों के नाम हों; जिसमें अंग्रेजी नाम, शब्द और वाक्य अंग्रेजी अक्षरों में लिखे हों; उस रचना को लोग बहुधा पाण्डित्य पूर्ण समझते हैं, परन्तु यह गुण नहीं, दोष है। [सरस्वती।]

(३) पूर्ण विराम (।) का प्रयोग वहाँ किया जाता है, जहाँ पर एक वाक्य पूरा होता है। यथाः—गोपाल पढ़ कर घर गया। हरिदास घर से आया।

(४) उद्गार (!) का प्रयोग विस्मयादिबोधक अव्यय के आगे किया जाता है। यथाः—वाह ! कैसी निराली छटा है।

(५) प्रश्न सूचक (?) प्रश्न वाचक वाक्य के अन्त में पूर्ण विराम के बदले प्रयुक्त होता है। यथाः—तुम क्या करते हो ?

(६) आदेशक (—) इसे डैश भी कहते हैं। जब रचना में ऐसी बात आ पड़ती है जिसको स्पष्ट करना पड़ता है, तब स्पष्ट करनेवाली बात के आदि और अन्त में 'डैश' प्रयुक्त किया जाता है। अथवा ( ) या [ ] चिह्न लगा देते हैं। यथा—सज्जनों के आचार, व्यवहार की—दुष्टों के अतिरिक्त—सभी प्रशंसा करते हैं।

(७) योजक (-) का प्रयोग सामाजिक शब्दों के मध्य अथवा दो या अधिक शब्दों का सम्बन्ध प्रगट करने के लिये उनके बीच में लगाया जाता है। यथा—

(क) मानस-सलिल-सुधा-प्रति पाती।

(ख) सुख-दुख, राजा-प्रजा।

(८) युगलपाश या उद्धरण ("...") का प्रयोग उस वाक्य के

दोनों ओर करते हैं, जो किसी पुस्तक से उठाकर ज्यों का त्यों लिख दिया जाता है। यथा—सत्य के विषय में गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा है :—"सत्य मूल सब सुकृत सहाये। वेद, पुराण विदित मुनि गाये"।

(९) कोलन और डैश (:—) का प्रयोग उस समय किया जाता है जब किसी वाक्य के आगे बहुत सी बातें क्रम-बद्ध लिखी जाती हैं। यथा—नीचे लिखे शब्दों का अर्थ लिखो :—

धर्म शीलता, कर्त्तव्य-परायण और सम्पदाभिमन्ति।

सूचना—कोई-कोई लेखक 'कोलन और डैश' के बदले केवल 'डैश' का प्रयोग करते हैं।

(१०) वर्जन या लोप (....) का प्रयोग उस स्थान पर किया जाता है, जहाँ एक या अधिक वाक्य, शब्द या अक्षर अप्रगट रक्खा जाता है। अथवा, जब किसी वर्णन का कुछ भाग लिखने से सम्पूर्ण का बोध हो जाये तब शेष के लिए वर्जन चिह्न लाते हैं। यथा—उसने......कह कर मारा। कह दशकन्ध......दश कन्धर।

प्रश्न

यथा स्थान विरामादि चिह्नों का प्रयोग करो :—

(१) राम श्याम और हरी खेल खेलते हैं।

(२) हे गोपाल क्या करते हो।

(३) जिसने बालपन में विद्या नहीं पढ़ी, युवाकाल में धन संग्रह नहीं किया, वृद्धावस्था में धर्म नहीं किया, वह चौथेपन में क्या कर सकता है।

(४) उसने कहा मैं सत्य कहता हूँ आप मान जाइये।

———

दसवाँ अध्याय

[१] भाव प्रकाशन

ईश्वर की सृष्टि में सर्व श्रेष्ठ प्राणी है—'मनुष्य'। मानव में सर्वोत्तम एवं प्रधान वस्तु है 'भाव'। यह अपने मनोभावों को दो प्रकार से दूसरों पर प्रकाशित कर सकता है। एक तो 'कहकर' दूसरे 'लिखकर'।

जो भाव मुख द्वारा बोलकर किसी पर प्रगट किया जाता है उसे 'व्याख्यान' कहते हैं। बोलनेवाले को 'वक्ता' कहते हैं। जिसके सम्मुख अपना मनोभाव प्रकट किया जाता है उसे 'श्रोता' कहते हैं।

जो विचार क्रम पूर्वक लिखकर प्रकाशित किया जाता है उसे लेख, निबन्ध अथवा प्रबन्ध रचना कहते हैं। लिखने वाला 'लेखक' और पढ़ने वाला 'पाठक' कहलाता है।

[२] निबन्ध के भेद

विषयानुसार निबन्ध कई भागों में विभाजित किया जा सकता है। परन्तु प्रधानतः इसके तीन ही भेद माने जाते हैं। इन्हीं के अंतर्गत सब प्रकार के निबन्ध आ जाते हैं।

जिस निबन्ध या लेख में देखी-सुनी तथा जानी-पहिचानी बातों का वर्णन किया जाता है, उसे 'वर्णनात्मक निबन्ध' कहते हैं। जैसेः—गाय; बैल, तोता, आम का वृक्ष, किसी यात्रा का वर्णन,

किसी वाटिका की शोभा, किसी बारात (वर-यात्रा) की सजावट आदि।

जिस लेख में पौराणिक कथाएँ, ऐतिहासिक-स्थान या पुरुष अथवा किसी घटना का वर्णन किया जाता है उसे 'घटनात्मक निवन्ध' कहते हैं। जैसे:—भक्त शिरोमणि ध्रुवजी की कथा, महात्मा तुलसीदास का चरित, प्लासी का युद्ध, गंगा की बाढ़ आदि।

जिस निबन्ध में तर्क-वितर्क के साथ किसी विषय पर अपना विचार प्रकट किया जाता है, उसकी उपयोगिता तथा उसके गुण-दोष पर विवेचना की जाती है, उसे 'विचारात्मक-निवन्ध' कहते हैं। जैसे:—सत्य की महिमा, असत्य भाषण के दोष, वर्षा के कारण आदि। तर्क, विज्ञान एवं तुलना सम्बन्धी आदि सब प्रकार के निबन्ध विचारात्मक निबन्ध के अंतर्गत आ जाते हैं। बड़े-बड़े लेखकों की रचना में लगभग सभी प्रकार के प्रबन्धों का समावेश रहता है।

[३] निबन्ध के भाग

साधारणतः हर प्रकार के निबन्ध के ३ भाग होते हैं। (१) प्रारम्भ (२) विस्तार (३) समाप्ति।

कसी विषय को प्रारम्भ करने के लिये कोई मुख्य नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता। प्रत्येक लेखक अपनी योग्यता के अनुसार विषय को भिन्न-भिन्न ढंग से आरम्भ करता है। कोई-कोई तो लेख का विषय बतलाकर सीधे ही लिखना प्रारम्भ कर देते हैं। यथा—'आज' मैं अमुक विषय पर अपना विचार प्रगट करना चाहता हूँ।' कुछ लेखक विषय की परिभाषा अथवा अर्थ

समझाकर लेख आरम्भ कर देते हैं। कोई विषय से सम्बन्ध रखनेवाली छोटी कहानी, पौराणिक या ऐतिहासिक कथा, लोकोक्ति अथवा किसी कवि की कविता के साथ अपना लेख प्रारम्भ करते हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि लेखक को किस नियम का अनुसरण करके लेख प्रारम्भ करना चाहिये, पर इसका ध्यान अवश्य करना चाहिए कि प्रारम्भ में कुछ ऐसी बातें लिखी जावें जिससे पाठकों का ध्यान विषय की ओर आकृष्ट हो जाये।

२—विस्तार को लेख का मुख्य भाग कह सकते हैं। इस भाग में विषय के सम्बन्ध की सभी आवश्यक बातें लिखी जाती हैं। इसमें विचारों के क्रम और सम्बन्ध का पूर्ण ध्यान रखना चाहिये। एक-एक बात को पृथक्-पृथक् अनुच्छेदों या प्रघट्टकों में लिखना अच्छा होता है। किसी विचार के पुष्टीकरण के लिए कोई उदाहरण अथवा किसी विद्वान की उल्लेखनीय उक्तियों को स्थान दे देना भी युक्ति संगत प्रतीत होता है किन्तु उदाहरण संक्षेप में और विषय से पूर्ण सम्बन्धित हो। तात्पर्य यह है कि विषय की सभी मुख्य बातें यथा स्थान इस भाग में वर्णन की जाँय।

३—समाप्ति का ढंग भी 'प्रारम्भ' की भाँति भिन्न-भिन्न होता है। कुछ लोग लेख का निचोड़ अथवा सारांश लिखकर समाप्त करते हैं। कोई-कोई विषय से जो शिक्षा मिलती है, उसे प्रभाव-शाली शब्दों में प्रगट करके लेख समाप्त करते हैं। कोई-कोई उस विषय में अपनी अंतिम सम्मति प्रगट करते हैं। चाहे जिस रीति से लेख को समाप्त किया जाय, किन्तु इस बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिये कि लेख के समाप्त होने पर पाठकों का चित्त सन्तुष्ट हो जाये।

४—निबन्ध का ढाँचा

बना लेने से विचारों के स्पष्टी करण में बड़ी सहायता मिलती है। जब किसी विषय पर लेख लिखना हो तब लिखने के पूर्व पहले कुछ देर तक यह सोचना चाहिये कि इसके सम्बन्ध में कितनी बातें हमें ज्ञात हैं? जो-जो बातें ज्ञात हों, उनको संकेत रूप में एक स्थान पर अंकित कर लेना चाहिये। पुनः सोचने में समय देकर और बातें ज्ञात करनी चाहिये। जो ज्ञात हों, उन्हें भी लिख ले। जब उस विषय की कोई बात शेष न समझी जाय तब सोचना बन्द करके, लिखे विचारों के पढ़ने में समय लगाना चाहिये और उनका क्रम ठीक कर लेना चाहिये। क्रम में ज्ञात और साधारण बातें पहले और विशेष बातें पीछे रक्खी जावें और जो बात जिससे सम्बन्ध रखती हो, वह उसके समीप रहे जिससे एक बात पढ़ने के पश्चात दूसरी बात पढ़ने के लिये पाठक उत्सुक रहें।

इस प्रकार ढाँचा तैयार हो जाने पर, उसी क्रम से प्रत्येक बात बढ़ाकर लिखा जावे। ढाँचे की जब एक बात लिख ली जाये तब दूसरी बात नये प्रघट्टक से लिखनी चाहिये।

पहले ढाँचा बनाने में विद्यार्थियों को कुछ कठिनाई प्रतीत होगी। अतः अध्यापक-गण को चाहिये कि उनकी पढ़ी पुस्तकों की किसी कहानी का संक्षेप रूप श्यामपट्ट पर लिख दें। लड़के उसी क्रम से बढ़ाकर उस कहानी को पूरा करें। इस प्रकार कुछ कहानियों का ढाँचा बनाकर और पुनः उसे विस्तृत करके लिखने से उनका उत्साह बढ़ जायगा और उन्हें लिखने का मार्ग भी ज्ञात हो जायगा।

(५) कहानियों का ढाँचा

१—सौदागर और डाकू

एक सौदागर का मेले से घर लौटना, उसके पास बहुत रुपया होना। अकस्मात् तीव्र वृष्टि का होना, सौदागर का भीग-जाना, उसका बड़बड़ाना, एक डाकू का उसपर आक्रमण करना, डाकू का बन्दूक चलाना और असफल रहना, बारूद का ठंडा होना, सौदागर का साफ़ बचना।

२—अंगूर ही खट्टे हैं

एक लोमड़ी को भूख लगना, अंगूर के वृत्त का देखना, अंगूर का गुच्छा ऊँचे स्थान पर होना, लोमड़ी का उछलना, वहाँ तक न पहुँचना, अंगूर का न मिलना, उसका लजाना, यह कह कर जाना कि अंगूर ही खट्टे हैं।

३—प्यासा कौवा

एक कौवे को प्यास लगना, पानी के खोज में भटकना, दूर एक घड़े का दीखना, उसमें पानी का पेदी में होना, चोंच का न पहुंचना, यह सूझना, कंकड़ों को एक-एक करके डालना, पानी का ऊपर आ जाना, पेट भर पानी पीना, प्रसन्न होकर उड़ जाना।

इसी प्रकार छोटी छोटी कहानियों के लिखने का अभ्यास हो जाने पर जानी-पहिचानी बातों पर लेख लिखने का अभ्यास करना चाहिये।

४—बैल

ढांचा—(१) साधारण वर्णन—चौपाया, दूध पीने वाला।

(२) आकार-प्रकार—डील, खुर, पूंछ, सींग दाँत, रंग काला, भंवरा, लाल आदि ।

(३) रहने का स्थान—पालतू, सब देशों में ।

(४) भोजन—घास, भूसा, दाना, खली, नमक ।

(५) स्वभाव—सीधा, कोई-कोई नटखट, मरकहा ।

(६) गुण-दोष—परिश्रमी, सन्तोषी, हिन्दू लोगों का भनका, टुनका, भूमना, जीभ लोदना, आदि दोष मानना ।

(७) लाभ—हल, गाड़ी आदि में जोतना, बोझा ढोना, गोवर, चमड़ा और हड्डी से उपकार होना ।

(८) उपसंहार—उपकारी पशु की रक्षा, उसकी वृद्धि, मनुष्य का परमधर्म ।

ढांचे के अनुसार पूर्ति—

ईश्वर की सृष्टि में नाना प्रकार के जीव देखने में आते हैं। उनमें 'वैल' मनुष्यों के बड़े काम का जीव है। इसके चार पैर होते हैं। बचपन में यह अपनी माता का दुग्ध पान करता है। फिर-घास-पात खाने लगता है। यह पागुर करने वाले जानवरों में से है।

इसका डील लगभग भैंस के बराबर होता है। यह तीन हाथ से पाँच हाथ तक लम्बा और तीन-चार हाथ तक ऊँचा होता है। वैल का शरीर भारी और सुगठित होता है। इसका रंग काला, भूरा, लाल, चितकबरा, श्वेत आदि अनेक प्रकार का होता है। इसके चारों पैर पुष्ट और खुर फटे होते हैं। पूंछ लम्बी होती है जिसके सिरे पर बालों का गुच्छा होता है। इससे वह मक्खियों को उड़ाया करता है। वैल के सिर पर दो सींग होते

हैं जिससे वह अपने बैरियों का सामना करता है। आँखें बड़ी-बड़ी तथा नथुने चौड़े होते हैं। इसके कन्धे और पीठ के बीच का भाग कुछ ऊँचा होता है जिसे 'डिल्ल' कहते हैं। गले का चमड़ा कुछ नीचे की ओर लटका रहता है जिसे 'ललरी' कहते हैं। बैल के मुँह में दाँतों की एक पंक्ति नीचे की ओर होती है। इसकी सारी देह रोयें से ढकी रहती है।

बैल लगभग सब देशों में पाये जाते हैं। यह प्रायः पाल होते हैं। स्थान के विचार से इनके रंग-रूप में भेद होते हैं और नाम भी स्थानानुसार कहे जाते हैं।

यथा :—गुजराती, चम्बली, जनकपुरी आदि।

इसका मुख्य भोजन घास, भूसा है। बैल से अधिक काम लेने वाले लोग इसे दाना, खली, महुवा और नमक भी देते हैं।

इसका स्वभाव बहुत सीधा होता है। कोई-कोई मरकहे भी होते हैं। इसकी चाल धीमी होती है किन्तु जब यह डर कर भागता है तब बहुत तेज दौड़ता है।

इसमें सन्तोष रखने और परिश्रम करने का गुण विशेष करके पाया जाता है। चाहे इसका पेट भरा रहे चाहे न भरा रहे जिस काम में जोत दिया जाता है, अपनी शक्ति भर काम करता रहता है। हिन्दू लोग इनमें भनका, टुनका, मूमका, 'जीभ लोढ़ना' आदि अनेक दोष मानते हैं।

बैल से मनुष्यों को बहुत से लाभ पहुंचते हैं। वह खेत जोतता है, बोझा ढोने के काम में आता है, गाड़ियाँ खींचता है। इससे सिंचाई, मड़ाई आदि काम लिये जाते हैं। कहाँ तक कहें इसके गोबर, चमड़ा और सींगों से भी मनुष्यों के बहुत उपकार होते हैं।

अतः ऐसे उपकारी जानवर की रक्षा और उसकी वृद्धि के लिए प्रयत्न करना मनुष्य का परम-धर्म है।

२—काशी

ढाँचा—

(१) साधारण वर्णन—नामकरण, स्थिति, विस्तार, मन्दिर और धर्मशालाओं की अधिकता।

(२) इतिहास सम्बन्धी—राजघाट का प्राचीन खँडहर, सारनाथ में बौद्ध स्मारक।

(३) धर्म सम्बन्धी—मोक्ष प्राप्ति, ग्रहण स्नान, पिण्डदान, देवताओं के दर्शन, पंचक्रोश का महत्त्व।

(४) शिक्षा सम्बन्धी—संस्कृत विद्या का केन्द्र, हिन्दी तथा अंग्रेजी की पाठशालायें, विश्वविद्यालय, पुस्तकालय, वाचनालय, समाचार पत्र-पत्रिकायें।

(५) व्यवसाय—काशी सिल्क, बनारसी साड़ी, काटन मिल, पीतल के नक्कासीदार बर्तन, लकड़ी के खिलौने, व्यापारिक मार्ग (गंगा नदी, रेलवे लाइनें)

(६) दर्शनीय स्थान—विश्वनाथ जी का मन्दिर, मानमन्दिर, माधवराव का धौरहरा, क्वीन्स कालेज, विश्वविद्यालय, विद्यापीठ, भारतमाता का मन्दिर, महाराज बनारस की कोठी, दीवानी कचहरी, नागरी प्रचारिणी सभा, मोती झील आदि।

पूर्ति—

काशी एक प्राचीन नगरी है, इसे बनारस भी कहते हैं। पूर्व में इसका नाम 'वाराणसी' था। यह नाम 'वरुणा और अस्सी' के मध्य बसने के कारण रक्खा गया था। यही 'वाराणसी बिगड़ते-बिगड़ते 'बनारस' हो गया। यह पुण्य नगरी जो तीन लोक से न्यारी कही जाती है, भगवती भागीरथी के वाम तट पर अवस्थित है। धार्मिक प्रसिद्धता एवं विद्या का केंद्र होने के कारण इसका विस्तार दिनों दिन बढ़ता ही जाता है। यह नगर उत्तर में सारनाथ से लेकर दक्षिण में विश्वविद्यालय तक, पूर्व गंगातट से पश्चिम मडुवाडीह तक फैला हुआ है। यहाँ की आबादी बहुत घनी है। इसमें हिन्दू मुसलमान, ईसाई सब धर्म और मत के लोग पाये जाते हैं। किन्तु हिन्दुओं की संख्या अधिक है। इस नगर में जितने मन्दिर और जितनी धर्मशालायें हैं उतनी कदाचित् किसी अन्य नगर में हों। यहाँ बहुत सी पक्की सड़कें हैं। नगरों में नलों द्वारा पानी पहुँचाया जाता है। स्वास्थ्य रक्षा के लिए बहुत से अस्पताल और औषधालय हैं। इस नगर का प्रबन्ध म्यूनिसिपैलिटी के आधीन है। यह जिले और कमिश्नरी का मुख्य स्थान है।

पुराणों से पता चलता है कि यहाँ काशीराज नामक एक राज्य था जिसके कोट के खण्डहर अब तक पाये जाते हैं। वर्त्तमान काशी नरेश गंगा के दूसरे तट पर 'रामनगर' में निवास करते है। काशी एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान है। महात्मा बुद्ध का उपदेश सर्व-प्रथम यहीं से प्रारम्भ हुआ था। 'सारनाथ' में बौद्धों के स्मारक अब तक पाये जाते हैं। औरंगज़ेब आदि कई मुसलमान बादशाहों ने इस नगर को नष्ट करने के लिए अनेक प्रयत्न किये, किन्तु इसकी महिमा कुछ

कम न हुई। ज्ञान-वापी पर विश्वनाथ का पुराना मन्दिर तोड़कर औरंगजेब ने मसजिद बनवाई।

हिन्दू लोग काशी को इतना पवित्र मानते हैं जितना किसी भी तीर्थस्थान को नहीं। बहुत-दूर-दूर के धार्मिक पुरुष काशी-वास करने के लिए यहाँ आते हैं। हिन्दुओं को विश्वास है कि काशी में देह त्याग करने पर अवश्य मोक्ष प्राप्ति होती है। यहाँ ग्रहण-स्नान और पिण्डदान का विशेष माहात्म्य माना जाता है। बहुत से यात्री देव-दर्शन के लिए सदैव आते रहते है। प्रायः तीसरे वर्ष बढ़ोत्तरी मास में काशी की परिक्रमा (पंचकोस) करना लोग धर्म समझते हैं।

काशी केवल धार्मिक स्थान ही नहीं अपितु शिक्षा में भी बढ़ा हुआ है। संस्कृत विद्या का तो केंद्र है ही, हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषाओं के भी अनेक स्कूल और कालेज विद्यमान हैं। महामना मालवीय जी की सुकीर्ति हिन्दू विश्वविद्यालय अपना सिर ऊँचे किये हुए समस्त भारतीय छात्रों को बुला रहा है। ज्ञान-वर्द्धन के हेतु, अनेक पुस्तकालय एवं वाचनालय खुले हुए हैं। समाचार पत्रों और पत्रिकाओं की भी कमी नहीं हैं।

यह नगर कला कौशल में भी दिनों-दिन उन्नति कर रहा है। यहाँ से काशी-शिल्क, बनारसी साड़ियाँ, पीतल के नक्काशी-दार बर्त्तन, लकड़ी के खिलौने आदि वस्तुयें बाहर भेजी जाती हैं। काटन मिल के खुल जाने से यहाँ बम्बई, कानपुर आदि मिलों की भाँति स्वस्थानीय वस्त्र भी बनने लगे हैं। प्राचीन काल में यहाँ का व्यवहार गंगा नदी के द्वारा होता था, किन्तु आज कल ईस्ट इंडिया रेलवे और 'अवध तिरहुत रेलवे, जंकशन होने के कारण बहुत सा माल रेलों द्वारा ही भेजा जाता है। डाक और तार का भी समुचित प्रबन्ध है।

यों तो तीर्थ स्थान एवं विद्या प्राप्त करने निमित्त दूर-दूर के वहुतेरे लोग यहाँ आया करते हैं किन्तु बहुत से मनुष्य केवल काशी की शोभा देखने के लिए आते हैं । रामघाट के पुल पर होकर जब हम काशी की ओर देखते हैं तब अत्यन्त आनन्द प्राप्त होता है । यहाँ विश्वनाथ और अन्नपूर्णा का मन्दिर, मानमन्दिर, सारनाथ, माधवराव का धौरहरा, क्वींस कालेज, विश्वविद्यालय, विद्या-पीठ, भारतमाता का मन्दिर, महाराज बनारस की कोठी, दीवानी कचहरी, नागरीप्रचारिणी सभा, तथा मोतीझील आदि अनेक स्थान देखने योग्य हैं । कहाँ तक कहें काशी की महिमा अकथनीय है । कम से कम एकबार अवश्य इसे देखना चाहिए ।

३—किसी विवाह का वर्णन

ढाँचा—

(१) वरयात्रा की सजावट—हाथी, घोड़ा पालकी, बराती वाजा आदि ।

(२) द्वार पूजा पर समरोह—बाजों का बजना, बराती के द्वार पर अतिथियों की भीड़, बारातवालों का द्वार पर पहुँचना, पंडितों का शास्त्रार्थ, द्वार पर सौभाग्यवती स्त्रियों का मंगल गान, दान-दक्षिणा देना ।

(३) जनवासा और मंडप की सजावट—नाच-गान, खान-पान, आदर-सत्कार आदि । पंडित-पुरोहित लोगों का मंत्रोच्चा-रण, कन्या-दान, ब्राह्मणों को दक्षिणा देना, वर का कोहबर में जाना आदि ।

४—महात्मा तुलसीदास

ढाँचा—

(१) जन्म तथा वंश परिचय—सम्वत् १५८९ विक्रमीय, पिता का नाम आत्माराम, माता का नाम हुलसी; जन्म स्थान में मत-भेद कोई राजापुर, कोई हाजीपुर, कोई हस्तिनापुर कहता है। राजापुर जन्म स्थान अधिक सम्भव।

(२) बाल्यावस्था—मूल नक्षत्र में उत्पन्न, माता-पिता द्वारा त्याग, स्वामी नरहरिदास के यहाँ पालन, शिक्षा।

(३) गार्हस्थ्य जीवन—दीनबन्धु पाठक की कन्या से व्याह, स्त्री से अधिक प्रेम, पत्नी का उपदेश प्रभाव-शाली होना, भगवान राम के प्रेम में लगना,

(४) वैराग्य—सांसारिक माया से विरक्त, अयोध्या, मथुरा, सोरों, काशी तीर्थ करना, राम-चरित मानस का लिखना आदि।

(६) साहित्य सेवा—रामचरित मानस, विनय पत्रिका आदि ग्रन्थों की रचना, उनके महत्व,

(७) पांडित्य और भक्ति—सांसारिक ज्ञान, चतुरता, हिन्दी भाषा-भाषी इनके ऋणी हैं।

(८) मृत्यु—सम्वत् १६८०, असी गंग के तीर।

(९) जीवनी से शिक्षा—'एक हि साधे सब सधे' का मूलमंत्र राम नाम पर दृढ़ विश्वास, देश तथा समाज सुधार, मनुष्य किस प्रकार

कर सकता है। 'विद्या से नम्रता आती है कि प्रत्यक्ष उदाहरण महात्मा तुलसी दास हैं।'

५—समाचार पत्र

सूची—

(१) समाचार पत्र का तात्पर्य (व्युत्पत्ति के साथ)

(२) आवश्यकता तथा लाभः—

(क) मनोरंजन, (ख) विविध प्रकार के समाचारों की अभिज्ञता, (ग) साहित्य की उन्नति (घ) योग्यता की वृद्धि (ङ) नये विचारों के प्रचार का साधन, (च) सरकार और जनता का मध्यस्थ, (छ) अनुचित कार्यों का प्रति बन्धक (ज) व्यापार की उन्नति में सहायक।

(३) समाप्ति—

६—मेले और उनसे लाभ तथा हानि

सूची :—

(१) मेला क्या है ?

(२) मेले की आवश्यकता—(पर्व, तीर्थ, धार्मिक समारोह तथा पशुओं के क्रय-विक्रय के अभिप्राय से)

(३) लाभ—

(क) मित्रों से भेंट (ख) जल-वायु परिवर्त्तन, (ग) मनोरंजन (घ) आवश्यक वस्तुओं का क्रय-विक्रय (ङ) उपदेश का सुअवसर तथा चतुरता की प्राप्ति।

(४) हानि :—

(क) चोरी का भय (ख) रुपये का अपव्यय (ग) समय का दुरुपयोग (घ) शारीरिक कष्ट (ङ) छूत की बीमारी फैलने का भय आदि ।

(५) समाप्ति—

७—ग्राम की सुखद और चित्ताकर्षक वस्तुयें

सूची :—

(१) ग्राम की सुखद वस्तुयें :—

(अ) शुद्ध, स्वच्छ और सुखद वायु । (आ) पवित्र जल (इ) समुचित प्रकाश की प्राप्ति (ई) शुद्ध आटा, घी, धारोष्ण दुग्ध, ताजा रस, और फसल की वस्तुओं का समय पर मिलना । (जैसे—अन्न, फल और तरकारी आदि ।)

(२) चित्ताकर्षक वस्तुयें :—

(अ) शस्यमय भूमि का अनुपम दृश्य ।

(आ) पक्षियों के मधुर सुरीले शब्द ।

(इ) वन, उपवन के सुहावने दृश्य ।

(ई) ग्रामीण जनों की स्वाभाविक सादगी ।

(३) समाप्ति—(पूर्व के बताये हुए किसी अच्छे ढंग से)

८—कुत्ता और घोड़ा के गुण-दोषों की तुलना

सूची :—

(क) कुत्ता और घोड़े के गुणों की समता—

(अ) दोनों में स्वामि-भक्ति का प्रशंसनीय गुण ।

(आ) दोनों शक्ति के अनुसार अपने रक्षक के काम आनेवाले ।

(इ) दोनों वीर, निर्भय, साहसी, परिश्रमी, आज्ञाकारी और चतुर।

(ई) दोनों का सोना, जागना।

(२) विरुद्धता—(१) घोड़ा सवारी और बोझा ढोनेवाला किन्तु कुत्ता शिकारी और घर की रखवाली करने वाला जानवर है।

(२) कुत्ते में सूंघने की शक्ति विशेष।

(३) दोष—(अ) भूखा रहने पर काटना और लात मारना

(आ) घोड़े में हिन्दू अरजल, अकरब, आदि दोष मानते हैं किन्तु अन्य देश वाले ऐसे दोष नहीं मानते।

(ओ) कुत्ते में सब से बड़ा दोष अपनी जाति को देख कर जलना।

(औ) अपालतू कुत्तों का पेट के लिये दर-दर घूमना और 'कुकुरै अढ़ाई परग' की कहावत चरितार्थ करना।

६—निबन्ध लिखने के लिये कतिपय विषय

वर्णनात्मक—(१) अपनी पाठशाला की वाटिका का वर्णन, (२) किसी की हुई यात्रा का (३) किसी देखे हुए उत्सव का (४) किसी देखे हुए मेले का (५) अपनी पाठशाला के पुस्तकालय के उत्सव का (६) गाय (७) अपना गाँव (८) बरसात में खेतों की सैर (९) किसी जलाशय की सैर (१०) मैंने गर्मी की छुट्टी कैसे बितायी (११) अपनी पाठशाला पर गाँधी-जयंती किस प्रकार मनाया।

घटनात्मक—(१) अपनी लेखनी की कहानी (२) किसी पतित वृक्ष की आत्म कहानी (३) महात्मा बुद्ध, (४) महाराज शिवाजी (५) भक्त प्रवर ध्रुव की कथा, (६) गंगावतरण (७) महात्मा गाँधी (८) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (९) महामना मालवीय जी की जीवनी।

विचारात्मक—(१) सत्य बोलने के लाभ (२) आज्ञा पालन (३) सेवा कार्य (४) ग्राम्य जीवन (५) सत्संग की महिमा (६) पुस्तकालय (७) व्यायाम की उपयोगिता (८) उत्तम व्यवसाय कृषि कर्म है (९) समय का सदुपयोग (१०) स्वच्छता (११) स्वास्थ्य रक्षा के उपाय (१२) पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं (१३) जैसी बहै बयारि तब तैसी दीजै (१४) आलस्य दरिद्रता का मूल है (१५) निर्धनता विद्याध्ययन से बाधक है या साधक (१६) सोना और लोहा इन दोनों में मनुष्य के अधिक काम का कौन है (१७) तुम्हें ग्राम में रहना पसन्द है या नगर में और क्यों ? (१८) छात्रावास में रह कर पढ़ना अच्छा होता है या घर पर (१९) कृषि कर्म उत्तम है अथवा व्यापार (२०) एक पंथ दो काज। (२१) विद्यार्थी जीवन (२२) चाँदनी रात (२३) प्रदर्शिनी का महत्त्व (२४) पाठशाला एक परिवार है (२५) विद्याध्ययन एक तप है।

८—पत्र-लेखन

अपने स्थान से दूर निवास करनेवाले व्यक्ति पर जिस, लेख द्वारा अपना मनोभाव व्यक्त किया जाता है उसे 'पत्र' कहते हैं। जिसको पत्र लिखा जाता है उसे 'पत्र प्रेष्य' और लिखने वाले को 'पत्र-प्रेषक' कहते हैं।

कुछ पत्र ऐसे होते हैं जो अपने सम्बन्धियों, मित्रों या परिचितों को लिखे जाते हैं। ऐसे पत्रों को निजी पत्र कहते हैं।

कुछ पत्र सरकारी या अन्य पदाधिकारियों अथवा व्यवसाय आदि से सम्बन्ध रखने वालों को लिखे जाते हैं ऐसे पत्रों को 'काम-काजी' पत्र कहते हैं :—

निजी पत्र तीन प्रकार के होते हैं।

(१) बड़ों की ओर से छोटों को (२) छोटों की ओर से बड़ों को (३) बराबर वालों को।

सम्बन्ध, अवस्था और योग्यता के कारण इनमें से प्रत्येक के भेद हो सकते हैं। पत्र लिखते समय छोटाई बड़ाई का विचार रखना आवश्यक है।

निजी पत्रों में लेखक को सब प्रकार की बातों के लिखने की स्वतंत्रता रहती है किन्तु काम-काजी पत्रों में नियमों का पालन करते हुए केवल मतलब की बातें लिखी जाती हैं।

पत्र के ४ भाग होते हैं :—

पहिले भाग में पत्र के उर्ध्व भाग पर किसी अपने इष्ट देव का नाम लिखा जाता है। दूसरे भाग में प्रशस्ति लिखने की चाल है। प्रशस्ति से प्रेष्य का पद, आदर, सम्मान प्रगट होता है। तीसरे भाग में प्रेषक अपना मुख्य अभिप्राय प्रगट करता है। चौथे भाग में मिति अथवा तिथि, मास और सन् सम्वत् लिखा जाता है।

आज कल पत्र लिखने की दो प्रथायें प्रचलित हैं।

(१) प्राचीन प्रथा—जिसमें लम्बी-चौड़ी प्रशस्ति रहती है।

(२) नवीन प्रथा—जिसमें प्रशस्ति छोटी और संक्षिप्त रहती है किन्तु मतलब की बात अधिक रहती है। प्राचीन प्रथा के पत्रों में ऊपर किसी इष्ट देव का नाम, लिख दिया जाता है। उसके

नीचे की पंक्ति में बाईं ओर एक अंगुल स्थान छोड़ कर प्रशस्ति लिखी जाती है।

प्रशस्ति में बड़ों को 'सिद्धि' बराबर और छोटों को 'स्वति' शब्द लिख कर उसके आगे 'श्री' शब्द का प्रयोग किया जाता है। विशेष आदर प्रदर्शन के लिये बड़ों के लिये 'श्री' के आगे ६, स्वामी के लिये ५, शत्रु के लिये ४, मित्र के लिये ३, सेवक के लिये २ और पुत्र, शिष्य तथा स्त्री के लिये १, लिखतेहैं। ईश्वर, राजा और संन्यासी के लिए श्री के आगे १०८, लिखा जाता है। इसे कंठ रखने के लिये नीचे का दोहा बड़ा काम देता है :—

दोहा—श्री लिखिये षट् गुरुन को, पांच स्वामि, रिपु चारि।
तीन मित्र, द्वै भृत्य को, एक शिष्य, सुत, नारि॥

इसके उपरान्त पदानुसार प्रशंसा सूचक विशेषण शब्दों का प्रयोग किया जाता है। बड़ों के लिये 'सर्वोपमा योग्य सर्वोपरि विराज मान 'पूज्य वर' या इसी अर्थ के और शब्द लिखे जाते हैं। बराबर वालों को सुहृदय, मित्र वर, परम हितैषी या इसी अर्थ का कोई शब्द, छोटों के लिये चिरंजीवि, स्नेह-भाजन, आदि लिखे जाते हैं।

तदनन्तर प्रेष्य का निवास स्थान लिख कर, प्रेषक अपना स्थान तथा नाम लिखता है। पुनः बड़ों को प्रणाम, दण्डवत् आदि, बराबर वालों को नमस्ते, नमस्कार, जय राम, जय हिन्द आदि, छोटों को आशीर्वाद (प्रसन्न रहो, दीर्घ जीवी हो) लिखा जाता है।

इसके पश्चात् कुशल मंगल, फिर अपना समाचार और अभिप्राय लिखा जाता है। पुनः इति, इति शुभम् आदि समाप्ति सूचक शब्द और मिति।

(६) कुछ नमूने

१—गुरु जी को

सिद्धि श्री ६ सकल शुभ गुण विशारद विद्यावृद्ध शिवपुर शुभ स्थान विराजमान पूज्यवर गुरु जी के कमलवत् चरणों में रामपुर से चरण-सेवक शिष्याधम शिव प्रसाद का सष्टांग प्रणाम पहुँचे। यहाँ आपकी असीम कृपा से सब कुशल है। आपका कुशलानन्द परमात्मा से सदा चाहता रहता हूँ।

आपका कृपा पत्र मिला। समाचार से अवगत हुआ। मैं दो दिन के पश्चात् पुस्तक लेकर स्वयं सेवा में उपस्थित होउंगा। देर के लिए क्षमा प्रार्थी। इति।

मिति पौष शुक्ल पक्ष, ११, सम्वत् २००२ विक्रमी।

२—मित्र को

स्वस्ति श्री ३ काशी शुभस्थाने विद्यमान सदा सहायक मित्रवर रमाकान्त को समूदपुर से लक्ष्मीकान्त का नमस्कार पहुँचे। मैं सकुशल हूँ आप को जगदीश्वर प्रसन्न और स्वस्थ रक्खे। मैं अगले रविवार को एक आवश्यक कार्य वश आप से मिलना चाहता हूँ। आशा है, आप मेरी प्रतीक्षा करेंगे। इति शुभम्।

मिति वैशाख कृष्ण, १२ सम्वत् २००३ विक्रमीय।

३—पुस्तक विक्रेता को

स्वस्ति श्री स्थान काशी पं० नन्दकिशोर जी भार्गव को गोपाल पुर से गोपीनाथ का यथा योग्य। मैंने आप को लिखा था कि

५ प्रति साहित्य ज्योति भाग १ की पुस्तकें भेज दीजिए परन्तु वे अब तक मुझे प्राप्त नहीं हुई।

अतः शीघ्र भेज दीजिये। इति। मिति आषाढ़ कृष्ण ११, सं० २००३ विक्रमीय।

सूचना—प्राचीन प्रणाली से पत्र लिखने का प्रचार अब बहुत कम हो गया।

४—नवीन प्रथा

प्राचीन रीति की भाँति नवीन प्रथा के पत्रों में भी (१) किसी देवता का नाम, (२) प्रशस्ति, (३) समाचार और (४) समाप्ति, ये बातें रहती हैं। परन्तु इस रीति में काम की बातें अधिक और प्रशस्ति कम रहती है। अंग्रेजी चाल के लोग पहला भाग प्रायः नहीं लिखते हैं। इस प्रथा के पत्रों में जिस कागज पर पत्र लिखा जाता है, उसमें एक ही ओर मार्जन (हाशिया) छोड़ा जाता है। कागज का लग-भग चौथाई भाग बाईं ओर सादा छोड़ देने की चाल है। शेष में सबसे ऊपर किसी देवता का नाम, उसके नीचे की पंक्ति में दाहिने सिरे पर लेखक अपना पता, तथा उसके नीचे ता०, मास और सन् लिखता है। उसके नीचे की पंक्ति में बाईं ओर से प्रशस्ति के शब्द लिख कर अल्प विराम (,) का चिह्न दे दिया जाता है। उसके आगे की पंक्ति में समीप ही, बड़ों को प्रणाम, बराबर वालों को नमस्कार तथा छोटों को आशीर्वाद लिखा जाता है।

इसके नीचे की पंक्ति में बाईं ओर लगभग दो अंगुल स्थान सादा छोड़ कर अपना आशय लिखने की रीति है। पूरा अभिप्राय लिख चुकने पर, पत्र के अन्त में दाहिनी ओर नीचे

की पंक्ति के आधे भाग में समाप्ति के शब्द और उसके नीचे अपना नाम लिखा जाता है।

आधुनिक प्रथा के पत्रों में प्रशस्ति और समाप्ति के शब्द नीचे लिखे जाते हैं :—

नाम	प्रशस्ति	समाप्ति
गुरु को	विद्या वृद्ध या पूज्य गुरु जी को	आपका चरण-सेवक,
पिता को	पूज्य पिता जी,	आपका आज्ञाकारी,
माता को	पूजनीया माता जी,	आपका प्रिय पुत्र,
चाचा को	महामान्यवर चाचा जी,	आपका आज्ञाकारी,
बड़े भाई को	महामान्यवर भ्राता जी,	आपका स्नेह भाजन,
प्रतिष्ठा में बड़े को	मान्यवर महोदय,	आपका कृपाकांक्षी,
मित्र को	प्रियवर सुहृद्वर,	आपका प्रिय मित्र,
छोटे भाई को	प्रिय (नाम,)	तुम्हारा प्रिय भ्राता,
पुत्र को	प्रिय वत्स,	तुम्हारा शुभ चिन्तक,
शिष्य को	आयुष्मान (नाम)	तुम्हारा शुभेच्छु,
छोटी बहिन को	प्यारी बहिन,	तुम्हारा हितेच्छु,
प्रतिष्ठा में छोटे को	प्रिय महाशय,	आपका शुभेच्छु,
दूकानदार को	महाशय, श्रीयुत,	भवदीय, (आपका),
अधिकारी को	श्रीमान्, महोदय,	प्रार्थी,
सम्पादक को	श्रीयुत सम्पादक जी,	भवदीय,

सूचना—(१) निजी पत्रों की भाँति काम काजी पत्रों में मंगल सूचक शब्द (जैसे श्री हरिः, श्री गणेशायनमः, जयहिन्द) और अभिवादन के शब्द (जैसे, प्रणाम, आशीर्वाद) नहीं लिखे जाते।

(२) प्रार्थना पत्र में स्थान और तारीख पत्र की समाप्ति के बाद नीचे लिखी जाती है।

(३) हर प्रकार के पत्र में प्रेष्य का पता ठीक-ठीक लिखना चाहिये। प्रेष्य यदि नगर में रहता हो तो (१) उसका नाम (२) मकान का नम्बर, (३) महल्ला, (४) नगर या शहर। यदि वह ग्राम में रहता हो तो (१) नाम, (२) स्थान, (३) डाक घर, (४) जिला लिखा जाये। प्रत्येक नाम के आगे अल्प विराम का चिह्न हो और जिला या शहर के नीचे बड़ी लकीर खींच दी जाय।

(४) आचरण पत्र (लिफ़ाफ़ा) में बाईं ओर नीचे के कोने में पत्र प्रेषक को अपना नाम और स्थान लिख देने से डाक वालों को सुविधा होती है। यदि प्रेष्य से भेंट न हो तो डाक मुंशी सीधे प्रेषक के पास लिफाफ़ा लौटा देते हैं।

[११] नवीन प्रथा के पत्रों के नमूने

(१) पिता को

श्री हरिः

हिन्दू हाई स्कूल,
बनारस
२०—७—४८

पूज्य पिता जी,

सादर प्रणाम।

मैं कल संध्या समय ६ बजे यहाँ सकुशल पहुँच आया।

ठा० शीतला प्रसाद सिंह जी के स्थान पर रात्रि व्यतीत किया। ठाकुर साहब ने मेरे रहने, सोने की सुविधा कर दी थी। आप के सद्व्यवहार की मैं कहाँ तक प्रशंसा करूँ।

प्रातः १० बजे पाठशाला खुलते ही मैं ने अपना प्रमाणपत्र श्रीमान् प्रधान महोदय को दिखलाया। आप ने मेरी योग्यता की परीक्षा ली। ईश्वर की कृपा और आप के आशीर्वाद से मैं परीक्षा में सफल रहा। प्रधानाध्यापक महोदय ने सातवीं श्रेणी में मेरा नाम लिख लेने का वचन दिया।

इस पाठशाला में मेरे परिचित कई विद्यार्थी विद्याध्यन कर रहे हैं। उन्हीं के साथ छात्रावास में निवास करने का मैंने निश्चय किया है। आशा है, आप की स्वीकृति मिल जायगी। पूजनीय माता जी को प्रणाम, घर के समस्त प्राणियों को यथायोग्य। इति।

आप का आज्ञाकारी,

राम मनोहर।

७ वीं श्रेणी

लिफाफे का पता—

सेवा में

श्रीमान् ठा० रामाश्रय सिंह जी,

ग्राम—रामपुर,।

डाक घर—रामपुर,

ज़िला—बनारस।

२—पुत्र को (प्रेषित पत्र के उत्तर में)

श्रीगणेशाय नमः

रामपुर
२५-७-४८

प्रिय राममनोहर जी,

प्रसन्न रहो।

तुम्हारा ता० २०-७-४८ का पत्र प्राप्त हुआ। समाचार जाना। मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि तुम्हारा नाम सातवीं श्रेणी में लिख लिया जायगा। स्वास्थ्य का ध्यान रखते हुए सपरिश्रम अध्ययन करना। सबके साथ प्रेम का व्यवहार रखना। तुमने छात्रावास में रहने का जो निश्चय किया है बहुत अच्छा है क्योंकि छात्रावास का वायुमंडल शिक्षा से भरा रहता है। नियमबद्ध सारा काम होता रहता है। मैं तुम्हारे इस निश्चय को स्वीकार करता हूँ। पत्र के साथ २५) का मनीआर्डर भेज रहा हूँ। किसी बात के लिए कष्ट न करना। यहाँ पर सब लोग आनन्द में हैं। इति।

तुम्हारा शुभेच्छु,
रामाश्रय सिंह।

पता—

चिरंजीवि राममनोहर सिंह,
७ वीं श्रेणी
हिन्दू हाई स्कूल,
बनारस।

सूचना—पता लिखना पत्र का एक अंग ही है। प्रत्येक पत्र के अन्त में एक लकीर खींच कर प्रेष्य का पता ऊपर के ढंग से सोपानवत् अंकित कर देना चाहिये।

३—प्रार्थना पत्र

(एक सप्ताह के अवकाश निमित्त)

सेवा में—

श्रीमान् प्रधानाध्यापक महोदय,

जूनियर हाई स्कूल शिवपुर,

बनारस।

मान्यवर,

सेवा में सादर निवेदन है कि कल पाठशाला से लौटने पर मुझे ज्वर आ गया। आज तक ज्वर का प्रकोप बना है। आशा है कि स्वस्थ होने में एक सप्ताह के लग-भग लग जायँगे।

अतः सविनय प्रार्थना है कि मेरी २०–९–४८ से ८–१२–४८ तक के अवकाश की प्रार्थना स्वीकार की जाये।

प्रार्थी

गोपालपुर, } गोपाल दास,
२–९–४८। } श्रेणी ६ (अ)

सेवा में—

श्रीमान् प्रधानाध्यापक महोदय,

जूनियर हाईस्कूल शिवपुर,

बनारस।

४—आज्ञा पत्र

(पुस्तक मँगाने के लिये)

श्रीयुत रायसाहव रामदयाल जी अगरवाला,
पुस्तक प्रकाशक तथा विक्रेता,
कटरा,
इलाहाबाद।

महाशय,

मैंने एक विज्ञापन में देखा हैं कि हिन्दू त्यौहारों पर, विद्यार्थियों के पढ़ने योग्य, 'हिन्दू पर्व प्रकाश' नाम की एक पुस्तक आप के यहाँ से प्रकाशित हुई है।

अतः उक्त पुस्तक की ३ प्रति डाक द्वारा भेज देने की शीघ्रता करियेगा।

भवदीय,
लीलाधर विद्यार्थी
कक्षा ७
जूनियर हाई स्कूल जाल्हूपुर,
डाक घर—चौबेपुर,
जिला—बनारस।

सूचना—लिफाफे पर वही लिखना चाहिये जो ऊपर पता लिखा गया है।

५—ग्राहक पत्र

(ग्राहक होने के हेतु)

श्रीयुत प्रबन्धक जी,
दैनिक 'आज',
कबीर चौरा,
बनारस ।

महाशय,

मैंने दैनिक 'आज' का ग्राहक होना निश्चय कर लिया है। अतः मेरा नाम ग्राहकों में लिख लीजिये। और मेरे नाम 'आज' वी० पी० द्वारा भेज दीजिये । मैं मूल्य देकर वी० पी० छुड़ा लूँगा।

भवदीय,
बालकृष्ण,
पुस्तकाध्यक्ष
ग्राम पुस्तकालय सुन्दरपुर,
बनारस ।

सूचना—लिफाफे पर वही पता लिखना होगा जो ऊपर लिखा गया है ।

६—सूचना पत्र

(बैठक में सम्मिलित होने के लिये)

अध्यापक सम्मेलन जिलाबोर्ड, बनारस ।

पत्र संख्या—२०

स्थान—मि० स्कूल,
अजमतगढ़
बनारस ।

ता० १०-१०-१९४८ ई०

प्रिय महाशय,

आगामी रविवार, ता० १७-१०-४८ को १२ बजे दिन, अजमतगढ़ मि० स्कूल पर सम्मेलन की कार्य-कारिणी-समिति की

बैठक होगी, जिसमें निम्नलिखित विषयों पर विचार किया जायगा :—

एतदर्थ आप की उपस्थिति प्रार्थनीय है।

विषय :—

(१) उपसमितियों से आये हुए पत्रों पर विचार।

(२) सम्मेलन के वार्षिकोत्सव की तिथि और स्थान पर।

(३) सम्मेलन की नियमावली धारा ३ पर।

निवेदक,
आदित्य प्रसाद सिंह,
प्रधान मंत्री।

सेवा में—

श्रीयुत ठा० बदरीनारायण सिंह जी,
सदस्य का० का० स० तथा
कृषि—अध्यापक
मिडिल स्कूल शिवपुर,
बनारस।

८—निमंत्रण पत्र [१]

(विवाहोत्सव के सम्बन्ध में)

श्री मंगल मूर्त्तये नमः

"आते हैं जिस भाव से, भक्तों में भगवान।
उसी भाव से करि कृपा, दर्शन दें श्रीमान्॥"

माननीय,

जगन्नियन्ता जगदीश्वर की असीम अनुकम्पा से मिति वैशाख शुक्ल ९, सम्वत् २००४ वि० को मेरे कनिष्ठ भ्राता चिरंजीवी

गुलाबचन्द्र का शुभ विवाह प्रयाग निवासी श्रीयुत बाबू फूलचन्द्र की स्वस्तिसती पुत्री से नियत हुआ है।

अतः सविनय निवेदन है कि आप अपने इष्ट मित्रों सहित उक्त तिथि पर पधारकर, बारात की शोभा बढ़ायेंगे। शुभ।

चौक, बनारस
मि० वै० कृ० १२

दर्शनाभिलाषी,
मोतीलाल

सूचना—(१) बारात वैशाख शु० ७ को 'बनारस छावनी स्टेशन' से ६ बजे की ट्रेन से प्रस्थान करेगी।

(२) बारात के ठहरने का प्रबन्ध प्रयाग स्टेशन के समीपस्थ मारवाड़ी धर्मशाला में हुआ है।

८—निमंत्रण पत्र (२)

(उत्सव में सम्मिलित होने के लिये)

श्री सरस्वती हायर सेकेण्डरी स्कूल,
टाँडा, बनारस।

मान्यवर महोदय,

श्री सरस्वती हायर सेकेण्डरी स्कूल का वार्षिकोत्सव प्रसिद्ध विद्वान श्री नारायण दास बाजोरिया के सभापतित्व में २८ दिसम्बर १९४८ को १२ बजे दिन से बड़े समारोह के साथ मनाया जायगा।

इस उपलक्ष में २४ तथा २५ दिसम्बर को अंतर्विद्यालय खेल-कूद, वाद-विवाद तथा सुभाषित प्रतियोगिता एवं कवि-सम्मेलन का भी आयोजन किया गया है।

आशा है, आप महानुभाव इस उत्सव में सम्मिलित होकर बालकों तथा कार्यकर्त्ताओं के उत्साह को बढ़ायेंगे।

निवेदक,

राम अधार सिंह वकील (सभापति)

रामकृष्ण श्रीवास्तव बी० काम (मंत्री)

जीवन नाथ ओझा, एम० ए०, बी० टी० (प्रिंसिपल)

कार्यक्रम

२४ १२/४८, शुक्रवार—खेलकूद प्रतियोगिता, ११ बजे दिन से।

२५ १२/४८, शनिवार—वाद-विवाद तथा अन्त्याक्षरी प्रतियोगिता १ बजे दिन से।

२६ १२/४८, रविवार—विश्रामावकाश।

२७ १२/४८, सोमवार—कवि सम्मेलन, ७ बजे सायं से।

२८ १२/४८, मंगलवार—उत्सव, वार्षिक विवरण, पारितोषिक वितरण १२ बजे दिन से।

(लिफाफे पर पता)

सेवा में—

श्रीयुत ठा० आदित्यप्रसाद सिंह जी,
ग्राम—समूदपुर
डाकघर—बलुआ,
जिला—बनारस।

९—हस्तांकन पत्र (हैंडनोट)

मैं कि गुलावदास पुत्र फूलचन्द्र निवासी फूलपुर परगना फुलवरिया जिला रामवाग का हूँ। मैंने अपने गृह सम्बन्धी व्यय के लिये महाजन मालीराम निवासी पद्मपट्टी जिला पुरनिया से स्थान पर उपस्थित होकर २५०) रु० का जिसका आधा १२५) होता है, हस्तांकन कर दिया और यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि प्रशंसित महाजन के माँगने पर मैं कुल रुपया १) प्रतिशत मासिक व्याज सहित दे दूँगा। इसलिये यह हस्तांकन पत्र (हैंडनोट) लिख दिया कि समय पर काम आवे। ता० २५–६–४३ ई०

ह० गुलाब दास | टिकट २५०) | का हस्तांकन पत्र लिखा सो सही।

१०—प्राप्ति स्वीकार पत्र [रसीद]

मैं कि गुलाब दास पुत्र फूलचन्द निवासी फूलपुर परगना फुलवरिया जिला रामबाग का हूँ। मैंने महाजन मालीराम से हस्तांकन पत्र का (जिसे मैंने ता० २५–६–४३ को लिखा था) २५०) दो सौ पचास रुपया पाया।

इसलिये यह प्राप्ति स्वीकार पत्र लिख दिया कि प्रमाण-स्वरूप रहे तथा समय पर काम आवे। ता० २५–६–४३ ई०

ह० गुलाब दास | टिकट २५०) | दो पचास रु० पाया।

साक्षी —(१) ह० हीरालाल निवासी खानपुर स्वयं।
(२) ह० पन्नालाल निवासी कनकपुरा स्वयं।

प्रश्न

(१) अपने गुरुजी को एक पत्र लिखो जिसमें अपने जीवन की सब से मनोरंजक घटना का वर्णन हो।

(२) अपने पिता जी के पत्र के उत्तर में एक पत्र इस विषय का लिखो कि परीक्षोत्तीर्ण होने पर तुम कौन सा व्यवसाय करना चाहते हो और क्यों ?

(३) अपने मित्र को एक पत्र लिखो जिसमें किसी की हुई यात्रा का वर्णन हो अथवा किसी देखे हुए मेले का बयान हो।

(४) तुम्हारी पाठशाला का 'वार्षिकोत्सव किस धूम-धाम से मनाया गया' इसका सविस्तार वर्णन एक पत्र द्वारा अपने मित्र पर प्रगट करो।

(५) अपनी माता जी को एक पत्र लिखो जिसमें 'कन्याओं के पढ़ाने की आवश्यकता' का वर्णन हो।

(६) अपनी पाठशाला के प्रधानाध्यापक के नाम एक प्रार्थना पत्र इस आशय का लिखो कि तुम्हें वे निःशुल्क अध्ययन की आज्ञा प्रदान करें।

(७) किसी पुस्तक विक्रेता के नाम एक 'आज्ञापत्र' लिखो जिसमें ५-५ प्रति 'साहित्य ज्योति' भाग १, २, ३ की माँग करो।

(८) 'सरस्वती' मासिक पत्रिका के ग्राहक होने के लिये प्रबन्धक-इंडियन-प्रेस-प्रयाग को एक पत्र लिखो ?

(९) अपने छोटे-भाई के शुभ विवाह में सम्मिलित होने के लिए तुम 'निमंत्रण पत्र' कैसे लिखोगे।

(१०) कतवारू राम ने पुरुषोत्तम दास महाजन के यहाँ से २५०) ऋण लिया। उसके लिये वह 'हस्तांकन पत्र' और 'प्राप्ति स्वीकार पत्र' कैसे लिखेगा।

(११) श्रीमान् डिप्टी इन्सपेक्टर महोदय शिक्षा विभाग की सेवा में एक प्रार्थना पत्र इस आशय का लिखो कि तुम्हारे गाँव में प्रौढ़ पाठशाला खुल जाये।

जूनियर हाईस्कूल के छात्रों और छात्राओं के लिए हमारी स्वीकृत पुस्तकें—

	रु० आ० पा०
१—भारती भाग १ कक्षा ६—सीताराम जायसवाल एम. ए., एल. टी.	०—१३—०
२—भारती भाग २ कक्षा ७ ,, ,,	०—१४—०
३—भारती भाग ३ कक्षा ८ ,, ,,	१—०—०
४—आदर्श अंकगणित भाग १ कक्षा ६ साधूशरण मल्ल एम. ए., एल. टी.	०—१०—०
५—आदर्श अंकगणित भाग २ कक्षा ७ ,, ,,	०—१२—०
६—नवीन आदर्श गणित भाग १ कक्षा ६ आर. सी. गुप्ता, गोपाल सिंह चौहान और बद्रीप्रसाद	०—७—०
७— ,, ,, भाग २ कक्षा ७ ,, ,,	०—८—०
८— ,, ,, भाग ३ कक्षा ८ ,, ,,	०—१२—०
९—सरल नागरिक शास्त्र भाग १—प्रो के. एल. वर्मा एम. ए.	०—६—०
१०—प्रारम्भिक कृषि-विज्ञान भाग १ ठा. लालबहादुर सिंह	०—११—०
११— ,, ,, भाग २ ,, ,,	०—१३—०
१२— ,, ,, भाग ३ ,, ,,	१—०—०
१३—संस्कृत मनोरमा भाग ३ कक्षा ८ गोपाल शास्त्री	०—९—०
१४—व्यापार पद्धति—(कामर्स)—श्री चन्द्रमाप्रसाद श्रीवास्तव	०—७—०
१५—सरल बहीखाता ,, ,,	०—८—६
१६—बुक-कीपिंग के मूल सिद्धान्त ,, ,,	०—८—६

मिलने का पता—

नन्दकिशोर ऐण्ड ब्रदर्स,

बनारस।